स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

# उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

## इलाहाबाद

| MASY-06 | सामजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य<br>प्रथम खण्ड : सामाजिक नियोजन एवं विकास |
|---|---|

शान्तिपुरम् ( सेक्टर-एफ ), फाफामऊ, इलाहाबाद-211013
www.uprtouallahabad.org.in

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY - 06
सामाजिक नियोजन एवं
विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य

खण्ड

# 1

## सामाजिक नियोजन एवं विकास

इकाई 1

## सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा

इकाई 2

## सामाजिक नियोजन की अवधारणा का उद्भव एवं विकास

इकाई 3

## सामाजिक नियोजन के उद्देश्य एवं भरण

इकाई 4

## नियोजन एवं विकास का सम्बन्ध

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## परामर्श समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो. केदार नाथ सिंह यादव,** कुलपति | अध्यक्ष |
| **डॉ. हरीश चन्द्र जायसवाल,** वरिष्ठ परामर्शदाता | कार्यक्रम संयोजक |
| **प्रो के.पी. सिंह,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. अर्जुन तिवारी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **प्रो. ए.एन. द्विवेदी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. रत्नाकर शुक्ल,** कुलसचिव | सचिव |

## विशेषज्ञ समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो० सी.एस. एस. ठाकुर**<br>आचार्य एवं अध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग<br>रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर | विषय विशेषज्ञ |
| **प्रो. जयकान्त तिवारी**<br>आचार्य समाजशास्त्र विभाग<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी | विषय विशेषज्ञ |
| **डॉ. मंजूलिका श्रीवास्तव**<br>रीडर, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली | दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञ |
| **प्रो. वी. के. पंत**<br>सेवा निवृत्त आचार्य एवं अध्यक्ष , समाज शास्त्र विभाग<br>(कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) लखनऊ | सम्पादक |

## MASY-06 : – *सामाजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य*

*लेखक मण्डल :*

| | | |
|---|---|---|
| **खण्ड एक :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड दो :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड तीन :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 4 इकाई |
| **खण्ड चार :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 2 इकाई |
| **खण्ड पाँच :** | **डॉ. अंशु केडिया,** लखनऊ | 2 इकाई |
| | **डॉ. जे.पी. मिश्र** , लखनऊ | 2 इकाई |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ.आर.के.पाण्डेय कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, 2017

pUndyk ;fuo l y ik-fy-] 42@7 tokgjyky ug : jkM] bykgkckn

# खण्ड-एक : खण्ड परिचय -सामाजिक नियोजन एवं विकास

इस खण्ड में सामाजिक नियोजन एवं विकास को स्पष्ट किया गया है। **पहली इकाई** का शीर्षक है ''सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा'' । इसमें सामाजिक नियोजन को परिभाषित कर उसके अर्थ को स्पष्ट किया गया है। **दूसरी इकाई** का शीर्षक है ''सामाजिक नियोजन की अवधारणा का उद्‌भव एवं विकास''। इसमें सामाजिक नियोजन की अवधारणा के उद्‌भव को स्पष्ट किया गया है। सामाजिक नियोजन एवं सामाजिक मूल्य की व्याख्या की गयी है। सामाजिक नियोजन के दूरगामी लक्ष्य पर प्रकाश डाला गया है। **तीसरी इकाई** का शीर्षक है ''सामाजिक नियोजन के उद्‌देश्य एवं चरण।'' इसमें सामाजिक नियोजन की आवश्यकता एवं उद्‌देश्य को स्पष्ट किया गया है। सामाजिक नियोजन की सीमाओं ओर सामाजिक नियोजन के चरण को व्याख्यायित किया गया है। **चौथी इकाई** का शीर्षक है ''नियोजन एवं विकास का संबंध'' । इस इकाई में विकास की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है। सामाजिक विकास की व्याख्या की गई है। सामाजिक विकास के अवयव पर प्रकाश डालते हुए सामाजिक नियोजन एवं विकास को स्पष्ट किया गया है।

# इकाई 1- सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा

## इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना
1.1 सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा
1.2 सामाजिक नियोजन के उद्देश्य
1.3 नियोजन का प्रादुर्भाव
1.4 नियोजन का अर्थ
1.5 नियोजन की परिभाषा
1.6 नियोजन की भूमिका एवं महत्व
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
1.8 सम्बन्धित प्रश्न

## 1.0 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक नियोजन के अर्थ एवं परिभाषा को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। इसके अन्तर्गत विकास के पूर्ववर्ती अवधारणाओं को परिमार्जित करते हुए समसामाजिक सन्दर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई में सामाजिक नियोजन की व्याख्या के अन्तर्गत समाज जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। समसामायिक सन्दर्भों में सामाजिक नियोजन की व्यापकता बढ़ती जा रही है तथा विकास के परिप्रेक्ष्य में उसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। विश्व के सभी देशों में भिन्न राजनैतिक मान्यताओं एवं सामाजिक विचारधाराओं के उपरान्त भी सामाजिक नियोजन का महत्व अधिक है। किसी देश के सन्तुलित आर्थिक विकास के लिए सामाजिक नियोजन का अधिक महत्व है। विकास की क्षेत्रीय असमानताओं और विषमताओं को दूर करके सन्तुलित आर्थिक एवं सामाजिक विकास इसके द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। सामाजिक नियोजन के माध्यम से ही समाज कल्याण की अभिवृद्धि होती है और समाज को शोषण रहित बनाने में सफलता मिलती है।

## 1.1 सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक नियोजन सामाजिक उद्देश्यों के हितार्थ उपलब्ध साधनों का संगठन तथा लाभजनक रूप में उपयोग करने का एकमात्र प्रविधि है। इसके अन्तर्गत इस तथ्य पर विशेष बल दिया जाता है कि समाज के उन समूह के लोगों को जिन्हें निर्बल वर्ग और सुविधाओं से वंचित समूह के रूप में जाना जाता है, को अधिक से अधिक सुविधायें प्राप्त हों। सामाजिक नियोजन इस बात का प्रयास करता है कि उसके द्वारा प्रतिपादित कार्यक्रमों में लोगों के मौलिक आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति हो। इसके अन्तर्गत निर्धनता के ऊपर आक्रमण करते हुए लोगों के जीवन स्तर के गुणों को सुधारने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक नियोजन स्थानीय ऊर्जा, स्रोतों एवं संसाधनों का उपयोग करते हुए एवं निर्भर समुदायों का सृजन करता है, जिसके माध्यम से नियोजित विकास की रूपरेखा को निर्मित किया जा सके और क्षेत्रीय एवं स्थानीय स्तर पर विकास

की प्रक्रिया को केन्द्रीय स्थान प्रदान किया जाये। सामाजिक नियोजन सामाजिक विकास के मौलिक अवयवों को विशेष महत्व देते हुए इस बात पर विशेष बल देता है कि ऐसे कार्यक्रमों का संचालन किया जाये, जिससे लोगों के मौलिक आवश्यकताओं की विकास स्तर के अन्तर्गत निर्धारित समय में पूरा किया जा सके। लोगों के सामाजिक एवं राजनीतिक मामलों का निस्तारण विभिन्न स्तरों पर किया जा सके और लोगों में इस बात के अनुभूति का विकास किया जाये कि उनका क्या उत्तरदायित्व है और किस प्रकार से जनसामान्य अपने सहभागिता को प्रस्तुत करते हुए अपने जागरुकता एवं सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित कर सके।

सामाजिक नियोजन का यह अथक प्रयास होता है कि उसके माध्यम से विकास को सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के सन्दर्भ में आन्दोलन के रूप में माना जाये, जो सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था को गतिशील बनाने का प्रयास करे। अत: सामाजिक नियोजन जनसामान्य के कल्याण के निमित उपलब्ध साधनों का प्रयोग करते हुए संगठन एवं विकास की एक समन्वित प्रणाली के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। इसके अन्तर्गत मानव जीवन के अन्तिम लक्ष्य 'कल्याण' को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। इसमें कल्याण किसी वर्ग विशेष को न प्रदान करके समाज के प्रत्येक व्यक्ति को देने की व्यवस्था की जाती है। इसके अन्तर्गत जनसमुदाय के आर्थिक कल्याण के महत्व प्रदान करते हुए सामाजिक कल्याण की रूपरेखा को बनाये रखने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता सामाजिक कल्याण के अभिवृद्धि में सहयोग प्रदान करता है। अत: आर्थिक नियोजन एवं सामाजिक नियोजन दोनों में सह सम्बन्ध का होना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में नियोजन के ढाँचे में आर्थिक तथा सामाजिक कल्याण को समन्वित ढंग से प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। तभी किसी भी देश अथवा अर्थव्यवस्था का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सकता है।

## सामाजिक नियोजन का अर्थ

सामाजिक नियोजन यह एक ऐसी विवेकपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत सामाजिक एवं आर्थिक विकास से सम्बन्धित माँगों का एकीकृत प्रक्रिया के रूप में संश्लेषण होता है। इसके अन्तर्गत एक ऐसे कार्यविधिकी का निर्माण किया जाता है, जो उन दशाओं का निर्धारण करता है। जिसके माध्यम से समाज का विकास सम्भव होता है। इसके अन्तर्गत त्वरित संरचनात्मक परिवर्तनों को लागू करते हुए कुछ ऐसे सामाजिक सुधारों को लागू किया जाता है। जिसके द्वारा विकास के माध्यम से प्राप्त उपलब्धियों को जनसामान्य में वितरित किया जा सके। सामाजिक नियोजन संस्थागत एवं प्रशासनिक सुव्यवस्थाओं को करते, विकास से सम्बन्धित ऐसी योजनाओं का निरूपण करता है, जो प्रभावोत्पादक ढंग से समुदाय के लोगों को लाभान्वित कर सके। इसके अन्तर्गत, कमजोर वर्ग एवं दलित समुदाय के लोगों को गतिशील बनाने का प्रयास किया जाता है, जिससे वे विभिन्न परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों से उपलब्ध लाभों को प्राप्त कर सकें तथा नगरीय एवं ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकें। इस प्रकार सामाजिक नियोजन राष्ट्रीय एवं उपराष्ट्रीय स्तर पर उत्पन्न नियोजन से सम्बन्धित दूरियों को कम कर सके तथा सामान्यजन एवं विपन्नजनों को अधिक से अधिक लाभ पहुँचा सकें।

सामाजिक नियोजन के माध्यम से इस प्रयास के विशेष महत्व प्रदान किया जाता है कि इसके अन्तर्गत एक ऐसे सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था का सृजन हो, जो सामाजिक, आर्थिक विकास को महत्व प्रदान करते हुए समाज के निर्बल एवं सुविधाविहीन लोगों को अधिक से अधिक लाभ प्रदान कर सकें। इस प्रकार सामाजिक नियोजन सामाजिक उद्देश्यों को सम्बोधित करते हुए अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने का ऐसा उपागम है, जिसके द्वारा समाज के निर्बल प्रभाग के लोगों को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाने का प्रयास किया जाता है।

## 1.2 सामाजिक नियोजन के उद्देश्य

सामाजिक नियोजन के उद्देश्य स्वयं में महत्वपूर्ण हैं। इन उद्देश्यों के अन्तर्गत सबसे अधिक ध्यान इस बात पर दिया गया है कि सामान्यजन के जीवन स्तर को कैसे ऊँचा उठाया जाये तथा समृद्धिशाली एवं विविधतापूर्ण जीवन के अवसर से कैसे सार्थक बनाया जाये।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया गया है कि समाजवादी समाज की स्थापना करते हुए सामाजिक क्षेत्र में विकास करना, सामान्यजन के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना तथा कल्याणकारी राज्य की स्थापना करते हुए लोगों को नवीन सुअवसर को प्रदान करना तथा व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में सैद्धान्तिक व्याख्या करना है।

सामाजिक नियोजन सामान्यजन को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुअवसर प्रदान करते हुए सामाजिक असमानता को समाप्त करने का सार्थक प्रयास करता है। इसके अन्तर्गत इस बात को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है कि सामाजिक, आर्थिक परिवर्तनों को लाने के साथ ही साथ लोकतांत्रिक सिद्धान्तों को लागू किया जाये।

सामाजिक नियोजन अपने माध्यम से सामान्य जनों को विविध प्रकार की सामाजिक सुविधाएँ जैसे—खाद्य पदार्थ, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य एवं शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं को प्रदान करती है। विविध प्रकार की सुविधाओं के अतिरिक्त इसके द्वारा सामाजिक सुरक्षा भी प्रदान की जाती है।

## 1.3 नियोजन का प्रादुर्भाव

भारत में कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था के परिणामस्वरूप विकास की गति तीव्र नहीं थी। ब्रिटिश शासन व्यवस्था के अन्तर्गत यहाँ की अर्थव्यवस्था को विवेकपूर्ण ढंग से अल्पविकसित बनाने का प्रयास किया गया। देश के औपनिवेशिक शोषण एवं अल्पविकास के परिणामस्वरूप यहाँ पर विविध प्रकार की आर्थिक-सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हुयीं जिसमें बेरोजगारी एवं निर्धनता सबसे अधिक महत्वपूर्ण थी। देश के गतिहीन व्यवस्था के समक्ष विविध प्रकार की समस्यायें थीं जिनका किसी न किसी रूप में निवारण अपेक्षित था। देश के विविध प्रकार की समस्याओं के निवारण में यह अनुभव किया गया कि सुनियोजित ढंग से समस्याओं के हल के लिये प्रयास किया जाये। सामाजिक नियोजन का प्रादुर्भाव भी इसी परिप्रेक्ष्य में हुआ।

वर्तमान युग में सामाजिक नियोजन मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। कोई भी ऐसा कार्य नहीं जिसमें सफलता प्राप्त करने के लिये निश्चित मात्रा में सामाजिक, नियोजन की आवश्यकता न पड़ती हो। मानव सभ्यता के विकास विज्ञान की प्रगति, जनसंख्या में वृद्धि तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं अन्तःनिर्भरता में वृद्धि के कारण वर्तमान समय में मानव जीवन बहुत

ही जटिल हो गया। सामाजिक जीवन के साथ ही साथ आर्थिक जीवन जटिलता धीरे-धीरे इतनी बढ़ती जा रही है कि आजकल नियोजन के अभाव में सफल संचालन सम्भव नहीं रह गया है। अनियोजित क्रियाओं से विकास से सम्बन्धित उद्देश्य की पूर्ति सम्भव नहीं है। आर्थिक नियोजन के साथ ही सामाजिक नियोजन आधुनिक युग की ऐसी कल्याणकारी औषधि है जिससे कल्याणकारी राज्य के आदर्शों को सुविधा से प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में सामाजिक नियोजन की धारणा से विश्व समुदाय प्रभावित हुआ है और समसामयिक स्थितियों में यह एक ऐसा आधार बना जिससे प्रत्येक देश अपने वांछित उद्देश्यों को बहुत सहजता से प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार लगभग सभी देश आर्थिक विपन्नता को दूर करने के लिये तथा आर्थिक सम्पन्नता को प्राप्त करने के लिये एवं विकास के क्रमबद्ध प्राथमिकताओं के सम्बन्ध में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की दृष्टि से सामाजिक नियोजन को महत्वपूर्ण प्रक्रिया मानते हैं।

इस प्रकार सामाजिक नियोजन आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करते हुये नियोजनबद्ध तरीकों से उसे प्राप्त करने का प्रयास करता है।

किसी भी देश का आर्थिक विकास तभी सम्भव है जब समाज में ऐसे कार्यक्रम बनाये जायें जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध समाज के मूल्यों, आदर्शों, परम्पराओं आदि से जुड़ा है, यदि आर्थिक नियोजन सामाजिक नियोजन को महत्व प्रदान नहीं करता तो ऐसी स्थिति में विकास की अन्तर्निहित धारणाओं को मूर्त रूप प्रदान नहीं किया जा सकता।

समसामयिक परिस्थितियों में सामाजिक जीवन विश्व के समस्त देशों में सदैव से चर्चा का विषय रहा है। यह आधुनिक युग की एक ऐसी मांग है जिसके द्वारा लोक कल्याणकारी राज्य के आदर्शों को सफलता से प्राप्त किया जा सकता है। साधारणतया यह कहा जाता है कि नियोजन का विचार मानव विकास की ही तरह पुराना है। यह एक तकनीक, एक साध्य की प्राप्ति का साधन तथा वह साध्य है जो केन्द्रीय योजना प्राधिकरण द्वारा निर्धारित किन्हीं पूर्व निश्चित तथा स्पष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। यह साध्य सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा नागरिक उद्देश्यों को प्राप्त करना हो सकता है। नियोजन से तात्पर्य साधनों के प्रयोग एवं आर्थिक शक्तियों के युक्तिपूर्ण नियन्त्रण द्वारा एक निश्चित समय में पूर्व निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है। नियोजन के अन्तर्गत इस बात का प्रयास किया जाता है कि सामाजिक एवं आर्थिक कल्याण को अधिकतम रूप से प्रदान किया जाये। यह कटु सत्य है कि आर्थिक कल्याण, सामाजिक कल्याण का अभिन्न रूप है। नियोजनकर्ता आर्थिक एवं सामाजिक कल्याण को प्राप्त करने के लिये समन्वित मार्ग को अपनाने का प्रयास करता है जिससे अर्थव्यवस्था का तीव्र त्वरित एवं सन्तुलित विकास सम्भव हो सके। नियोजन के माध्यम से इस बात का भी प्रयास किया जाता है कि अधिकतम सामाजिक लाभ को प्राप्त करने के लिये उत्पादन को अधिकतम करने का पूर्ण प्रयास किया जाये। इसके अन्तर्गत साधनों का प्रयोग वैयक्तिक लाभ के लिये न करके अधिकतम सामाजिक लाभ को प्राप्त करने के लिये किया जाता है। नियोजन के अन्तर्गत इस बात का भी प्रयास किया जाता है कि इससे सिर्फ वर्ग विशेष को लाभ प्राप्त न हो वरन् सबो समान अवसर प्रदान किया जाये जिससे सभी को रोजगार का समान अवसर प्राप्त हो तथा जीवन को सुचारु रूप से संचालित करने की व्यवस्था हो सके।

सामाजिक नियोजन एक ऐसा विषय है जिसके उद्भव एवं विकास में नियोजन से सम्बन्धित विविध प्रकार की समस्याओं का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से योगदान रहा है। भारत जैसे विकासोन्मुख देश में सामाजिक आर्थिक लक्ष्य की प्राप्ति नियोजित अर्थव्यवस्था के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। यहाँ पर मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाते हुये समतावादी लोकतान्त्रिक समाज की स्थापना का प्रयास किया जा रहा है जो स्वयं में अद्वितीय है। भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से सामाजिक आर्थिक विकास का प्रमुख लक्ष्य देश के सामान्य नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार, निर्धनता का निवारण, बहुमुखी लक्ष्यों से युक्त समाज का निर्माण तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का अधिकाधिक प्रसार करते हुये आत्मनिर्भरता को प्राप्त करना है।

## 1.4 नियोजन का अर्थ

नियोजन स्वयं में एक विवेकपूर्ण प्रक्रिया है जिसका अस्तित्व साधारणतया समस्त मानव व्यवहार में पायी जाती है। इसके द्वारा प्रशासकीय प्रयासों के उद्देश्यों के निर्धारण एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये विकास की जिन सचेत प्रक्रियाओं को अपनाने का प्रयास किया जाता है उसे ही नियोजन की संज्ञा प्रदान की जा सकती है। नियोजन की प्रक्रियाओं में साधारणतया वस्तुनिष्ठ ढंग से उद्देश्यों को निर्धारित किया जाता है तथा उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु उपगम की तलाश की जाती है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि नियोजन एक विवेकपूर्ण, चेतन तथा संज्ञानात्मक स्तर पर किया गया प्रयास है।

विकास के सन्दर्भ में विरोधाभासी प्रत्यक्षीकरण के उपरान्त एवं नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न उपागमों के परिणामस्वरूप अनेक सामान्य विचारों वाले अवधारणाओं का उद्भव हुआ है विचारों एवं दृष्टिकोण के विभिन्न उपागमों के उपरान्त विभिन्न प्रकार की नीतियां एवं कार्यक्रम मनुष्य के मौलिक आवश्यकताओं को सन्तुष्टि प्रदान करने के लिये निर्देशित होते हैं। इसके अन्तर्गत इस बात का प्रयास किया जाता है कि समाज के निर्बल प्रभाग के लोगों की दशाओं को सुधारने का प्रयास किया जाये। विकासोन्मुख देशों में यह प्रयास किया जाता है कि लोगों के जीवन के गुणात्मक पक्ष को सुधारने का प्रयास किया जाये तथा इस तथ्य पर विशेष बल प्रदान किया जाये कि निर्धनों की दशाओं में चतुर्दिक सुधार हो। इस सन्दर्भ में इस तथ्य को अधिक महत्व प्रदान किया गया कि आर्थिक वृद्धि को अधिकतम बनाने के लिये राज्य की नीति उपकरण का प्रयोग किया जाये तथा एकीकृत ग्रामीण विकास में लोगों को सन्निहित करते हुये स्थानीय स्रोतों एवं सुविधाओं का अधिक से अधिक उपयोग किया जाये। यह तभी सम्भव है जब लोगों की सक्रिय सहभागिता हो तथा नियोजित विकास के प्रक्रिया को क्षेत्रीय तथा स्थानीय स्तर पर सुनियोजित ढंग से कार्यान्वित किया जाये। इन प्रक्रियाओं का उचित संचालन तभी सम्भव है जब प्रत्येक प्रकार के विकास के कार्यों को नियोजित ढंग से निर्मित करते हुये उसे परिणाम की ओर अग्रसारित किया जाये।

इस प्रकार नियोजन के अन्तर्गत किसी भी देश में उपब्ध साधनों का आदेश प्रयोग करने की व्यवस्था की जाती है। इसके द्वारा शक्ति के केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति पर नियन्त्रण रखने का प्रयास किया जाता है। सम्बन्धित देश में सम्पत्ति और आय के समान वितरण की व्यवस्था की जाती है। देश के सन्तुलित आर्थिक विकास में सामाजिक नियोजन अपने रचनात्मक योगदान

को प्रदान करने का प्रयास करता है। इस प्रकार की प्रवृत्ति के कारण सामाजिक नियोजन का प्रयास सदैव समाज को शोषण रहित बनाने का प्रयास होता है। देश की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा के लिये सामाजिक नियोजन की प्रासंगिकता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। यह कहना सर्वथा उचित है कि सामाजिक नियोजन के द्वारा अवांछनीय प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त करने का सार्थक प्रयास किया जाता है।

नियोजन से तात्पर्य कुछ व्यक्तियों द्वारा जिनके अधिकार में विशेष प्रसाधन हों, निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिये आर्थिक क्रिया का संचालन करना है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की केन्द्रीय नियन्त्रण करने वाली प्रत्येक योजना किसी भी उद्देश्य और किसी भी साधन से प्रारम्भ की गयी हो, नियोजनक कहलाती है। इस प्रकार नियोजन एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत सामाजिक लाभ हेतु साधनों के विवेकपूर्ण चयन पर विशेष महत्व प्रदान किया जाता है।

## 1.5 नियोजन की परिभाषा

सामाजिक नियोजन की परिभाषा देते हुये के० डी० गंगराडे एवं एम० पी० शास्त्री ने कहा है कि उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में ऐसा कोई भी नियोजन सामाजिक नियोजन कहला सकता है जिसका उद्देश्य सामाजिक न्याय में अभिवृद्धि करना है।

सामाजिक नियोजन को सामान्य अर्थों में सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिये किया जाने वाला नियोजन कहते हैं। सामाजिक लक्ष्यों के अन्तर्गत असहाय पिछड़े तथा अशक्त लोगों के कल्याण सामाजिक रक्षा तथा विकास, सामाजिक समस्याओं से मुक्ति इत्यादि निर्धारित होते हैं। यह कटु सत्य है कि विकास की प्रक्रिया एकपक्षीय नहीं हो सकती। आर्थिक विकास का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव सामाजिक जीवन पर पड़ता है। सामाजिक विकास स्वत: आर्थिक प्रक्रियाओं की गति को तीव्र करता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि नियोजन की प्रक्रिया सर्वांगीण प्रभाव छोड़ने का सार्थक प्रास करती है।

सामाजिक नियोजन की उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि इसका एक पूर्व निर्धारित उद्देश्य होता है जिसके लिये इसका क्रियान्वयन होता है। विविध देशों की अर्थव्यवस्था में सामाजिक नियोजन के अलग-अलग उद्देश्य हो सकते हैं, परन्तु सभी का मूलभूत उद्देश्य जनता के लिये अधिकतम सामाजिक कल्याण की उपलब्धि करना है। सामाजिक नियोजन के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक कल्याण को अधिकतम रूप से पाने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक कल्याण के अन्तर्गत ही आर्थिक कल्याण का अस्तित्व होता है। अत: नियोजनकर्ता आर्थिक व सामाजिक कल्याण को प्राप्त करने के लिये समन्वित मार्ग को अपनाने का प्रयास करते हैं। इस प्रक्रिया से अर्थव्यवस्था का तीव्र, त्वरित एवं सन्तुलित विकास होने लगता है।

## 1.6 नियोजन की भूमिका एवं महत्व

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि समाज के अन्तर्गत प्रतिपादित किसी प्रकार के कार्य प्रवृत्ति वैयक्तिक लाभ प्रदान करने वाली न हो।

अधिकतम प्रयास यह होना चाहिये कि सामाजिक लाभ को प्राप्त करके उसे जन सामान्य में अधिकतम अंश में प्रदान करना चाहिये।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत सभी को लाभान्वित बनाने की व्यवस्था है। इसके अन्तर्गत वर्ग विशेष को महत्व प्रदान नहीं किया जाता वरन् सभी वर्गों के लोगों को भी प्रश्रय प्रदान किया जाता है। द्विभेद की प्रक्रिया न लागू होने के कारण सभी को आगे बढ़ने का सुअवसर प्राप्त होता है।

भारत में सभी प्रकार के नियोजन के मूल में सामाजिक नियोजन का अस्तित्व छिपा रहता है। सामाजिक नियोजन के क्षेत्र के विस्तार के कारण ही आर्थिक आकलन की प्रकृति भ्रष्ट हो गयी है। सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया पर उन सभी वर्गों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है जो राजनीति को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ भारत की राजनीति में पूँजीपति वर्ग के अलावा जमींदार और सम्पन्न किसानों का ही प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि सरकार ने अपने नीतियों के निर्माण में सामाजिक पक्ष के सभी अवयवों को विशेष प्रमुखता प्रदान की।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत इस तथ्य पर विशेष बल प्रदान किया गया कि समाज के सभी वर्गों विशेषकर विपन्न एवं शोषित वर्ग के लोगों की क्षमताओं में वृद्धि की जाये। इसके अन्तर्गत कमजोर वर्ग को शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने पर विशेष महत्व प्रदान किया गया तथा इस बात की भी व्यवस्था की गयी कि लोगों को स्थानीय संस्कृति और वातावरण के अनुकूल शिक्षा प्रदान की जाये।

इस प्रकार सामाजिक नियोजन की अवधारणात्मक पटभूमि काफी विस्तृत है। इसके अन्तर्गत नीति निर्माण में इस तथ्य पर विशेष बल प्रदान किया जाता है कि क्षेत्र विशेष का चतुर्दिक विकास हो। विकास की प्रक्रिया में अन्य वर्गों के साथ उन लोगों का विकास हो जो आर्थिक एवं सामाजिक रूप से विपन्न हैं। सामाजिक नियोजन अन्य तथ्यों के साथ चतुर्दिक विकास को विशेष महत्व प्रदान करता है। नीतियों के कार्यान्वयन के स्तर पर इस बात को महत्व प्रदान किया जाता है कि देश के रचनात्मक स्तर पर उनका प्रभाव हो तथा सफलता का लाभ किसी वर्ग विशेष को न प्राप्त हो। सामाजिक नियोजन में निर्धनों के हितों के लिये तथा समाज कल्याण से अधिकाधिक लाभ पहुंचाने के लिये विविध कार्यक्रमों को लागू करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक नियोजन समकालीन स्थितियों में एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिसका अधिकाधिक उपयोग विकासोन्मुख देश करते हैं।

## 1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Myrdal Gunnar as cited in Thorsson Inga 1971. The Social Aspects of Development Assignment Children No. 13 (Jan-March, 1971) p. 29.
2. Lewis A.W. 1966 Development planning. The Essential of Economic Policy, New York, Harper and Row Publishers Inc.
3. Sharma P.N. & Shastri C. 1984 Social Planning Concepts and Techniques, Print House (India) Lucknow.
4. Soon, Young Yoon - A score for Development, New Directions in Monitoring United Nations Asian and Pacific Development Institute and UNICEF

5. Dhar P.K. 2000. Indian Economy Its Growing Dimensions, Kalyani Publishers, New Delhi.
6. मिश्र एस० के० पुरी वी० के० 1990 भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई
7. अवस्थी डी० एस० 1983 आर्थिक विकास, साहित्य रत्नालय, कानपुर

## 1.8 सम्बन्धित प्रश्न

**दीर्घ उत्तरीय प्रश्न —**

1. सामाजिक नियोजन से क्या अभिप्राय है? भारतीय समाज में इसकी प्रासंगिता स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक नियोजन की परिभाषा देते हुये भारतीय समाज में इसकी रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक नियोजन के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
4. किस प्रकार सामाजिक नियोजन सामाजिक कल्याण को प्रमुखता प्रदान करता है?

**लघुउत्तरीय प्रश्न -**

1. नियोजन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
2. आर्थिक नियोजन एवं सामाजिक नियोजन में सह-सम्बन्ध का प्रारूप किस प्रकार का है?
3. सामाजिक नियोजन सामाजिक न्याय की दिशा में क्या कार्य प्रतिपादित करता है?
4. सामाजिक नियोजन की वैज्ञानिक विधि क्या है?

## 1.9 प्रश्नोत्तर

1. क्या सामाजिक नियोजन का केन्द्रीय विषयवस्तु सभी के समाज कल्याण से सम्बन्धित है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता (घ) कुछ नहीं

2. सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति में कौन सहायक है?
   (क) समाज की संरचना की प्रकृति
   (ख) जनसंख्या विस्फोट को प्रतिबन्धित करके
   (ग) पिछड़े एवं दलित लोगों का उत्थान करके
   (घ) अधिकाधिक ऋण प्राप्त करके।

**उत्तर—**

1. क
2. क

# इकाई 2- सामाजिक नियोजन की अवधारणा का उद्भव एवं विकास

## इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक नियोजन की अवधारणा का उद्भव
2.3 सामाजिक नियोजन एवं सामाजिक मूल्य
2.4 सामाजिक नियोजन का दूरगामी लक्ष्य
2.5 सन्दर्भ ग्रन्थ
2.6 सम्बन्धित प्रश्न/उत्तर

## 2.0 उद्देश्य

सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों की विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि समाज के अन्तर्गत जब तक आर्थिक सम्पन्नता के होते हुए भी सामाजिक समरूपता का प्रसार नहीं होगा तथा जनसामान्य के सामाजिक हितों की रक्षा नहीं होगी तब तक सामाजिक नियोजन सही अर्थों में चरितार्थ नहीं होगा। सामाजिक नियोजन सामान्यजन के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए अधिक समृद्धशाली एवं विविधतापूर्ण जीवन को अवसर प्रदान करती है साथ ही साथ इस बात का भी प्रयास करती है कि जीवन में असमानताएं न्यून हो सकें।

इसके अन्तर्गत इस बात का भी विशेष प्रयास किया जाा है कि देश विकास की अपनी शैली को अपनाते हुए उधार की मांगी हुयी वैचारिकी एवं दृष्टिकोणों पर आधारित न हों। समाज के अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्तर पर न्याय तथा प्रचलित मूल्यों एवं आदर्शों को अपनाते हुए प्रस्थिति की समानता को विशेष महत्व प्रदान करें। इस प्रकार सामाजिक नियोजन रचनात्मक भूमिका को विशेष महत्व प्रदान कर सकता है।

सामाजिक नियोजन का सदैव यह सार्थक प्रयास रहा है कि क्षेत्र विशेष में होने वाले विकास का मूल्यांकन सामाजिक हितों के परिप्रेक्ष्य में किया जाए इसके अन्तर्गत वैयक्तिक महत्व को विशेष स्थान न प्रदान किया जाए अत: सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्यों में सामुदायिक सेवा, सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक कल्याण में सम्बन्धित विविध कार्यक्रमों को महत्व देने का प्रयास करता है।

## 2.1 प्रस्तावना

सामाजिक नियोजन के अर्थ से स्पष्ट हो चुका है कि इसका समसामयिक सन्दर्भों में बहुत महत्व सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत नीतियों, कार्यक्रमों तथा सेवाओं को महत्व प्रदान किया जाता है जिसका मूल उद्देश्य कल्याण के सुअवसरों को प्रदान करना है। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत उन वैधानिक प्रावधानों को प्रश्रय दिया जाता है जिसकी प्रासंगिकता समाज

कल्याण के लिए है। वैधानिक प्रावधानों का महत्व वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नहीं होता। इसका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सम्बन्ध उन सामाजिक समस्याओं पर केन्द्रित होता है जो समग्र रूप से समाज के लोगों को प्रभावित करने का प्रयास करता है। सामाजिक नियोजन का प्रादुर्भाव तो उसी समय से प्रारम्भ हुआ जब समाज की समस्याओं के समाधान में उसके सामाजिक पक्ष को विशेष महत्व प्रदान किया गया। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत सामाजिक संस्थाओं तथा मानव व्यवहार से सम्बन्धित क्षेत्रों को विशेष रूप से विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत विकास की प्रक्रिया को संरचना तथा मानवीय व्यवहार के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया जाता है।

## 2.2 सामाजिक नियोजन की अवधारणा का उद्‌भव

सामाजिक नियोजन के मूल्य में प्रजातांत्रिक मूल्यों के प्रभाव को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसके द्वारा आर्थिक विकास के साथ ही साथ स्तंत्रता, स्वेच्छा तथा जनकल्याण जैसे मानवीय मूल्यों को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। हमारे देश भारत में सामाजिक नियोजन की प्रकृति बहुत विस्तृत नहीं है। इसका अस्तित्व पूंजीवादी एवं समाजवादी नियोजन के बीच का होता है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में इस तथ्य पर विशेष बल दिया गया है कि सामाजिक नियोजन का लक्ष्य सामाजिक हितों के साथ ही साथ वैयक्तिक हितों को भी महत्व प्रदान करें।

सामाजिक नियोजन की रूपरेखा के निर्माण में लक्ष्यों, उद्‌देश्यों एवं कार्यक्रमों को सामान्य रूप से विचार करने का प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत भूत, वर्तमान तथा भविष्य की स्थितियों को तुलनात्मक रूप से विवेचित करते हुए एक विकास माडल का प्रारूप तैयार किया जाता है जो प्रत्येक स्थिति में परिवर्तनशील स्थितियों के साथ सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास करता है।

किसी भी देश में सभी वर्गों की सफलता हेतु एक निश्चित आचार संहिता का अनुसरण है। इस आचार संहिता के अन्तर्गत सामाजिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता को विकसित करने का प्रयास किया जाता है।कल्याणकारी शासन व्यवस्थाओं में राज्य का यह नैतिक दायित्व हो जाता है कि वह समाज के प्रत्येक सदस्य के सर्वांगीण विकास के लिए सार्थक प्रयास करें तथा ऐसी नीतियों का निर्धारण करें जिससे समाज का कोई वर्ग विशेषकर विपन्न वर्ग प्रदत्त लाभ से वंचित न रहे। सामाजिक नियोजन के माध्यम से समाज के सदस्यों को सामुदायिक सेवा, सामाजिक सुरक्षा तथा सामाजिक कल्याण के अन्तर्गत विविध प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से अधिकाधिक रूप में लाभान्वित करने का प्रयास किया जाता है।

सामाजिक सेवाओं के अन्तर्गत पेयजल, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास स्वच्छता तथा पर्यावरण सुरक्षा से सम्बन्धित कार्यक्रम सम्मिलित होते हैं। इस प्रकार की सेवाएं सभी नागरिकों को प्रदान की जाती है तथा उन्हें लाभान्वित होने के लिए विविध प्रकार की अपेक्षित सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। सामाजिक सुरक्षा भी एक एक ऐसी आधारशिला है जिसमें वृद्धों, बेरोजगारों तथा विपन्नों को राहत प्रदान करने की विविध प्रकार की व्यवस्था होती है।

सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत समाज द्वारा जीवन को कठिनाइयों जैसे रुग्णता, बेरोजगारी, वृद्धावस्था पेंशन, चिकित्सा सहायता आदि प्रदान किया जाता है। समाज कल्याण के अन्तर्गत वे सभी कार्यक्रम तथा नीतियां समाहित हो जाती हैं जो विशिष्ट लक्षित व्यक्तियों के कल्याणार्थ संचालित की जाती है। इस प्रकार के सभी अवयवों का समावेश सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत करने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक नियोजन का यह मूलभूत उद्‌देश्य की समाज के सभी सदस्यों की भावनाओं एवं इच्छाओं का ध्यान रखते हुए ऐसे कार्यक्रमों का निरूपण किया जाय जिससे लोगों को अधिकाधिक लाभ प्राप्त हो।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज में व्याप्त कुरीतियों, आडम्बरों तथा रूढ़ियों को मिटाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को संचालित किये जाते हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सामाजिक नियोजन का क्षेत्र बहुत व्यापक है और इसके माध्यम से यह प्रयास किया जाता है कि समाज की आवश्यकताओं अथवा विशिष्ट समस्याओं के आधार पर उनकी रूपरेखा का निर्माण किया जाये।

सामाजिक नियोजन का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण देश/समाज होता है। कल्याणकारी कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान करते हुए इस बात का विशेष प्रयास किया जाता है कि सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, पारिवारिक तथा राजनीतिक रूप से पिछड़े हुए निर्बल तथा अशक्त व्यक्तियों की सहायता, विकास एवं पुनर्वास की व्यवस्था की जाये।

सामाजिक नियोजन किसी भी देश अथवा समाज के भावी कार्यों के आधार पर रूपरेखा बनाने की प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था को विकसित करने का प्रयास किया जाता है, साथ ही साथ सामाजिक विकास को भी समुचित दिशा प्रदान करने की व्यवस्था की जाती है। किसी क्षेत्र विशेष, की सामाजिक समस्या, जनता की आवश्यकता, समस्या की प्रकृति, उपलब्ध संसाधनों का अनुमान तथा सामाजिक कल्याण की योजनाओं को ध्यान में रखते हुए सामाजिक नियोजन के प्रारूप को निर्मित किया जाता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया से अधिक विस्तृत तथा जटिल है।

सामाजिक नियोजन की अवधारणा के उद्‌भव एवं विकास के सन्दर्भ में यह स्पष्ट होता है कि यह नियोजन के निम्न स्तर से अपने सकारात्मक भूमिका को प्रतिपादित करता है। इसका निरूपण निम्न रूतल से प्रारम्भ होकर ऊपर की ओर गतिशील होता है।

इस प्रक्रिया में सामाजिक विकास से सम्बन्धित योजनाओं को निर्मित करने एवं प्रारम्भ करने में सरलता होती है। इस परिप्रेक्ष्य में जिला को एक उपयुक्त इकाई के रूप में स्वीकार किया गया और सामाजिक नियोजन प्राथमिक रूप से जिला नियोजन प्रक्रिया को एकीकृत करने में विशेष योगदान प्रदान किया। चूँकि जनपद अपने भौगोलिक आर्थिक एवं सामाजिक सांस्कृतिक पक्षों में भिन्न गुणों से युक्त होता है। अत: सामाजिक विकास के सन्दर्भ में एकल इकाई के रूप में सामाजिक नियोजन के लिए आधारशिला का निर्माण करता है। अत: इस सुझाव को प्राथमिकता प्रदान की गई कि जनपद को सामाजिक नियोजन के सन्दर्भ में दो या तीन विकास खण्डों के रूप में लघु इकाई के स्वरूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाये। इस प्रकार विभिन्नताओं के परिदृश्य में सामाजिक नियोजन सामाजिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण

आधार के अपनी पूर्णता को प्रस्तुत कर सकता है। साधारणतया विकास से सम्बन्धित कार्यक्रमों को सामाजिक नियोजन के आधार पर निर्मित करने का प्रयास किया जाता है। इस दिशा में जनपद में उपलब्ध स्त्रोतों, समस्याओं एवं तनावों के परिप्रेक्ष्य में इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि ऐसे कार्यक्रमों को संचालित किया जाये जिससे सामाजिक नियोजन की पृष्ठभूमि में विकास की उपलब्धियां प्राप्त हो सके। सामाजिक नियोजन आर्थिक एवं सामाजिक सेवाओं, स्थानिक वितरण आदि को ध्यान में रखते हुए उसके क्रिया संचालन को निर्देशित करें। अत: ऐसे विकास खण्ड जो अन्य विकास खण्डों में तुलनात्मक रूप से पिछड़े हैं अथवा जहाँ विविध प्रकार के सामाजिक सेवाओं की गतिशीलता कार्यान्वित नहीं हो पाई हैं उन्हें अन्य विकास खण्डों की तुलना में अधिक महत्व प्रदान करना चाहिए। सामाजिक नियोजन ऐसे विकास खण्डों को अपने विविध प्रकार के कार्यक्रमों में विशेष प्राथमिकता और सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था करता है।

एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में सामाजिक नियोजन को समाज के मूल्यों से सम्बन्ध बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए जिसके आधार पर विकास के लक्ष्यों को निर्मित किया जा सकता है। समाज विशेष के मूल्य परोक्ष या अपरोक्ष रूप में व्यक्ति को सन्तुष्टि प्रदान करने का प्रयास करते हैं। विभिन्न समुदायों के मध्य मूल्यों की समीक्षा करते हुए तुलनात्मक विवेचन किया जा सकता है।

## 2.3 सामाजिक नियोजन एवं सामाजिक मूल्य

प्रत्येक समाज अथवा देश के विकास की अपनी शैली होती है। कोई भी देश साधारणतया उधार मांगी गई वैचारिकी तथा दूसरों के दृष्टिकोण से विकसित नहीं हो सकता। मूल्यों के आधार पर भारतीय समाज में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीकि स्तर पर न्याय, विचारों की स्वतंत्रता, विशेषकर विश्वास, पूजा पाठ आदि को प्रस्तुत करने में एवं प्रस्थिति की समानता को बनाए रखने में सामाजिक नियोजन की रचनात्मक भूमिका प्रतिपादित हो सकती है।

भारत में विकास में सम्बन्धित लक्ष्य एवं उद्देश्य कुछ इसी प्रकार के मूल्यों से प्राप्त होते हैं। ये लक्ष्य राज्य के निदेशित सिद्धान्तों में किसी न किसी रूप में अपने उद्देश्य को प्रकट करते हुए सामाजिक आर्थिक संरचना को स्थापना करते हैं। इसके अन्तर्गत बच्चों को नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा देने की व्यवस्था, अनुसूचित जाति, एवं जनजाति एवं अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक पक्षों में अभिवृद्धि, जन स्वास्थ्य में सुधार करते हुए लोगों के जीवन स्तर एवं पोषाहारीय स्तर में अभिवृद्धि लोगों के कल्याण से सम्बन्धित उचित सामाजिक व्यवस्था का निर्माण, समाज में आय की असमानता व्यवस्था का निर्माण, समाज में आय की असमानता को कम करने का प्रयास एवं विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के प्रस्थिति से सम्बन्धित असमानता को दूर करना अपेक्षित है। इस प्रकार सामाजिक नियोजन विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा देते हुए ऐसे सुअवसरों की तलाश करती है जिसके माध्यम से असमानता के अंधकार को दूर किया जा सके तथा सामान्यजन सुचारु रूप से अपना जीवन यापन कर सके।

मूल्य लक्ष्य एवं उद्देश्य सामाजिक नियोजन के सन्दर्भ में भ्रम उत्पन्न करते हैं। इस सन्दर्भ में ऐसा देखा जाता है कि उनके बीच में साधारणतया कोई प्रकार्यात्मक सम्बन्ध न होने के

कारण स्पष्ट योजना एवं कार्यक्रम का निर्धारण नहीं हो पाता। कभी-कभी विकास से सम्बन्धित कार्यक्रम अनुमानित लक्ष्य एवं उससे सम्बन्धित वृहद सन्दर्भों को ध्यान में रखते हुए निर्मित होते हैं। उद्देश्यों के सन्दर्भ में जब सामाजिक लाभ और कार्यक्रमों के बीच में कोई स्पष्ट सम्बन्ध नहीं बन पाता तो ऐसी स्थिति में सामाजिक नियोजन, व्यय एवं उससे होने वाले लाभ के बीच में सन्तुलन स्थापित न होने के कारण विविध प्रकार के समस्याओं का सृजन करता है। ऐसी स्थिति में अनुमानित परिणामों को प्राप्त करना एक कठिन कार्य हो जाता है और समाज के कमजोर समूह, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों को अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं हो पाता। सामाजिक नियोजन के सन्दर्भ में इस तथ्य पर विशेष बल दिया जाता है कि ऐसे कार्यक्रमों का प्रारूप निर्मित किया जाये जो क्षेत्र विशेष की समस्या एवं व्यवधानों को ध्यान में रखते हुए विशिष्ट उद्देश्यों को पूरा करने का प्रयास करें।

## 2.4 सामाजिक नियोजन का दूरगामी लक्ष्य

सामाजिक नियोजन के उद्भव के अन्तराल में उसके दूरगामी लक्ष्य के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसके अन्तर्गत किसी भी अर्थव्यवस्था के अधिकतम सामाजिक लाभ को उन लोगों को प्रदान किया जाता है जो किसी न किसी रूप में असमर्थ हैं तथा इसके द्वारा प्रदत्त लाभ को प्राप्त करके अपने जीवन को संवारने की व्यवस्था करते हैं। इसी के माध्यम से इस बात का प्रयास किया जाता है कि अधिकतम सामाजिक कल्याण की प्राप्ति हो। इसके द्वारा सामाजिक विषमता को भी दूर कर अधिकतम सामाजिक कल्याण की व्यवस्था की जाती है।

सामाजिक नियोजन अपने अस्तित्व के अन्तराल में वर्ग संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास करता है। यह एक सर्वविदित सत्य है कि श्रमिक और या पूँजीपति जो आपस में सघर्ष करते हैं वह देश के लिए घातक प्रमाणित हो सकता है और उसका अन्त सामाजिक नियोजन के माध्यम से ही सम्भव है।

सामाजिक नियोजन के समाज की भीषण समस्या, गरीबी, बेकारी एवं मृत्यु से सुरक्षा की व्यवस्था की जाती है। इसके अन्तर्गत सामाजिक सहायता की व्यवस्था की जाती है। सामाजिक नियोजन का विशेष बल सामाजिक न्याय पर है। इसके द्वारा समाज की विषमता बहुत हद तक दूर होती है। इसके द्वारा अनैतिक कार्यों को भी नियंत्रित किया जाता है।

इस प्रकार सामाजिक नियोजन अपने अस्तित्व के माध्यम से चुतर्दिक विकास को महत्व प्रदान करता है। उसका यह प्रयास होता है कि सन्तुलित आर्थिक विकास हो तथा गरीबी उन्मूलन के लिए गये प्रयासों को विशेष महत्व प्राप्त हो। इसके द्वारा समाजवादी विचारधारा को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। अत: यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सामाजिक नियोजन अपने माध्यम से ऐसी व्यवस्था का सृजन करता है जो सबके हितों को प्रमुखता प्रदान करती है। समाज के सभी वर्गों के लोगों को अधिक से अधिक सन्तुष्टि इसका परम लक्ष्य है।

## 2.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Almond G.A & Coleman J.A. 1960. The Politics of the Developing Area, Princeton, Princeton University Press.

2. Myrdal, Gunnar 1968 Asian Drama An inquiry into the Poverty of the Nations, Penguin, New York.

3. John F. Jones and Pandey S. Rama, 1978 Social Development through Institutional Change, Rajasthan Journal of Social Work, Udaipur.

4. Sharma P.N. and Shastri C. 1984. Social Planning, Concepts and Techniques. Print House (India) Lucknow.

5. Lewis A.W. 1966 Development Planning The Essential of Economic Policy, New York. Harper and Row Publishers Inc.

6. Hodge, Peter 1975 Social Planning for Growing cities, Social Planning for Growing Cities. Role of Social Welfare Proceedings of the ICSW Regional Conference for Asia and Western Pacific Hong Kong.

7. Mishra R.P. 1983 Participatory Panning and Self Reliant Development Seminar on Participatory Planning for self reliant Development.

## 2.6 सम्बन्धित प्रश्न/उत्तर

1. सामाजिक नियोजन की अवधारणा के उद्‌भव पर प्रकाश डालिए।
2. किस प्रकार सामाजिक नियोजन सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन देते हुए सभी वर्गों की सामाजिक कल्याण दिलाने का प्रयास करता है?
3. किस प्रकार सामाजिक नियोजन के उद्‌भव में सामाजिक मूल्यों का योगदान रहा है?
4. सामाजिक नियोजन के अभिप्रेरकीय स्थिति क्या है?

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत सामाजिक सुरक्षा का क्या स्थान है?
2. किस प्रकार सामाजिक नियोजन विपन्नता को दूर करने का प्रयास करता है।
3. एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में सामाजिक नियोजन की विवेचना कीजिए।
4. सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषता क्या है?

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. क्या सामाजिक नियोजन क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित सामाजिक मूल्यों को प्राथमिकता प्रदान करता है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं कह सकता।

2. मूल्य, लक्ष्य तथा उद्‌देश्य सामाजिक नियोजन के परिप्रेक्ष्य में भ्रम क्यों उत्पन्न करते हैं?

(क) उनमें आपस में ताल मेल नहीं होता।

(ख) सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में अपना वर्चस्व बनाना चाहते हैं।

(ग) तथ्यगत स्थिति स्पष्वट नहीं होती।

(घ) अन्य।

**उत्तर**—1. (क) 2. (क)

# इकाई 3 सामाजिक नियोजन के उद्देश्य एवं भरण

## इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सामाजिक नियोजन की आवश्यकता

3.3 सामाजिक नियोजन के उद्देश्य

3.4 सामाजिक नियोजन की सीमाएँ

3.5 सामाजिक नियोजन के चरण

3.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.7 सम्बन्धित प्रश्न

## 3.0 उद्देश्य

सामाजिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य किसी भी सामाजिक संगठन में नियोजित परिवर्तन करना होता है। इसके द्वारा सामाजिक कुरीतियों को मिटाने, समानता तथा न्याय की स्थापना करने तथा शोषण से मुक्ति दिलाने का तथा समग्र सामाजिक विकास को सफलता प्रदान करने का कार्य किया जाता है। किसी भी योजना या कार्यक्रम की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि उसमें जनसहभागिता को पर्याप्त बढ़ावा मिले तथा लोगों को समाज के अन्तर्गत किसी भी प्रकार के विकास से सम्बन्धित क्रिया-कलापों को करने में विशेष सहयोग प्राप्त हो।

सामाजिक नियोजन के उद्देश्य के अन्तर्गत इस तथ्य पर विशेष बल प्रदान किया जाता है कि इसकी नियोजन प्रक्रिया में समाजशास्त्रियों तथा समाजसेवियों का सार्थक सहयोग प्राप्त हो। इनके सहयोग के अभाव में वांछित उद्देश्यों की पूर्ति सम्भव नहीं हो सकती। सामाजिक नियोजन के उद्देश्य के अन्तर्गत सर्वप्रथम सामाजिक नीति का होना आवश्यक है। यह तभी सम्भव है जब सामाजिक नीति के अनुरूप विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को बनाते हुए लक्ष्यों की प्राप्ति में सतत् प्रयास करने का आचार को ढूँढ़ा जाये। साधारणतया नीति वह आचार संहिता है जो समस्त प्रशासनिक कार्यों को मार्ग दर्शन प्रदान करने का प्रयास करती है।

सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों के अन्तर्गत समसामयिक समाज की तात्कालिक तथा भविष्य की स्थिति का आकलन किया जाता है। इस आकलन के आधार पर लक्ष्य तथा उद्देश्यों को बाँटने का प्रयास किया जाता है। कार्यक्रमों या योजनाओं को क्रियान्वित करते समय पर्याप्त प्रबोधन तथा मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के अनन्तर प्राप्त निष्कर्षों तथा अनुभूतियों को आधार मानते हुए भविष्य की योजना में संशोधन या सुधार करने का प्रयास किया जाता है।

## 3.1 प्रस्तावना

किसी भी नियोजन के निर्माण प्रक्रिया में उसके उद्देश्य को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। सामाजिक नियोजन के परिप्रेक्ष्य में ऐसी नीतियों का निर्धारण किया जाता है जिससे उद्देश्यों को प्राप्त करने में किसी प्रकार की कठिनाई न हो। साधारणतया विकासोन्मुख देशों में साधनों की कमी के कारण विकास के कार्यों को द्रुत गति नहीं प्रदान की जा सकती। किसी भी देश अथवा समाज के विभिन्न पक्षों को विकसित करने के लिए संगठित प्रयास की आवश्यकता होती है यह तभी सम्भव है जब संगठित प्रयास किसी उद्देश्य के अन्तर्गत प्रतिपादित किया जा रहा हो।

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में उद्देश्यों की आकस्मिक रूप से प्राप्त करने का प्रयास नहीं किया जाता वरन् उसे कई चरणों में प्राप्त किया जाता है। अत: सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों एवं उसे प्राप्त करने के विभिन्न चरणों में ताल-मेल होना चाहिए। इसके अभाव में सामाजिक नियोजन अपने वांछित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाता है। इस खण्ड में सामाजिक नियोजन के उद्देश्य एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने के विविध चरणों का विवेचन किया गया है।

## 3.2 सामाजिक नियोजन की आवश्यकता

सामाजिक नियोजन के उद्देश्य को स्पष्ट करने से पहले यह आवश्यक है कि उसके आवश्यकता को विश्लेषित किया जाये। किसी भी सामाजिक व्यवस्था में उसके अविरल गति प्रवाह के लिए लोक कल्याणकारी प्रशासन की अपेक्षा की जाती है। लोक कल्याणकारी शासन व्यवस्थाओं में सामाजिक नियोजन के माध्यम से ही समाज कल्याण, सामाजिक पुनर्निर्माण, सामाजिक स्थायित्व तथा सामुदायिक विकास के लिए निर्धारित लक्ष्य प्राप्त किए जा सकते हैं। सामाजिक नियोजन की समसामायिक समाज में महती आवश्यकता होती है और उसके माध्यम से ही समाज के चुतर्दिक विकास की रूपरेखा बनाई जा सकती है।

वर्तमान समय में लोक कल्याणकारी राज्य का यह महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व हो जाता है कि वह व्यक्ति, परिवार तथा समाज के विविध पक्षों का कल्याण एवं विकास को दृढ़ता के साथ सुनिश्चित करने का प्रयास करे। यह तभी सम्भव है जब लक्ष्यों के निर्माण में सामाजिक नियोजन के माध्यम को अंगीकृत किया जाये। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि समाज कल्याण एवं विकास के लिए सामाजिक नियोजन ही एकमात्र उपाय है।

प्रत्येक समाज में विविध कारकों के प्रभाव के परिणामस्वरूप सामाजिक आर्थिक परिवेशों में आशातीत परिवर्तन हुए हैं। इस परिवर्तित परिवेश में जनाकांक्षाओं में भारी वृद्धि हुई है। लोगों के आकांक्षाओं की पूर्ति तभी सम्भव है जब विविध प्रकार के कार्यक्रमों का निर्धारण नियोजित प्रयासों से ही पूरा किया जाये। अत: सामाजिक नियोजन के अभाव में जनाकांक्षाओं की पूर्ति सम्भव नहीं है।

सामाजिक नियोजन एक ऐसा महत्वपूर्ण आधार है जिसके लक्ष्यों के अनन्तर ही स्वैच्छिक समाजसेवी संगठनों के प्रकार्यों को समन्वित करने का प्रयास किया जा सकता है। स्वयंसेवी

संगठन सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों एवं प्रकार्यों से अभिप्ररित होते हैं तथा उसकी प्रक्रिया के अनन्तर अपने क्रियाकलापों को प्रतिपादित करते हैं। साधारणतया जैसे-जैसे समाज में द्वैतीयक सम्बन्धों का प्राबल्य बढ़ता जा रहा है तथा औपचारिकता को केन्द्रबिन्दु मानकर लोग अपने भूमिका का प्रतिपादन कर रहे हैं उसी के साथ समाज में या संगठन विशेष में सामाजिक समस्याओं तथा विषटन का प्राबल्य बढ़ता जा रहा है। ऐसी जटिल स्थिति में सामाजिक संरचना के अन्तर्गत स्वैच्छिक संगठन अत्यधिक प्रभावी नहीं हो पा रहे हैं। ऐसी स्थिति में राज्य को समसामयिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए नियोजित सामाजिक विकास करके सहयोग प्रदान करना चाहिए।

साधारणतया प्रत्येक देश में सरकार द्वारा नियोजित आर्थिक विकास कराने का प्रयास कराया जाता है। इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव सामाजिक विकास पर पड़ता है। नियोजित आर्थिक विकास सामाजिक विकास को गति प्रदान करता है अत: आर्थिक विकास तथा सामाजिक नियोजन में समन्वय स्थापित करना नितान्त आवश्यक हो जाता है।

अत: उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी देश अथवा समाज के लिए समाज कल्याण एक मूलभूत उपलब्धि है। यह तभी सम्भव है जब समाज में सामाजिक नियोजन के माध्यम से सामाजिक विकास तथा सामाजिक कल्याण के विविध आयामों को दिशा प्रदान की जाये।

## 3.3 सामाजिक नियोजन के उद्देश्य

सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों की चर्चा में स्वयं में यह स्पष्ट हो जाता है कि पूर्णरूपेण नियोजित क्रियाओं जैसे उत्पादन उपयोग, विनियम, वितरण आदि पर पूर्ण नियंत्रण हो जिससे कोई वर्ग अभाव बोध का अनुभव न करे। सामाजिक नियोजित क्रिया स्वयं में एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है। निश्चित उद्देश्यों के अभाव में नियोजन की कल्पना करना भी सम्भव नहीं है। यह वह साधन है जिसे सदैव किसी लक्ष्य के सन्दर्भ में ही प्रयोग किया जा सकता है। सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्यों के निर्धारण में इस तथ्य पर विशेष बल देता है कि जनता का जीवन स्तर ऊँचा उठे तथा आर्थिक साधनों का बहुमुखी विकास सम्भव हो सके। पूर्ण एवं सुखी जीवन की सम्भावना को भी इसमें पर्याप्त महत्व प्रदान किया जाता है।

सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों को निम्न संवर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

प्रथम ऐसे उद्देश्य जिनकी प्रमुखता आर्थिक पक्ष से हो।

द्वितीय ऐसे उद्देश्य जो सामाजिक रूप से महत्वपूर्ण हो।

तृतीय ऐसे उद्देश्य जिनका राजनीतिक रूप से महत्व हो।

**( अ ) आर्थिक उद्देश्य**

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज के चतुर्दिक विकास हेतु आर्थिक उद्देश्य का विशेष महत्व है और उसे अन्य उद्देश्यों की तुलना में विशेष प्रमुखता प्रदान की जाती है। आइर्थक उद्देश्य निम्न हैं—

**( क ) तीव्र आर्थिक विकास**—सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था का तीव्र विकास महत्वपूर्ण होता है। इसी विकास के प्रक्रिया में समाज के सभी वर्गों विशेषकर विपन्न वर्ग को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। ऐसी धारणा है कि जब तक विपन्न समर्थवान नहीं होगा तब तक सामाजिक नियोजन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसी परिप्रेक्ष्य में छठवीं पंचवर्षीय योजना में विकास की दर 5.3 प्रतिशत, सातवीं की 5 प्रतिशत तथा आठवीं की 5.7 प्रतिशत थी। नौवीं में यह 6.5 प्रतिशत रखी गयी है। नौवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक विकास की दर को 7 से 8 प्रतिशत तक रखने का लक्ष्य है।

**( ख ) सन्तुलित आर्थिक विकास को विशेष महत्व**—किसी भी देश में सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्य को तब तक पूरा नहीं कर सकता जब तक उसके द्वारा संतुलित आर्थिक विकास को दृढ़ता के साथ लागू न किया जाये। सन्तुलित विकास के अन्तर्गत समाज के सभी क्षेत्रों में समान अनुपात में विकास को महत्व प्रदान किया जाता है। इसके अन्तर्गत यह व्यवस्था की जाती है कि निष्क्रिय या कम सक्रिय क्षेत्रों को आगे बढ़ाने के विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया जाये।

**( ग ) मानवशक्ति का समुचित उपयोग**—सामाजिक उपयोग अपने इस उद्देश्य के अन्तर्गत इस तथ्य पर विशेष बल देता है कि मानवशक्ति का समुचित एवं लाभपूर्ण उपयोग हो। इसके लिए आवश्यक है कि रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो। अगर अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी दूर नहीं हुई तथा रोजगार के अवसरों का सृजन नहीं हुआ, ऐसी स्थिति में सामाजिक नियोजन अपने क्रिया-कलापों में सक्षम प्रमाणित नहीं करता।

**( घ ) राष्ट्रीय आय के साथ ही साथ प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि**—समाज के सुसंगठित विकास के लिए आवश्यक है कि स्थायित्व के साथ तीव्र विकास हो। अनियोजित पूँजीवादी व्यवस्था में स्वतंत्र मूल्य व्यवस्था के कारण अर्थव्यवस्था में अस्त-व्यस्तता उत्पन्न रहती है। परिणामस्वरूप मूल्य व्यवस्था में भी असन्तुलित परिवर्तन होने लगता है जिसे सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत यह प्रयास भी किया जाता है कि राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हो जिससे सामान्यजन के जीवन स्तर में अपेक्षित सुधार हो। ऐसी स्थिति में व्यक्ति आवश्यकता की पूर्ति सरलता के साथ कर सकता है। भारत जैसे देश में जनसंख्या वृद्धि के कारण राष्ट्रीय आय अपने अपेक्षित लक्ष्यों को पूरा करने में सक्षम नहीं है।

**( च ) प्राकृतिक साधनों का समुचित प्रयोग**—भारत जैसे कृषि प्रधान देश में सामाजिक नियोजन का प्रमुख लक्ष्य कृषि का तीव्र विकास करना है जिससे खाद्यान्न समस्या का हल प्राप्त हो सके तथा सामान्य जन को पर्याप्त मात्रा में भोजन प्राप्त हो।

प्राकृतिक साधनों का अधिक से अधिक उपयोग उद्योगों के त्वरित विकास में है। उद्योगों के विकास में रोजगार के सुअवसर प्राप्त होंगे तथा बेरोजगारी की समस्या का हल भी निकल सकता है। रोजगार की सुलभता के कारण गरीबी की समस्या का निराकरण भी स्वत: हो सकता है। इन व्यवस्थाओं के उपरान्त भी सामाजिक नियोजन में इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि प्राकृतिक साधनों का विदोहन न हो वरन प्रचुर प्राकृतिक साधनों का अधिकाधिक उपयोग आर्थिक विकास के साथ ही साथ सामाजिक विकास में हो।

**( छ ) क्षेत्रीय असमानता को कम करते हुए आत्मनिर्भरता पर बल**—सामाजिक नियोजन आर्थिक समृद्धि को प्रोत्साहित करते हुए क्षेत्रीय असन्तुलन की स्थिति को समाप्त करने का प्रयास करता है। किसी भी देश अथवा समाज में अनियोजित अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय विषमता को प्रादुर्भाव बढ़ जाता है।

सामाजिक नियोजन आर्थिक समृद्धि को बढ़ावा देते हुए इस बात पर विशेष बल प्रदान करता है लोगों में आत्मनिर्भरता के भावना का त्वरित विकास हो। जब तक किसी देश अथवा समाज के लोग अपना स्वत: का विकास नहीं करेंगे तब तक सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकता। सामाजिक नियोजन के माध्यम से ही विकासोन्मुख देशों को विषमता को दूर किया जा सकता है।

**( ब ) सामाजिक उद्देश्य**

सामाजिक नियोजन के विविध उद्देश्यों में सामाजिक उद्देश्यों की प्रधानता होती है। सामाजिक उद्देश्य अन्य उद्देश्यों की तुलना में अपने व्यापक प्रभाव को बनाए रखने का प्रयास करता है। निम्न सामाजिक उद्देश्य सामाजिक नियोजन के कार्यक्षेत्र को विस्तृत बनाने का प्रयास करता है।

**( क ) विस्तृत क्षेत्र में सामाजिक कल्याण की उपलब्धि का प्रयास**—सामाजिक नियोजन के इस उद्देश्य के अन्तर्गत इस बात का प्रयास किया जाता है कि देश में अधिकतम सामाजिक कल्याण की प्राप्ति के लिए किन प्रयासों एवं नीतियों को कार्यान्वित किया जाये । समाज में गरीबी एवं बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत विविध प्रकार के कार्यक्रमों को लागू किया जाता है। इससे सामाजिक विषमता दूर होती है तथा सामाजिक कल्याण की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

**( ख ) सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक न्याय को प्रमुखता प्रदान करने की व्यवस्था**—सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत इस व्यवस्था को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है जिसके माध्यम से लोगों को सामाजिक सुरक्षा तथा न्याय प्राप्त हो सके। सामाजिक न्याय की प्राप्ति तभी हो सकती है जब समाज में विषमता को कम करने का सार्थक प्रयास किया जाये । दलितों एवं पिछड़ों के उत्थान हेतु ऐसे विशेष कार्यक्रम चलाए जायें जिससे उनका चतुर्दिक विकास सम्भव हो सके। सामाजिक नियोजन सबके लिए न्याय को व्यापक महत्व प्रदान करता है और उसके अनुरूप कार्य करने को बढ़ावा देता है।

**( ग ) वर्ग संघर्ष को अन्त करने का प्रयास**—सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से वर्ग संघर्ष के आधारशिला को समाप्त करने का प्रयास किया जाता है। सभी को इस तथ्य से अवगत कराया जाता है कि वर्ग संघर्ष के कारण समाज अथवा देश अपने वांछित उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकता। यदि समाज के विविध वर्ग आपस में संघर्ष करते रहेंगे तो उससे संकीर्ण भावनाओं का विस्तार होगा और लोग वृहद पैमाने पर दूसरों के हितों को विशेष महत्व प्रदान नहीं कर सकेंगे।

**( घ ) नैतिक स्तर में वृद्धि**—सामाजिक नियोजन समाज के अन्तर्गत अनैतिक एवं अहितकारी कार्यों को बढ़ावा देने वाले उपक्रमों का नियंत्रित करती है। समाज में नैतिक स्तर

के सुधार के अन्तर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य चिकित्सा, मनोरंजन, क्रीड़ा आदि सेवा को प्रदान कर लोगों के नैतिक स्तर में सुधार का रचनात्मक प्रयास किया जाता है।

इस प्रकार सामाजिक नियोजन सामाजिक उद्देश्यों के माध्यम से जन समुदाय के उद्देश्यों एवं आकांक्षाओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है।

**( स ) राजनीतिक उद्देश्य**

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत राजनीतिक उद्देश्यों को भी महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। जिस देश अथवा समाज की राजनीतिक व्यवस्था जिस प्रकार की होती है सामाजिक नियोजन की प्रकृति और प्रारूप भी उसी प्रकार का होता है। राजनीतिक उद्देश्य किसी न किसी रूप में सामाजिक नियोजन से जुड़े होते हैं। अगर राजनीतिक उद्देश्यों का निर्माण सामाजिक नियोजन के प्रकृति को जाने बिना किया गया तो निश्चित ही सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्य में खरा प्रमाणित नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में राजनीतिक उद्देश्यों के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। राजनीतिक उद्देश्य निम्न हैं।

**( क ) शान्ति व्यवस्था की स्थापना**—सामाजिक नियोजन समाज के सभी वर्गों के कल्याण के लिए यह आवश्यक समझता है कि देश अथवा समाज में शान्ति व्यवस्था बनी रहे। प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों डा० मनमोहन सिंह, प्रो० ब्रह्मानन्द आदि की स्पष्ट मानयता है कि समाज विशेष में शान्ति की स्थापना नियोजन के माध्यम से ही सम्भव है। इस उपलब्धि के लिए गरीबी, भुखमरी, बेकारी, आर्थिक, सामाजिक विषमता को दूर करने का प्रत्येक सम्भावित प्रयास की आवश्यकता है।

**( ख ) देश की आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा**—सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत देश के विकास के लिए आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। अगर देश आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा को बनाए रखने में सक्षम नहीं है तो उसके समक्ष विविध प्रकार की कठिनाइयों का प्रादुर्भाव हो सकता है। यह तभी सम्भव है जब देश को अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त हो, विश्वबन्धुत्व के अभाव में किसी प्रकार के विकास की बात नहीं की जा सकती।

उपर्युक्त उद्देश्यों के अतिरिक्त सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत सामाजिक चेतना का विकास, जनसंख्या नियंत्रण, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार, कला कौशल का विकास, समाज की व्याप्त बुराइयों पर नियंत्रण, औद्योगिक विकेन्द्रीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं विश्वबन्धुत्व आदि उद्देश्य इसके क्षेत्र को विस्तृत करने का प्रयास करते हैं।

अत: सामाजिक नियोजन की प्रासंगिका उसके उद्देश्यों से है। अगर उद्देश्य सार्थक एवं महत्वपूर्ण है तभी देश का विकास होगा तथा लोग विषमता से अपने को मुक्त रखने में समर्थ होंगे।

## 3.4 सामाजिक नियोजन की सीमाएँ

सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो विकसोन्मुख देशों में सामाजिक आर्थिक विकास पथ पर आने वाले विविध प्रकार की कठिनाइयों को सरलता के साथ निवारण का प्रयास करता है। उपर्युक्त विशेषताओं के उपरान्त भी इसकी सीमाएं हैं जो निम्न हैं—

1. **वैयक्तिक स्वाधीनता पर अंकुश**—सामाजिक नियोजन के परिप्रेक्ष्य में वैयक्तिक स्वतंत्रता का अन्त हो जाता है। इस योजना के प्रभाव के परिणामस्वरूप उत्पादक, उपभोक्ता, श्रमिक व्यवसायी आदि की व्यक्तिगत स्वाधीनता समाप्त हो जाती है। उपभोक्ताओं को सम्प्रभुता समाप्त हो जाती है। श्रमिकों को अपनी इच्छानुसार कार्यचयन करने की स्वाधीनता नहीं रहती। उनके सामाजिक नियोजन के सन्दर्भ में वैयक्तिक स्वतंत्रता का हनन करते हुए कार्य करना पड़ता है।

2. **कर्मचारीतंत्र को प्रोत्साहन**—सामाजिक नियोजन के प्रकार्यों का नियंत्रण एवं सम्पदान सरकारी कर्मचारयों द्वारा होता है अत: परोक्ष या अपरोक्ष रूप में नौकरशाही को बढ़ावा मिलता है। सरकारी कर्मचारी लक्ष्यों को प्रमुखता न प्रदान करते हुए अपना अधिकाधिक ध्यान अपने स्वार्थ पर केन्द्रित करते हैं। आर्थिक क्रियाओं पर उनका नियंत्रण होने के कारण भ्रष्टाचार को फलने-फूलने का अच्छा अवसर प्राप्त होता है।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत अनुशासनात्मक प्रवृत्ति को विशेष प्रोत्साहन प्रदान करने के परिणामस्वरूप असामाजिक गतिविधियों को विशेष प्रोत्साहन प्राप्त नहीं होता। साधारणतया सभी क्रिया-कलाप वांछित लक्ष्यों के अन्तर्गत ही सम्पन्न होते हैं।

**( ग ) अत्यधिक व्यय की समस्या**—सामाजिक नियोजन के विविध पक्षों को कार्यान्वित करने में लक्ष्य उन्मेषित गतिविधियों को अपनाना पड़ता है जो स्वयं में खर्चीला है। इन प्रक्रियाओं को सही दिशा में कार्यान्वित करने के लिए कभी-कभी निरंकुश उपागम को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

इस प्रकार विकासोन्मुख देशों में सामाजिक नियोजन समय की एक मांग है। परन्तु जनाधिक्य, नियोजन के प्रति लोगों में जागरुकता की कमी, विकास के नवीन प्राविधियों के प्रति अनभिज्ञता, वित्तीय कठिनाई, भ्रष्ट एवं असक्षम प्रशासन की गतिविधियां, कृषि उद्योग का पिछड़ापन एवं अपूर्ण एवं अव्यवस्थित नियोजन आदि अवरोधों के परिणामस्वरूप सामाजिक नियोजन अपने निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं है। सामाजिक नियोजन को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में जनता के सहयोग, आर्थिक साधनों का सही ढंग से उपयोग, पर्याप्त एवं सही आंकड़ों को प्राप्त करने की व्यवस्था पर विशेष बल प्रदान करना चाहिए। अगर ऐसा सम्भव नहीं है तो सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने में सफल नहीं हो सकता। अत: इसके सफल संचालन के लिए पर्याप्त सूझबूझ की आवश्यकता होती है।

## 3.5 सामाजिक नियोजन के चरण

सामाजिक नियोजन के माध्यम से देश के चतुर्दिक विकास के लिए आवश्यक है कि वह एक निर्धारित कार्यविधिकी के माध्यम से अपने गतिविधियों को संचालि करे। इस सन्दर्भ में निम्न चरणों का अनुसरण लक्ष्य की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण है। चरण निम्न हैं—

**( क ) लक्ष्य का स्पष्ट होना**—सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत प्रस्तावित कार्यक्रम के लक्ष्य को अच्छी तरह परिभाषित करना चाहिए। क्षेत्र विशेष के मूल्य व्यवस्था के अन्तर्गत उसको मूल्यांकित करना चाहिए। अगर ऐसा सम्भव नहीं है तो सामाजिक नियोजन अपने प्रयोज्य में

सफल नहीं हो सकता।

**( ख ) स्थिति विश्लेषण को महत्व**—सामाजिक नियोजन की सफलता तभी सम्भव है जब क्षेत्र विशेष के समस्याओं एवं तनावों को देखते हुए उद्देश्यों को स्पष्ट किया जाये। इसके अन्तर्गत स्थिति विश्लेषण को विशेष महत्व प्रदान करना चाहिए।

**( ग ) कार्यक्रम की कुशलता**—एक से अधिक उद्देश्य एवं उसकी पूर्ति कार्यक्रम के कुशलता का परिणाम बनती है तथा विविधि प्रकार के कार्यक्रमों के कौशल को प्रस्तुत करती है।

**( घ ) विविध दशाओं का उपर्युक्त संकेत**—लाभ प्राप्त करने वाली दशाओं से सम्बन्धित उद्देश्य अन्य लाभप्रद दशाओं का भी संकेत करता है।

**( च ) कार्यक्रम की उपलब्धि**—किसी भी कार्यक्रम की उपलब्धि एवं उसका विकास सिर्फ कार्यक्रम के केन्द्र बिन्दु से सम्बन्धित नहीं होता वरन् इसके अन्तर्गत अन्य सम्बन्धों को भी महत्व प्रदान किया जाता है।

**( छ ) उपलब्धियों का मापन**—उपलब्धियों को उनके उद्देश्यों के सन्दर्भ में मापने का प्रयास करना चाहिए। गतिशील कार्यक्रमों में किसी भी प्रकार से उत्पन्न व्यवधान अथवा अन्तर को गुणात्मक एवं परिमाणात्मक आधार पर समझने का प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार सामाजिक नियोजन के क्रिया-कलापों एवं विकास से सम्बन्धित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि स्थिति विश्लेषण के माध्यम से सामाजिक नियोजन के गतिविधियों का मूल्यांकन किया जा सकता है। सामाजिक नियोजन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि वह विभिन्न चरणों से गुजरते हुए विकास की प्रक्रिया को लक्ष्य उनमेषित बनाने का प्रयास करें। इसके लिए आवश्यक है कि यथार्थ आंकड़ों को एकत्रित किया जाये तथा कुशल प्रशासन तंत्र को प्रोत्साहित करते हुए ऐसे कर्मचारियों को महत्व प्रदान करें जो कुशल कर्त्तव्य परायण तथा नियोजन के कार्य में रुचि रखते हों। साधन के सीमित होने पर सामाजिक नियोजन को प्राथमिकता का निर्धारण करना अपेक्षित होता है। विकास के सन्दर्भ में सामाजिक नियोजन को सन्तुलित विकास पर विशेष बल देना होता है। ऐसा न होने पर कभी-कभी विकास का प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। विभिन्न आर्थिक पहलुओं में उचित सन्तुलन का बनना भी आवश्यक है अत: सामाजिक नियोजन को विभिन्न चरणों को अपनाते हुए भी वित्त की समुचित व्यवस्था का प्रयास करना पड़ता है। उसके अभाव में विकास सम्भव नहीं हो सकता।

## 3.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Saxena A.P. 1980. Training in the decades Ahead : Some Design considerations. Indian Journal of Public Administration Vol. XXVI No. 3 July-September p. 567.

2. Kunkel, John H. 1971 Values and Behaviour in Economic Development in Peter Kiby (ed) Enterpreneurship and Economic Development New York The Free Press

3. McClelland and 1971 Motivating Economic Winter David G. Achievement New York, The Free Press.

4. Yadav Ram P. 1980 People's Participation Focus on Mobilisation on the Rural Poor Local Level Planning and Rural Development op. cit.

5. Kamat, C.f. Banerjee U.K. 1981 Social Communication and Social Indicators. the Journal of Public Administration Vol. XXVII No. 2 April-June 271-72.

## 3.7 सम्बन्धित प्रश्न

**दीर्घ प्रश्न -**

1. सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये।
2. सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों की पूर्ति में भिन्न-भिन्न चरणों के प्रासंगिकता की विवेचना कीजिए।
3. किस प्रकार सामाजिक नियोजन अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सभी संवर्गा का विशेष ध्यान देती है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
4. सामाजिक नियोजन की समसामयिक स्थितियों में प्रासंगिकता एवं महत्व की विवेचना कीजिए।

**लघु प्रश्न**

1. क्षेत्रीय असमानता से क्या अभिप्राय है?
2. किसी प्रकार सामाजिक नियोजन वर्ग संघर्ष को दूर करने का प्रयास करता है?
3. सामाजिक नियोजन एवं शान्ति व्यवस्था में क्या सम्बन्ध है?
4. सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत लक्ष्य का क्या महत्व है?

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न**

1. सामाजिक नियोजन का केन्द्रीय विषयवस्तु सभी वर्गों के समाज कल्याण से सम्बन्धित हैं।
   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता
2. सामाजिक नियोजन का यह अथक प्रयास होता है कि समाज के विभिन्न वर्गों में आपस में संघर्ष की तुलना में समरसता का प्रसार हो?
   (क) सहमत (ख) असहमत (ग) अन्य

**उत्तर—**

1. क
2. क

# इकाई 4 नियोजन एवं विकास का सम्बन्ध

## इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 विकास की अवधारणा
4.3 सामाजिक विकास
4.4 सामाजिक विकास के अवयव
4.5 सामाजिक नियोजन एवं विकास
4.6 सामाजिक नियोजन का मूल्यांकन
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
4.8 सम्बन्धित प्रश्न

## 4.0 उद्देश्य

सामाजिक नियोजन एवं विकास का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। सामाजिक नियोजन विकास से सम्बन्धित कार्यक्रमों के उपलब्धियों के सन्दर्भ में नहीं नापा जाता वरन् कार्यक्रमों के द्वारा पड़ने वाले प्रयासों के सन्दर्भ में आँका जाता है। उदाहरणार्थ निर्धनता की रेखा के नीचे रहते हुये अपना जीवन यापन कर रहे लोगों के ऊपर सामाजिक नियोजन का क्या अभाव है उसे मूल्यांकित किया जाता है। सामाजिक नियोजन अपने माध्यम से सामाजिक विकास की रूपरेखा को बहुत ही सहज ढंग से निर्मित करने का प्रयास करता है। कभी-कभी सामाजिक विकास के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक एवं परम्परागत अवरोधों को तोड़ने का प्रयास किया जाता है। अत: सामाजिक नियोजन विविध प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से सिर्फ विकास को महत्व नहीं देता वरन् संदर्भ विश्लेषण में इस बात की व्यवस्था करता है कि किस प्रकार विकास से सम्बन्धित अवरोधों को दूर किया जाये तथा सामाजिक विकास के विविध मार्गो को प्रशस्त किया जाये ।

सामाजिक नियोजन विकास के सन्दर्भ में सिर्फ परिमाणात्मक प्रतिमानों को विशेष महत्व प्रदान नहीं करता वरन् गुणात्मक आधार को भी श्रेष्ठता की श्रेणी में रखता है। इसका ऐसा मत है कि मानकों के माध्यम से क्षेत्र विशेष में परिमाणात्मक एवं गुणात्मक आयामों के मध्य सह-सहम्बन्ध को विशेष महत्व प्रदान करना चाहिए। यह तभी सम्भव है कि जब क्षेत्र विशेष के स्रोतों एवं कोष के बारे में समुचित ज्ञान के साथ ही साथ मानव संसाधन के बारे में भी तथ्यगत ज्ञान आवश्यक हो। अत: सामाजिक नियोजन विकास को तभी सार्थक मानता है जब इसके द्वारा सभी पक्षों को अपेक्षित लाभ प्राप्त हो सके।

## 4.1 प्रस्तावना

सामाजिक नियोजन का केन्द्रीय बिन्दू क्षेत्र विशेष का विकास है। यह विकास कुछ उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। भारत की मिश्रित अर्थव्यवस्था में आर्थिक संवृद्धि और

आर्थिक समानता के उद्देश्यों को एक साथ प्राप्त करना कठिन है। हमारे देश के विकास की प्रक्रिया में सबसे बड़ा व्यवधान पूँजी का अभाव है। हमारे देश में रोजगार एवं श्रम प्रधान तकनीकों में बहुत निकट का सम्बन्ध नहीं है। भारत में तीव्र विकास के जिन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है उससे न तो रोजगार में विस्तार होता है और न असमानताएं कम होती हैं। अत: इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि ऐसी व्यवस्था की जाये जिससे नियोजन के अन्तर्गत सामाजिक विकास सम्भव हो सके। भारत के लगभग सभी पंचवर्षीय योजनाओं में इस बात का प्रयास किया गया है कि उद्देश्यों का टकराव उद्देश्यों से न हो। प्रस्तुत इकाई में यह विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है कि सामाजिक नियोजन अपने प्रक्रिया के अन्तर्गत किस प्रकार विकास को प्रोत्साहित करता है तथा किस प्रकार समाज में व्याप्त असमानताओं को दूर करने का प्रयास करता है।

## 4.2 विकास की अवधारणा

विकास के अन्तर्गत समाज में होने वाले परिवर्तनों का मूल्यांकन किया जाता है। इसके कारण समाज की स्थिति में अपेक्षाकृत लाभकारी सुधार होता है तथा समाज विकसित रूप धारण करते हुए अपने सदस्यों के अपेक्षाकृत आवश्यकताओं की व्यवस्थित पूर्ति करने का प्रयास करता है। इसके द्वारा समाज का सरल रूप संकुल होता जाता है तथा समाज को संरचना तथा सामाजिक सम्बन्धों में इस प्रकार के परिवर्तन हो रहे हों जिससे सदस्यों को अधिकतम साधन और सेवाएं उपलब्ध हो सकें। विकास के द्वारा समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं को सुचारु रूप से पूर्ण करने का प्रयास किया जा सकता है।

विकास के अन्तर्गत उन कारकों, परिणामों, व्यवस्थाओं तथा परिस्थितियों का विश्लेषण किया जाता है जिसके फलस्वरूप समाज की स्थिति अच्छी हुई है।

विकास से सैद्धान्तिक अर्थ का विश्लेषण किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि विकास वह प्रक्रिया है जिसमें एक सीधी सादी वस्तु में विभेदीकरण विकसित होकर एक जटिल रूप धारण कर लेता है और विभेदीकरण विकासोन्मुख हो जाता है। कभी-कभी यह विभेदीकरण पतन की ओर भी उन्मुख होने का प्रयास करता है।

हाबहाउस ने अपनी कृति 'सोशल डेवलपमेन्ट' में विकास की प्रत्यक्ष रूप से परिभाषा न देकर इसके चार मापदण्डों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। उसका ऐसा मत है कि समाज तब विकसित होता है जब इसकी मात्रा, कार्यक्षमता, स्वतंत्रता और सेवा की पारस्परिकता में वृद्धि होती है। अधिक स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता है कि विकास परिवर्तन का वह ढंग है जिसमें एक अविकसित समाज उच्च समाज के गुणों को आत्मसात करने का प्रयास करता है। विकास की प्रक्रिया में क्षेत्रीय समूह प्रभावहीन होने लगते हैं तथा सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि होती है। औपचारिक शिक्षा का प्रसार होने लगता है तथा परम्परागत नियंत्रण में ढिलाई होने लगती है। विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत संस्थागत क्षेत्रों में जटिल नौकरशाही का विकास होने लगता है।

## 4.3 सामाजिक विकास

सामाजिक विकास एक ऐसा नियंत्रित एवं विकासोन्मुखी परिवर्तन है जिसमें वर्तमान समाज के व्यक्ति जागरूक होकर अपने निश्चित लक्ष्यों के आधार पर पुरानी सामाजिक व्यवस्था में

फेर-बदल करने का सामान्य प्रयत्न करके एक उद्यमशील समाज और संस्कृति की उपलब्धि की ओर बढ़ने का प्रयास करता है।

सामाजिक विकास के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों और सामाजिक संरचनाओं के अतिरिक्त प्रेरणाओं, मूल्यों एवं अभिवृत्तात्मक उन्मुखता आदि की विवेचना की जाती है। समाज में सम्पत्ति और आय का उचित विभाजन, समाज के लोगों में नैतिक विकास आदि की भी विवेचना की जाती है। सामाजिक विकास के लिए आर्थिक विकास की इच्छा का होना नितान्त आवश्यक है।

सामाजिक विकास के सन्दर्भ में विरोधाभासी प्रत्यक्षीकरण के उपरान्त एवं सामाजिक नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न उपागमों के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की नीतियों एवं कार्यक्रम मनुष्य के मौलिक आवश्यकताओं को सन्तुष्टि प्रदान करने के लिए निदेशित होते हैं। इसके अन्तर्गत इस बात का प्रयास किया जाता है कि समाज के निर्बल प्रभाग के लोगों के दशाओं को सुधारने का प्रयास किया जाये। विकासोन्मुख देशों में यह प्रयास किया जा रहा है कि लोगों के जीवन के गुणात्मक पक्ष को सुधारने का प्रयास किया जाये तथा इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया जाये कि निर्धनों की दशाओं में चतुर्दिक सुधार हो। आर्थिक वृद्धि को अधिकतम बनाने के लिए राज्य के नीति उपकरण का प्रयोग किया जाये तथा एकीकृत ग्रामीण विकास में लोगों को सन्निहित करते हुए स्थानीय स्रोतों एवं सुविधाओं का अधिक से अधिक उपयोग किया जाये। यह तभी सम्भव है जब लोगों की सक्रिय सहभागिता हो तथा नियोजित विकास के प्रक्रिया को क्षेत्रीय तथा स्थानीय स्तर पर सुनियोजित ढंग से कार्यान्वित किया जाय। इन प्रक्रियाओं का उचित संचालन तभी संभव है जब प्रत्येक प्रकार के विकास के कार्यों को नियोजित ढंग से निर्मित करते हुए उसे परिणाम की ओर अग्रसारित किया जाये।

प्रत्येक देश सामाजिक विकास को अपने ढंग से प्रतिपादित करता है। साधारणतया लोगों की आकांक्षाएं उनके मूल्यों से अनुबन्धित होती है। इन.मूल्यों में भौतिक एवं आध्यात्मिक अपेक्षाओं का संयोग नहीं होता वरन् इसके अन्तर्गत उच्च स्तर का वह सन्तोष प्राप्त होता है जिसके द्वारा व्यक्ति एवं समुदाय अभिप्रेरित होते हैं और विकास से सम्बन्धित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सहायक होते हैं। अत: समाज के अन्तर्गत कभी-कभी आर्थिक एवं सामाजिक विकास के अन्तर्गत विविध प्रकार के कृत्रिमता का प्रत्यक्षकरण होता है जिसके माध्यम से लोगों के आन्तरिक गुण एवं स्रोत प्रभावित होते हैं। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत समाज के लोग एक ऐसे अवसरों के निर्माण की अपेक्षा रखते हैं जिसमें सभी को स्व अनुभूति का सुअवसर प्राप्त हो सकें।

## 4.4 सामाजिक विकास के अवयव

सामाजिक विकास से सम्बन्धित निम्न अवयवों को सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है—

(क) एक निर्धारित समय में विकास के विविध स्तरों में मनुष्य के मौलिक आवश्यकताओं के सन्तुष्टि की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। यदि ऐसा सम्भव नहीं है तो उस प्रकार के विकास का कोई महत्व नहीं हो सकता।

(ख) जीविकोपार्जन के अभिगमन में किसी क्षेत्र के लोगों को उन उत्पादक स्रोतों पर विशेष

ध्यान देना चाहिए जिसके माध्यम से जीविकोपार्जन के विभिन्न आधारों का निर्माण हो सकता है। इसके अन्तर्गत भूमि, पानी, रोजगार एवं आय का समावेश होता है। विभिन्न स्तरों पर सामाजिक एवं राजनीतिक मामलों के सन्दर्भ में सहभागी निर्णय प्रक्रिया को विशेष महत्व प्रदान करना चाहिए क्योंकि इसके द्वारा विकास से प्राप्त लाभों को समान भागों में लोग उपयोग करें। सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में सामान्य व्यक्ति को इस तथ्य से अवगत कराने का प्रयास किया जाता है कि उसे अपने सामाजिक उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य का बोध होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब व्यक्ति अपने सामाजिक सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक पर्यावरण से सम्बन्धित सूचनाओं से अवगत होते हुए अपने कर्तव्यों, सुअवसरों एवं स्वतंत्रता के प्रति जागरूक हों। व्यक्ति एवं प्रकृतिक के मध्य पारिस्थितिकी सन्तुलन बना होना चाहिए। इस प्रकार सामाजिक विकास एवं सामाजिक नियोजन का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध, एक दूसरे के अभाव में कभी भी समाज के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

## 4.5 सामाजिक नियोजन एवं विकास

सामाजिक नियोजन के अवयव के रूप में यह आवश्यक है कि 'कौशल योजना' को तार्किक ढंग से विकसित किया जाये जिससे समुदाय में आवश्यकता पड़ने पर बिना किसी सरकारी सहयोग के लागू किया जा सके। इस प्रकार की स्थिति में क्षेत्र विशेष के लोग ऐसी व्यवस्था का सृजन करते हैं जिसके अन्तर्गत वे अपनी सहभागिता को बनाते हुए स्वयं उत्तरदायित्व का वहन करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि लोग सरकार के ऊपर कम आश्रित होने की भावना विकसित करते हैं तथा स्व निर्भर होकर समुदाय में अपने कार्यों को स्वयं पूरा करने का प्रयास करते हैं। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत ऐसे कार्यक्रमों का सृजन किया जाता है जिसमें प्राविधिकीय एवं व्यावसायिक दक्षता की कम आवश्यकता होती है तथा निम्न मूल्य पर देशज स्रोतों एवं क्षमताओं का उपयोग करते हुए क्षेत्र विशेष के विकास की रूपरेखा तय की जाती है। इसके अन्तर्गत समाज के कम सुविधा सम्पन्न वर्ग के लोग भी विकास के सम्बन्धित व्यवस्थाओं में अपने को सम्मिलित कर लेते हैं। सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत ही समाज के अभाव बोध से पीड़ित व्यक्ति को इस बात के लिए अभिप्ररित किया जाता है कि वे विकास से सम्बन्धित समस्याओं का हल करने में अपना सहयोग दें और अपनी मौलिक आवश्यकताओं को पूरा करने में परम्परागत व्यवस्था में उपलब्ध सुविधाओं का प्रयोग करें।

सामाजिक नियोजन के क्रिया-कलापों में एक महत्वपूर्ण कार्य है सामाजिक विकास से सम्बन्धित कार्यक्रमों का निर्माण। इसके अन्तर्गत पूर्व संचालित कार्यक्रमों को सुधारते हुए नवीन प्रकार के कार्यक्रमों का सृजन किया जाता है। इस सन्दर्भ में विविध आर्थिक कार्यक्रमों को एकीकृत करते हुए सामाजिक विकास के परिप्रेक्ष्य में उनके परिणामों का विश्लेषण किया जाता है। सामाजिक नियोजन के लिए लोगों की सहभागिता विकास का महत्वपूर्ण आधार बनती है। इसके अन्तर्गत लोगों की आवश्यकता एवं आकांक्षाएं क्रियाशील कार्यक्रमों की आधारशिला बनती है। अत: यह आवश्यक है कि सामाजिक नियोजन के प्रत्येक स्तर पर लोगों की रचनात्मक सहभागिता हो। नियोजन के इस प्रकार को 'सहभागी नियोजन' कहते

हैं। इसके अन्तर्गत उन कार्यक्रमों एवं क्रियाकलापों को सम्मिलित किया जाता है जिसकी व्यवस्था स्वयं लोग करते हैं। इसके उद्देश्यों को समुदाय विशेष के द्वारा ही गतिशील बनाने का प्रयास किया जाता है। सहभागी नियोजन में निर्माण, समायोजन एवं समुदाय संरचना की सुदृढ़ता आदि सम्मिलित होती है। इसके अन्तर्गत निर्धन लोगों के संगठन का भी समावेश होता है। इस प्रकार के नियोजन में लोगों को उद्देश्यपूर्ण ढंग से अपनी सहभागिता प्रस्तुत करनी होती है। इससे समुदाय एवं देश दोनों को लाभ प्राप्त होने की सम्भावना बढ़ जाती है। एकीकृत आर्थिक एवं सामाजिक विकास कार्यक्रम विभिन्न कार्यक्रमों के मध्य संकुल सम्बन्धों को व्यक्त करते हैं। विकास से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम बाह्य सहयोग की अपेक्षा रखते हैं और परिवर्तन के विभिन्न अभिकरणों के द्वारा कार्यक्रमों को संचालित करने का प्रयास करते हैं। यदि कार्यक्रम योजनाओं के प्रकृति से विचलि होते हैं ऐसी स्थिति में शीघ्र अभियोजन करते हुए व्यवधानों को परिशुद्ध करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत सत्ता एवं शक्ति को केन्द्रित न करके सामान्यजनों के हाथों में देने का प्रयास किया जाता है।

सामाजिक नियोजन एवं विकास के सम्बन्धों का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि सामाजिक नियोजन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य विकास प्रक्रिया से सम्बन्धित उपलब्धियों एवं सेवाओं को सामान्यजन तक पहुँचाना है। इसके अन्तर्गत यह भी मूल्यांकित किया जाता है कि लोगों के ऊपर इसका किस प्रकार का प्रभाव पड़ रहा है। सामाजिक नियोजन निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समाज में एक उपकरण के रूप में कार्य करता है तथा समाज में विविध प्रकार के परिमाणात्मक उद्देश्यों को प्रस्तुत करता है। सामाजिक नियोजन की सार्थकता तब सम्भव है जब उसके द्वारा क्षेत्र विशेष में विशिष्ट उद्देश्य को पूरा करने का अविरल प्रयास जारी रहे। इस प्रकार सामाजिक नियोजन वितरण व्यवस्था एवं यांत्रिक व्यवस्था को सुदृढ़ करते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

## 4.6 सामाजिक नियोजन का मूल्यांकन

सामाजिक मूल्यांकन के द्वारा विकास की प्रक्रिया का मार्ग बहुत सरल हो जाता है, परन्तु इस प्रकार के व्यवस्था के अन्तर्गत विविध प्रकार के विकृतियों को भी पनपने का अवसर प्राप्त होता है। साधारणतया ऐसा कहा जाता है कि सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत व्यक्ति एवं समूह अथवा संगठन की वैयक्तिक स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है और वह स्वतंत्र रूप से किसी प्रकार के निर्णय की प्रक्रिया को प्रोत्साहित नहीं कर सकता है। इस सन्दर्भ में उपभोक्ता भी अपनी इच्छाओं को बाजार में व्यक्त नहीं पाते हैं तथा जो कुछ भी सरकार की अनुकम्पा से प्राप्त हो जाता है उसी से संतुष्टि करनी पड़ती है।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के न्याय सम्बन्धी अधिकारों को महत्व देने का प्रयास किया जाता है सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत लोगों को नागरिक स्वतंत्रता प्राप्त होती है। सामाजिक नियोजन की सफलता के लिए नागरिक स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक नहीं होता। इसके अन्तर्गत नागरिक स्वतंत्रता बनी रहती है।

साधारणतया सामाजिक नियोजन का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सम्बन्ध सांस्कृतिक स्वतंत्रता से

होता है।सांस्कृतिक स्वतंत्रता की उपस्थिति किसी न किसी रूप में राजनीतिक संरचना से निर्धारित होती है। आर्थिक नियोजन की सफलता किसी न किसी रूप में सांस्कृतिक आधारशिला से जुड़ी होती है। उस समाज या देश में आर्थिक सम्पन्नता नहीं आ सकती जिसका सशक्त आधार सांस्कृतिक विरासत से न जुड़ा हो। सामाजिक नियोजन की सफलता अथवा लक्ष्य उन्मोषित बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि जन जमुदाय से सम्बन्धित संस्कृति के गुणों को विशेष महत्व प्रदान किया जाये। तानाशाही राज्यों में संस्कृति के किन्हीं गुणों को अनुसरण करने के लिए बाध्य किया जा सकता है, परन्तु जनतांत्रिक देशों में ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि जनतांत्रिक देश अथवा समाज में व्यक्ति को वैचारिक स्वतंत्रता की छूट होती है।

साधारणतया ऐसा कहा जाता है कि सामाजिक नियोजन के विभिन्न अवयवों को प्रभावित करने में आर्थिक नियोजन को अपेक्षा राजनीतिक संरचना का विशेष योगदान होता है। आर्थिक योजनाओं को सुचारु रूप से संचालि करने के लिए आवश्यक है कि सांस्कृतिक स्वतंत्रा के कुछ पक्षों को नियंत्रित करने का प्रयास किया जाये। अगर ऐसा सम्भव नही है तो सामाजिक नियोजन अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकता। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सामाजिक नियोजन के केन्द्रीय बिन्दु के रूप में संस्कृति का बहु बड़ा योगदान होना है।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज के गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता, विषमता, असुरक्षा, अन्याय आदि को समाप्त करने की व्यवस्था की जाती है। यह तभी सम्भव है जब समाज अथवा देश विशेष के सामाजिक संरचना एवं उससे जुड़े मूल्यों को विशेष महत्व प्रदान किया जाये। ऐसा न होने पर सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में विविध प्रकार के अवरोध उत्पन्न होते हैं जिन्हें बहुत सरलता से दूर नहीं किया जा सकता। सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया व्यक्ति की कुछ स्वतंत्रता को सीमित करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु जन समुदाय के समक्ष इस प्रकार के उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं कि वैयक्तिक स्वतंत्रता की अपेक्षाकृत बेरोजगारी अन्याय एवं असुरक्षा जैसी समस्याओं का सार्थक हल ढूंढ़ने का प्रयास किया जाता है।

सामाजिक नियोजन के विविध पक्षों को कार्यान्वित करने में यदि व्यवस्था की प्रकृति तानाशाही है, ऐसी स्थिति में लोगों की स्वतंत्रता तो प्रभावित हो ही सकती है कभी-कभी लक्ष्य उन्मोषित क्रिया-कलापों का संचालन भी उचित ढंग से नहीं हो पाता। अत: ऐसा अनुभव किया जाता है कि सामाजिक नियोजन की सफलता साधारणतया जनतांत्रिक व्यवस्था में ही सफल हो सकता है। ऐसा कहा जाता है कि सामाजिक आयोजन एक भरी हुई उस बन्दूक के समान है जिसका व्यवहार लोगों की स्वतंत्रता बनाए रखने तथा छीनने दोनों के उद्देश्यों से किया जाता है। सामाजिक नियोजन के मूल में जो भावना है वह तो समाज कल्याण की है सामाजिक नियोजन विकास की प्रक्रिया में इस बात पर विशेष बल देता है कि विकास से लोगों को अधिकाधिक लाभ प्राप्त हो तथा लोगों से जुड़ी हुई समाज कल्याण की भावना को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो सके।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अगर सामाजिक नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार

के परियोजनाओं का संचालन योग्य, ईमानदार एवं समाज कल्याण के प्रति समर्पित व्यक्तियों द्वारा किया जाये तो जनसाधारण को तो अधिक लाभ प्राप्त होगा साथ ही साथ लोगों में अधिक जागरुकता, समझदारी तथा अपनी बातों को सही ढंग से कहने के क्षमता का भी विकास होगा। विकास की सार्थकता तभी है जब देश अथवा समाज के परम्परा, आदर्श एवं मूल्यों पर कुठाराघात न हो। लोग उनके विदारित रूप की कल्पना न कर सकें तथा समाज कल्याण से जुड़े मूलभूत उद्देश्यों को पूर्ण करने में अपने सहयोग को प्रदान करें।

## 4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ० मोहन प्रसाद श्रीवास्तव 2001 विकास का अर्थशास्त्र एवं आयोजन, कोणार्क पब्लिशर्स प्रा० लि० दिल्ली।
2. एस० के० मिश्र एवं वी० के० पुरी 1990 भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई।
3. P.N. Sharma and C. Shastri, 1984 Social Planning Concepts and Techniques. Print House (India), Lucknow.
4. S.K. Srivastava & A.L. Srivastava (ed). 1988, Social Movements for Development Chugh Publications, Allahabad.
5. Emanuel de Kadt (ed) 1974, Sociology and Development London - Tavistock Publications.
6. V. Lakshmana Rao, 1988 Economic Development of India Chugh Publications, Allahabad.
7. K.M. Lal 1988 Population Settlements Development and Planning Chugh Publications, Allahabad.

## 4.8 सम्बन्धित प्रश्न

### दीर्घ प्रश्न

1. सामाजिक नियोजन एवं विकास के पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
2. सामाजिक विकास के विविध अवयवों का वर्णन कीजिए।
3. कवोस के सन्दर्भ में किस प्रकार सामाजिक नियोजन मूल्यों एवं परम्पराओं को महत्व देता है। अपने उत्तर की पुष्टि उपयुक्त उदाहरणों से कीजिए।
4. सामाजिक नियोजन के परिप्रेक्ष्य में विकास का मूल्यांकन कीजिए।

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक विकास से क्या अभिप्राय है?
2. सामाजिक विकास एवं सामाजिक कल्याण का क्या सम्बन्ध है?
3. सहभागी नियोजन से क्या अभिप्राय है?

4. सांस्कृतिक स्वतंत्रता से क्या अभिप्राय है?

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न**

1. क्या सामाजिक नियोजन को राजनीतिक संरचना प्रभावित करती है?

   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं कह सकता।

2. सामाजिक नियोजन का तानाशाही व्यवस्था में क्या प्रारूप हो सकता है।

   (क) समाज कल्याण के कार्य प्रभावित होते हैं?

   (ख) निरंकुशता को बढ़ावा मिलता है।

   (ग) सामाजिक मूल्य संक्रमणकालीन स्थिति से गुजरने लगते हैं।

   (घ) सांस्कृतिक स्वतंत्रता प्रभावित होती है।

**उत्तर**—1. (क) 2. (क)

खण्ड

# 2

## सामाजिक नियोजन के प्रकार

इकाई 5

## सम्पूर्ण नियोजन

इकाई 6

## प्रजातान्त्रिक नियोजन

इकाई 7

## समाजवादी नियोजन

इकाई 8

## नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## परामर्श समिति

| | |
|---|---|
| प्रो. **केदार नाथ सिंह यादव,** कुलपति | अध्यक्ष |
| डॉ. **हरीश चन्द्र जायसवाल,** वरिष्ठ परामर्शदाता | कार्यक्रम संयोजक |
| **प्रो के.पी. सिंह,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| डॉ. **अर्जुन तिवारी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **प्रो. ए.एन. द्विवेदी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| डॉ. **रत्नाकर शुक्ल,** कुलसचिव | सचिव |

## विशेषज्ञ समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो० सी.एस. एस. ठाकुर**<br>आचार्य एवं अध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग<br>रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर | विषय विशेषज्ञ |
| **प्रो. जयकान्त तिवारी**<br>आचार्य समाजशास्त्र विभाग<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी | विषय विशेषज्ञ |
| **डॉ. मंजूलिका श्रीवास्तव**<br>रीडर, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली | दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञ |
| **प्रो. वी. के. पंत**<br>सेवा निवृत्त आचार्य एवं अध्यक्ष , समाज शास्त्र विभाग<br>(कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) लखनऊ | सम्पादक |

## MASY-06 : – *सामाजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य*

*लेखक मण्डल :*

| | | |
|---|---|---|
| **खण्ड एक :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड दो :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड तीन :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 4 इकाई |
| **खण्ड चार :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 2 इकाई |
| **खण्ड पाँच :** | **डॉ. अंशु केडिया,** लखनऊ | 2 इकाई |
| | **डॉ. जे.पी. मिश्र** , लखनऊ | 2 इकाई |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित. इस कार्य का कोई भी अंश उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ. ए. के. सिंह, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जुलाई 2012
मुद्रक : नितिन प्रिन्टर्स, 1 पुराना कटरा इलाहाबाद।

## खण्ड-दो : खण्ड परिचय -सामाजिक नियोजन के प्रकार

इस खण्ड में सामाजिक नियोजन के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। **पहली इकाई** का शीर्षक है "सम्पूर्णवादी नियोजन" । इसमें इसमें सम्पूर्णता वाद नियोजन की अवधारणा को स्पष्ट कर उसके गुण एवं दोष को स्पष्ट किया गया है। **दूसरी इकाई** का शीर्षक है "प्रजातांत्रिक नियोजन"। इसमें प्रजातांत्रिक नियोजन का अर्थ स्पष्ट किया गया है। उसकी मूलभूत विशेषताओं एवं गुण-दोष पर प्रकाश डाला गया है। **तीसरी इकाई** का शीर्षक है "समाजवादी नियोजन"। इसमें समाजवादी नियोजन के अर्थ को स्पष्ट किया गया है। नियोजन की उपलब्धियों एवं उनको प्राप्त करने में कठिनाइयों का चित्रण है। समाजवादी नियोजन के प्रति भारतीय मत का भी वर्णन है। **चौथी इकाई** का शीर्षक है "नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत"। नियोजन संबंधी भारतीय दृष्टिकोण को इसमें स्पष्ट किया गया है। नियोजन के स्वरूप और उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए विकेन्द्रीकरण नियोजन की प्रभुत्वता को स्पष्ट किया गया है।

# इकाई 5 सम्पूर्णवादी नियोजन

## इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 सम्पूर्णतावादी नियोजन की अवधारणा
5.3 सम्पूर्णतवादी नियोजन के गुण एवं दोष
5.4 सन्दर्भ ग्रन्थ
5.5 प्रश्न

## 5.0 उद्देश्य

सामाजिक नियोजन के माध्यम से मानव समूह को विधि प्रारूप के सामाजिक शोषण से बचने का सार्थक प्रयास किया जाता है। इसके द्वारा लोगों को समृद्ध एवं सुखी बनाने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक नियोजन अपने इसी उद्देश्य के कारण बहुत ही व्यापक एवं लोकप्रिय होता जा रहा है। विश्व के लगभग सभी महत्वपूर्ण अर्थव्यवस्था चाहे उसकी राजनीतिक मान्यतायें तथा सामाजिक विचारधारायें जो हों, सभी सामाजिक नियोजन के महत्व को स्वीकार करती है। सामाजिक नियोजन का यह अथक प्रयास होता है कि आर्थिक साधनों का अधिकाधिक प्रयोग राष्ट्रहित में किया जाये तथा इनसे उपलब्ध लाभ का प्रयोग सभी वर्गों के लोग समान रूप से करें।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि इससे सम्बन्धित कार्यक्रमों का अधिकाधिक लाभ विपन्न लोगों को प्राप्त हो। सामाजिक नियोजन इस बात का विशेष प्रयास करता है लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अवांछनीय प्रवृत्तियों पर विशेष रखा जाये तथा समाज को शोषण रहित बनाने में किसी प्रकार का व्यवधान न हो।

सामाजिक नियोजन के विविध प्रकार किसी न किसी रूप में देश के आर्थिक साधनों के प्रयोग को लक्ष्य उन्मोचित बनाने पर बल देते हैं। उनका यह प्रयास होता है कि विकास की क्षेत्रीय असमानताओं एवं विषमताओं को दूर करके सन्तुलित आर्थिक विकास का लक्ष्य निर्धारित किया जाये। सामाजिक नियोजन का सदैव यह प्रयास रहता है कि सामाजिक कल्याण के कार्यक्रमों का लोगों को अधिकाधिक लाभ प्राप्त हो तथा देश में वितरण की उत्तम व्यवस्था हो।

## 5.1 प्रस्तावना

भारत तीसरी दुनिया के देशों में एक महत्वपूर्ण देश है। अपने दृढ़ नियोजन व्यवस्था के परिणामस्वरूप इसके अर्थव्यवस्था में व्यापक सुधार हुआ है और आधुनिक प्रविधिकीय तकनीकों के प्रयोग के कारण यह विश्व के शक्तिशाली एवं विकसित देशों की श्रेणी में अपना स्थान बनाने में सक्षम होता जा रहा है। देश के औपनिवेशिक शोषण एवं अल्प विकास की प्रक्रिया के प्रबल होने के कारण विविध प्रकार की आर्थिक समस्याओं ने अपना सिर उठाना प्रारम्भ कर दिया। इनमें बेरोजगारी एवं निर्धनता सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह कहना

अतिशयोक्ति नहीं होगा कि सामाजिक नियोजन के द्वारा देश की गतिहीन अर्थव्यवस्था को विशेष आधार प्राप्त हुआ तथा विकास की प्रक्रिया को त्वरित गति से आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त हुआ। यह अनुभव किया जाने लगा कि भारतीय समाज का चतुर्दिक विकास आर्थिक योजना के बिना सम्भव नहीं है।

समाज में आर्थिक नियोजन एवं सामाजिक नियोजन के उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिये पंचवर्षीय योजनाओं में इनके उद्देश्यों का बहुत ही सार्थक विवेचन किया गया है। सामाजिक नियोजन की रूपरेखा के निर्माण में आर्थिक समृद्धि आत्मनिर्भरता, रोजगार, आर्थिक असमानताओं में कमी गरीबी निवारण एवं आधुनिकीकरण का अच्छा समावेश करने का प्रयास किया है।

विविध प्रकार के सामाजिक नियोजन के अन्तर्वस्तु विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि यह समाज में उन लोगों के सामाजिक कल्याण के लिये क्रियाशील होता है जो अभाव से ग्रसित है तथा उन अपेक्षाओं से वंचित है जिसमें उनको सहयोग की आवश्यकता है।

भारतवर्ष के विधि पंचवर्षीय योजनाओं के उपलब्धियों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि विकास की प्रक्रिया उनसे गतिशील तो होती है, परन्तु आर्थिक एवं सामाजिक नियोजन के विविध पक्षों से कैसे स्वयं को लिप्त रखें, स्पष्ट नहीं हो पाता। सामाजिक नियोजन के मूल में जो तथ्य सर्वाधिक प्रासंगिक है वह समाज कल्याण की मूल भावना है। इसके अन्तर्गत यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है कि किस प्रकार समाज में व्याप्त विविध प्रकार के प्रतिमान एवं सामाजिक निषेध अव्यवस्था को उत्पन्न करने में अपना रचनात्मक योगदान प्रदान करते हैं। सामाजिक नियोजन अपने लक्ष्यों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि समाज में विकास तभी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो सकता है जब असमानताओं के कमी का उल्लेख एक निश्चित उद्देश्य के परिप्रेक्ष्य में किया जाये । सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत यह व्यवस्था की जाती है कि आर्थिक समृद्धि का लाभ गरीबों तक अवश्य पहुंचे। इसका परिणाम यह होगा कि निर्धनों के आर्थिक स्थिति में सुधार होगा ही साथ ही साथ विविध योजनाओं के परिप्रेक्ष्य में उनमें विकास की प्रक्रियाओं का स्पष्ट चित्र भी उभर सकता है।

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज में व्याप्त जनसंख्या वृद्धि की समस्या गरीबी उन्मूलन, प्राकृतिक संसाधनों का समुचित विदोहन, बेरोजगारी तथा अन्य प्रकार के सामाजिक समस्याओं को अपने माध्यम से दूर करने का प्रयास करती है। इस प्रकार की व्यवस्था में समतावादी विचारधारा को बढ़ावा देने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक नियोजन की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि इसके लिये पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को पूर्ण करने में पर्याप्त सहयोग प्रदान किया जाये। यह तभी सम्भव है जब देश में राजनीतिक दशायें अनुकूल हों तथा राजनीतिक संकटों एवं बाह्य आक्रमणों से देश किसी भी रूप में प्रभावित न होता हो। सामाजिक नियोजन का प्रभार 'सम्पूर्णतावादी नियोजन विविध विशेषताओं के कारण बहुत महत्वपूर्ण है।

## 5.2 सम्पूर्णतावादी नियोजन की अवधारणा

सम्पूर्णतावादी सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत किसी भी देश के क्षेत्र विशेष एवं विशिष्ट पहलू को विकसित करने का प्रयास नहीं किया जाता वरन् इसके अन्तर्गत देश के सभी पक्षों

उद्योग, कृषि, यातायात विदेशी व्यापार जनसंख्या आदि से सम्बन्धित विभिन्न योजनाओं के माध्यम से इसे विकसित करने का प्रयास किया जाता है। कभी-कभी विकासोन्मुख अथवा विकसित देश कुछ योजना विशेष को कार्यान्वित करके देश का विकास करते हैं, उदाहरणार्थ फ्रांस में एक मोनेट योजना (Monnet Plan) चलायी गयी जिसका मुख्य उद्देश्य औद्योगिक संयंत्रों का नवीनीकरण करना था। इसी तरह दक्षिणी अमेरिका के अर्जेण्टीना की सरकार ने विश्व युद्ध के बाद जनसंख्या वृद्धि की योजना कार्यान्वित की थी। ऐसी मान्यता है कि विशिष्ट नियोजन के अन्तर्गत कुछ ही पहलुओं के विकास की बात की जाती है अर्थात् इस नियोजन के अन्तर्गत कुछ ही क्षेत्र नियोजन और क्षेत्र अनियोजित रह जाते हैं।

सम्पूर्णतावादी नियोजन के अन्तर्गत किसी भी देश के सभी क्षेत्रों में समन्वित विकास हेतु विविध प्रकार की योजनाओं को तैयार करके विकास की बात की जाती है। इसके अन्तर्गत देश के सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक ढांचे के विविध पक्षों में परिवर्तन की बात की जाती है जिससे देश के सभी क्षेत्रों के मध्य सन्तुलन हो और लोगों में निवेश की प्रवृत्ति में विकास किया जाये लोगों में उपयोग एवं उपभोग की प्रवृत्ति में वृद्धि की जाये। इसके अन्तर्गत सरकारी व्यय में कमी करते हुए धन के अधिकाधिक भाग का उपयोग देश के विकास के लिये किया जाता है। इस प्रकार सम्पूर्णतया नियोजन देश के प्रत्येक भाग को अन्त:-सम्बन्धित करते हुये उसके समन्वित विकास की योजना तैयार करता है। यह कटु सत्य है कि यदि देश का कोई भी एक भाग किसी कारण से अविकसित अथवा अनियोजित रह जाता है तो यह माना जाता है कि योजना सफल नहीं है और उसकी सफलता के प्रति संदिग्ध होना अपेक्षित है।

इस प्रकार के नियोजन में किसी भी प्रकार के विकासात्मक कार्य को सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में मूल्यांकित किया जाता है। इस बात का प्रयास किया जाता है कि देश का कोई भी भाग अनियोजित न हो तथा देश का प्रत्येक क्षेत्र लोकप्रिय ढंग से विकसित हो। इसके अन्तर्गत ऐसे कार्यक्रमों का निरूपण किया जाता है जिसका अधिकाधिक लाभ साधारणजन को प्राप्त हो तथा किसी भी स्तर पर लोग अभावबोध या विपन्नता की अनुमति न करें।

इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत विविध कार्यक्रमों को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिये एक केन्द्रीय नियोजन अधिकारी होता है जिसके निदेशन में विविध प्रकार के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन होता है। इस अधिकारी के अधिकार क्षेत्र में नियोजन का पूरा कार्य भार होता है। इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत उत्पादनों के विविध साधनों पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण रहता है। सरकार अपने विविध साधनों का प्रयोग नियोजन के निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिये करती है। इस नियोजन की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें वैयक्तिक हित को कोई स्थान नहीं होता। इसके अन्तर्गत सामाजिक हित को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। इस नियोजन में उत्पादन के विविध साधनों पर से व्यक्तिगत स्वामित्व को समाप्त कर दिया जाता है। इस नियोजन में प्रमुख व्यवस्था अधिकतम सामाजिक कल्याण को प्रदान करने की है। इस बात का भी प्रयास किया जाता है कि अधिक से अधिक लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्राप्त हो सके। इसके अन्तर्गत निजी कल्याण एवं सुरक्षा के लिये कोई स्थान नहीं होता।

साधारण रूप से इस प्रकार के नियोजन में उपभोक्ताओं, उत्पादकों एवं श्रमिकों की आर्थिक स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से नियन्त्रित कर दी जाती है। इस व्यवस्था में स्वतन्त्रता का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तथा किसी प्रकार के प्रतियोगिता में भागीदारी नियन्त्रित रहती है। इस प्रकार

के सामाजिक नियोजन की सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था यह है कि इसमें प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी रहती है। श्रमिक अपने विविध प्रकार की समस्याओं को प्रबन्धक के समक्ष रखते नहीं वरन् उसमें अपने दृष्टिकोण एवं अभिमतों को बहुत ही तर्क परक ढंग से रखने का प्रयास भी करते हैं। इस प्रकार के सामाजिक नियोजन में विविध प्रकार के अच्छाइयों के कारण लगभग विकासोन्मुख देश इसे अपनाने में आगे रहते हैं।

सम्पूर्णतावादी नियोजन के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था के विविध पक्षों को ध्यान में रखते हुये प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के लिये परियोजनायें निर्धारित की जाती हैं तथा विधि क्षेत्रों को समन्वित करते हुये नियोजित कार्यक्रमों के माध्यम से ऐसे कार्यों का संचालन किया जाता है जिससे समाज में संस्थागत परिवर्तन करना सम्भव हो सके। सम्पूर्णतावादी नियोजन सामाजिक विकास से सम्बन्धित उद्देश्यों को प्राथमिकता प्रदान करते हुये इस बात के लिये प्रयास करता है कि सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों के अनुरूप नियोजन के अन्तर्गत उपलब्धियों को प्राप्त किया जा सके। सम्पूर्णवादी नियोजन में जनता के सहयोग की अपेक्षा की जाती है तथा उससे विविध प्रकार के योजनाओं में आशातीत परिवर्तन करते हुये इस बात की व्यवस्था की जाती है कि समाज में यदि विषमता को समाप्त करना है तो किसी न किसी रूप में उद्देश्य मूलक नियोजन के अन्तर्गत समाज का विकास करना होगा।

इस नियोजन में पंचवर्षीय योजनाओं के उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में विकास से सम्बन्धित विविध कार्यक्रमों को सार्थक ढंग से लागू करने का प्रयास किया जाता है और उससे सम्बन्धित अपेक्षित कानून की रचना करते हुये दृढ़ आधार का निर्माण किया जाता है। इसी नियोजन में वार्षिक योजनाओं के कारण पंचवर्षीय योजनाओं के क्रियान्वयन में पर्याप्त लचीलापन आ जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करना सरल हो जाता है।

## 5.3 सम्पूर्णतावादी नियोजन के गुण एवं दोष

सम्पूर्णतावादी नियोजन में विविध प्रकार के गुणों के उपरान्त भी कुछ ऐसे दोष एवं कठिनाइयां हैं जिन्हें सरलता से ठीक नहीं किया जा सकता। इसके अन्तर्गत विविध प्रकार के योजनाओं का क्रियान्वयन इतना कठिन होता है कि इसके अनन्तर मानवीय मूल्यों का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है। मानवीय मूल्यों के अस्तित्व के अभाव में औपचारिकताओं का प्राबल्य बढ़ जाता है तथा अनौपचारिक सम्बन्ध गौण हो जाते हैं। इस प्रकार के नियोजन में अर्थव्यवस्था का पूर्णरूपेण सैन्यीकरण हो जाता है, इससे परे हटकर किसी प्रकार के रचनात्मक कार्यों के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता। सरकार अथवा राज्य का प्रत्यक्ष नियन्त्रण के कारण भय एवं आतंक का प्राबल्य रहता है तथा सरकारी मशीनरी के विरुद्ध किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं किया जा सकता। प्रशासन की कठोरता के परिणामस्वरूप नौकरशाही व्यवस्था में लालफीताशाही को बहुत बढ़ावा प्राप्त होता है। इससे धन का सदुपयोग नहीं हो पाता है तथा भ्रष्टाचार के पनपने एवं फैलाने का असार बढ़ता रहता है। इस प्रकार की व्यवस्था में प्रजातान्त्रिक मूल्यों को कोई स्थान प्राप्त नहीं होता वरन् उसका हनन हो जाता है।

इस प्रकार के नियोजन में विरोध को कोई स्थान नहीं है। अगर विरोध स्वस्थ है तथा किसी

न किसी रूप में विकास से सम्बन्धित है फिर भी उसे बलपूर्वक दबा देने का प्रयास किया जाता है।

आर्थिक सम्प्रभुता किसी न किसी रूप में सामाजिक विकास एवं परिवर्तन को प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार के नियोजन में समाज के सभी वर्गों के हितों को महत्व प्रदान किया जाता है, परन्तु इस नियोजन में न तो उत्पादनकर्ताओं को आर्थिक स्वतन्त्रता रहती है और न उपभोक्ताओं को। श्रमिकों को भी प्रोत्साहन एवं प्रेरणा प्राप्त नहीं होती है। उसका परिणाम यह होता है कि इस नियोजन में लोग अपनी भागीदारी तो प्रस्तुत करते हैं, परन्तु विविध प्रकार के आर्थिक सम्पन्नता के अन्तर्गत स्वतन्त्रता न होने के कारण वस्तुओं की लागत बढ़ जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि उत्पादन में कमी होने लगती है तथा भुगतान सन्तुलन की स्थिति असन्तुलित होने लगती है अत: सम्पूर्णतावादी नियोजन में विविध प्रकार के अच्छाइयों के उपरान्त भी कुछ इस प्रकार की कमियां हैं जिसके आधार पर इसके महत्व एवं क्रिया प्रणाली पर सोचने विचारने के लिये विवश होना पड़ता है।

विविध प्रकार की बुराइयों के उपरान्त भी सम्पूर्णतावादी नियोजन के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इस नियोजन को विकासोन्मुखी देशों के द्वारा अपनाने के सबसे मूल में जो कारण है वह है अधिकाधिक रूप में सामाजिक कल्याण पर ध्यान देना। सामान्य जन के बीच में यह प्रचार प्रसार किया जाता है कि इससे किस प्रकार का लाभ प्राप्त होता है तथा उसे किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है। सामान्य जनों का विश्वास प्राप्त करने के लिये विधि प्रकार के रणनीति को अपनाना पड़ता है। इस नियोजन से सम्बन्धित विविध कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिये यह प्रयास किया जाता है कि सामान्य जनों में किस प्रकार उमंग की भावना का संचार किया जाये। इस प्रकार के नियोजन में निरंकुशता को कोई महत्व नहीं है, परन्तु प्रजातान्त्रिक मूल्यों को महत्व प्रदान करने के लिये जनता से सम्बन्धित विविध प्रकार के समस्याओं के विश्लेषण के लिये जनता में उमंग का संचार आवश्यक है।

सोवियत रूस का अनुभव यह स्पष्ट करता है सम्पूर्णतावादी नियोजन कुछ सीमा तक प्रजातान्त्रिक भी हो सकता है, क्योंकि राज्यों तथा केन्द्र के जनता के प्रतिनिधि इसके सम्बन्धित मुद्दों पर विचार-विमर्श कर सकते हैं।

इस सन्दर्भ में गुन्नार मिर्डाल ने अपनी पुस्तक 'ऐन इण्टरनेशनल इकोनामी में अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुये कहा है 'मैं इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नहीं पाता हूं जहां अत्यधिक नियोजन एवं राज्य के हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप जनजान्त्रिक मूल्यों का हनन न हुआ हो। मिर्डाल ने दक्षिणी पूर्व एशिया के अर्द्ध विकसित देशों के लिये सम्पूर्णतावादी नियोजन को विशेष महत्व प्रदान किया है। उसको ऐसी मान्यता है कि नियोजन के अन्य प्रकारों की तुलना में यह नियोजन अधिक सक्षम एवं वैज्ञानिक है।

सम्पूर्णतावादी नियोजन में केन्द्रीय नियन्त्रण एवं पर्याप्त निर्देश की मात्रा के परिणामस्वरूप आर्थिक व्यवस्था को संयमित करने का प्रयास किया जाता है। विकासोन्मुखी देश इस प्रकार के नियोजन को अपने यहाँ लागू करके अधिकाधिक लाभ कमाना चाहते हैं, परन्तु आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्वतन्त्रता के ह्रास होने के कारण उन्हें विकास एवं सामाजिक कल्याण के परिप्रेक्ष्य में बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। अत: सम्पूर्णतवादी नियोजन में जहां विविध के गुण हैं तथा समसामयिक परिवेश में प्रासंगिकता है वहीं पर इस प्रकार के नियोजन के कुछ दुष्परिणाम हैं जिन्हें समय-समय पर परिमार्जित करने का प्रयास करना चाहिये।

## 5.3 संदर्भ ग्रन्थ


1. एस० के० मिश्र एवं वी० के० पुरी, 1990 भारतीय अर्थव्यवस्था हिमालया पब्लिशिंग हाउस बम्बई।
2. जगदीश नारायण मिश्र 1982 भारतीय अर्थशास्त्र, किताब महल, इलाहाबाद।
3. P.K. Dhar, 2000 Indian Economy. Its growing Dimensions, Kalyani Publishers, New Delhi.
4. P.N. Sharma and C. Shastri, 1984. Social Planning Print House (India), Luckno.
5. P.N. Sharma, 1981 Social Capability for Development Learning from japanese Experience Nagoya UNCRD.
6. Wayne G. Brohl (Jr.) Change Agents in India's Rural Development Cambridge, Harward University Press.
7. Nasir R. Jafri, 1983. Manual for Local Level Development : Programme Plannin and Management through community Participation Islamabad. UNICEF Pakistan.


## 5.4 सम्बन्धित प्रश्न

### दीर्घ प्रश्न

1. सम्पूर्णतावादी नियोजन का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. सम्पूर्णतावादी नियोजन के विशेषताओं का वर्णन उपयुक्त उदाहरणों के साथ कीजिए।
3. क्या सम्पूर्णतावादी नियोजन विकासोन्मुख देशों के लिए उपयुक्त हैं?
4. सम्पूर्णतावादी नियोजन के प्रासंगिकता की विवेचना कीजिए।

### लघु उत्तरीय प्रश्न

1. किस प्रकार सम्पूर्णतावादी नियोजन विषमताओं को दूर करने का प्रयास करता है?
2. सम्पूर्णतावादी नियोजन में आर्थिक स्वतन्त्रता का क्या अभिप्राय है?
3. इस प्रकार के नियोजन में केन्द्रीय नियोजन अधिकारी की क्या भूमिका है?

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. क्या सम्पूर्णतावादी नियोजन को विकासोन्मुख देश विकास के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं?

   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता
2. साधारणतया कहा जाता है कि सम्पूर्णतावादी नियोजन में लालफीताशाही एवं भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन प्राप्त होता है?

   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता

उत्तर—

1. क
2. क

# इकाई 6 प्रजातांत्रिक नियोजन

## इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 प्रजातन्त्रिक नियोजन का अर्थ

6.3 प्रजातान्त्रिक नियोजन की मूलभूत विशेषताएँ

6.4 गुण एवं दोष

6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.6 प्रश्न एवं उत्तर

## 6.0 उद्देश्य

प्रजातांत्रिक नियोजन के उद्देश्य के अन्तर्गत इस बात पर विशेष महत्व प्रदान किया जाता है कि जनतांत्रिक नियोजन प्रक्रिया में समाज के उन लोगों के सामाजिक कल्याण के लिए क्रियाशील होना चाहिए जो विविध प्रकार के अभाव एवं विपन्नता से ग्रसित हैं। इस प्रकार के नियोजन में प्रजातांत्रिक मूल्यों को विशेष महत्व प्रदान करते हुये इस बात पर विशेष बल प्रदान किया जाता है कि लोगों का आर्थिक समृद्धि के साथ ही साथ सामाजिक समृद्धि भी किया जाये। यद्यपि विकास की प्रक्रिया में आर्थिक समृद्धि का बहुत बड़ा योगदान है, परन्तु इस समृद्धि का तब तक महत्व नहीं है जब तक सामाजिक समृद्धि उसके साथ न जुड़ा हो। प्रजातांत्रिक नियोजन अपने माध्यम से पूँजीवादी नियोजन के प्रमुख विशेषताओं को आत्मसात करते हुये इस बात पर विशेष बल प्रदान करता है कि सामान्यजन इसके विविध प्रकार के गुण-दोषों पर अपना स्पष्ट विचार प्रस्तुत कर सकें। समाज के उस संवर्ग के लोग जो अभावबोध एवं अन्य उपेक्षाओं से ग्रसित हैं उनमें सक्रिय भागीदारी का बीजारोपण हो और सभी लोगों को अपने विचारों को बहुत ही रचनात्मक ढंग से रखने का सुअवसर प्राप्त हो।

## 6.1 प्रस्तावना

सामाजिक नियोजन का यह एक महत्वपूर्ण प्रकार है। प्रजातांत्रिक नियोजन पूँजीवादी एवं समाजवादी नियोजन के मध्य की स्थिति है। उपर्युक्त दोनों प्रकार के नियोजन के गुण इसमें सम्मिलित हैं। इस प्रकार के नियोजन के गुण इसमें सम्मिलित हैं। इस प्रकार के नियोजन का विशेष महत्व मिश्रित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत दृष्टिगोचर होता है। इस नियोजन में प्रजातांत्रिक मूल्यों को विशेष प्रश्रय प्राप्त होता है। इस नियोजन में प्रजातांत्रिक प्रविधियों का विशेष प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के नियोजन में सत्ता के केन्द्रीकरण का कोई महत्व नहीं होता है। इस बात का विशेष प्रयास किया जाता है कि इस प्रकार के नियोजन में सभी के हितों की रक्षा हो। इस प्रकार के नियोजन में कमजोर वर्ग एवं विपन्न लोगों को समाज कल्याण से सम्बन्धित अधिकाधिक सुविधाओं को प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। प्रजातांत्रिक नियोजन में

सामाजिक आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए अवसरों की समानता उत्पन्न की जाती है और इस बात का प्रयास किया जाता है कि इस प्रकार के नियोजन से सम्बन्धित लक्ष्यों को पूरा करने में लोगों की भागीदारी हो, सभी को सामाजिक सुरक्षा के अवसर प्राप्त हों । अत: उससे सम्बन्धित विविध प्रकार के कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं। इस प्रकार के नियोजन का मुख्य लक्ष्य निरंकुशता को समाप्त करना है।

इस प्रकार के नियोजन का समसामयिक समाज में काफी महत्वपूर्ण स्थान है। साधारणतया प्रजातांत्रिक नियोजन को पूँजीवादी नियोजन एवं समतावादी नियोजन के मध्य एक समझौता के रूप में देखा जाता है। इस प्रकार के नियोजन में पूँजीवादी एवं समतावादी नियोजन के उत्कृष्ट गुणों को मिलाकर एक संश्लिष्ट रूप प्रदान किया गया है। इसे मिश्रित अर्थव्यवस्था के नियोजन के रूप में भी जाना जाता है जिसके अन्तर्गत सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र दोनों का सहारा लिया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रेरणात्मक नियोजन एवं आदेशात्मक नियोजन को भी अपनाने का सार्थक प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रजातांत्रिक विधियों को अधिकाधिक रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इसमें नियोजन से सम्बन्धित लक्ष्यों का निर्धारण ऊपर से नहीं थोपा जाता वरन् जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली संसद या विधानमण्डल के द्वारा निर्मित करने का प्रयास किया जाता है।

## 6.2 प्रजातांत्रिक नियोजन का अर्थ

प्रजातांत्रिक नियोजन वह नियोजन है जिसके अन्तर्गत योजना के निर्माण एवं क्रियान्वयन का कार्य जनता के सक्रिय सहयोग एवं भागीदारी से किया जाता है। इसमें सरकार या योजना पदाधिकारियों द्वारा किसी प्रकार के दबाव की व्यवस्था नहीं की जाती। इसके अन्तर्गत जनता को योजना के विविध पक्षों की समीक्षा करने अथवा गुण दोषों पर विचार करने का पूर्ण अधिकार होता है प्रजातांत्रिक नियोजन के मुख्य लक्ष्य का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि इसके अन्तर्गत सामान्यजन के अधिकाधिक सामाजिक कल्याण को प्राथमिकता प्रदान की जाती है तथा इस बात का सक्रिय प्रयास किया जाता है कि समाज के विपन्न एवं अभावबोध से पीड़ित लोगों को अधिक से अधिक कल्याणकारी कार्यक्रमों के माध्यम से लाभ पहुँचाया जाये । इसके अन्तर्गत सरकार जन प्रतिनिधि के रूप में भाग लेती है। सरकार की योजना की रूपरेखा तैयार करके जनता के समक्ष उनके विचारों को जानने हेतु प्रस्तुत करती है तथा योजना के सम्बन्ध में अन्तिम एवं सारगर्भित निर्णय लेने के लिए एकमात्र अधिकार जनता अथवा सांसाद को प्रदान करती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि प्रजातांत्रिक नियोजन जनता की जनता द्वारा जनता के लिए निर्मित योजना है। इस प्रकार के नियोजन के निर्माण में एवं उसके संचालन में जनता का प्रत्यक्षस एवं अप्रत्यक्ष रूप में प्रमुख हाथ होता है। इसके अन्तर्गत सरकार जनता के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करती है तथा आवश्यकतानुसार राज्य के गतिविधियों को नियंत्रित एवं निदेशित करती है। उदाहरण के रूप में राज्य में स्थापित निजी उद्योगों एवं औद्योगिक प्रतिष्ठानों को सामान्यजन के कल्याण के लिए सरकार दिशा निदेश देती है तथा समाज कल्याण के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए उनके गतिविधियों को नियंत्रित करती है। वह विषम परिस्थितियों में मूल्य नियंत्रण एवं राशनिंग भी

करती हैं। परिस्थिति विशेष में सरकार सही एवं न्यायोचित वितरण हेतु कभी-कभी लौह कदम भी उठाने का प्रयास करती है। वह ऐसे कार्यों को प्रतिपादित नहीं करती जिससे सामान्यजनों के हितों पर कुठाराघात हो। प्रजातांत्रिक नियोजन अपने नाम एवं गुण के कारण अधिकाधिक उपयोग लोकतांत्रिक देशों में किया जाता है। तीसरी दुनिया के देशों में भारत एक ऐसा देश है जहाँ प्रजातांत्रिक मूल्यों को श्रेष्ठता है तथा इसी व्यवस्था के अन्तर्गत प्रजातांत्रिक नियोजन का उपयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र एक दूसरे के प्रतियोगी नहीं होते वरन् एक दूसरे के प्रतियोगी नहीं होते वरन एक दूसरे के साथ सहयोगात्मक रुख अपनाते हुए राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि महत्व प्रदान करते हैं। इस प्रकार प्रजातांत्रिक जनता के सर्वांगीण विकास के लिए उत्सुक होता है और उसे इस दिशा में समाज कल्याण से सम्बन्धित कार्यों को सम्पन्न करने में प्राथमिकता प्रदान करता है।

ए.एच. हैन्सन ने अपनी पुस्तक 'पब्लिक इन्टरप्राइजेज एण्ड इकोनामिक डेवलपमेन्ट' में प्रजातांत्रिक नियोजन के सन्दर्भ में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए कहा है कि सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा निजी क्षेत्र में या इसके विपरीत हस्तक्षेप को संयोग पर नहीं छोड़ा जाता वरन् नियोजन अधिकारी द्वारा राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए निश्चित किया जाता है या न्यूनतम निदेशित करने का प्रयास किया जाता है। किसी भी देश में आवश्यकता पड़ने पर प्रजातांत्रिक नियोजन के अधीन एक सीमा के अन्तर्गत कुछ चयनित उद्योगों एवं व्यवसायों का राष्ट्रीयकरण किया जाता है तथा उन चयनित उद्योगों को उचित मुआवजा देने की व्यवस्था की जाती है। प्रजातांत्रिक नियोजन के अन्तर्गत मूल्य यंत्र को अपनी भूमिका निभाने का पर्याप्त अवसर प्रदान किया जाता है तथा लोगों की सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता बनाये रखने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत आवश्यकता पड़ने पर विदेशी सहायता प्राप्त करने की भी व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत 'मूल्य यंत्र' को अपनी भूमिका निभाने के लिए अच्छा अवसर प्रदान किया जाता है जिससे लोगों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सहजता बनी रहे।

प्रजातांत्रिक नियोजन की मूलभूत विशेषता यह है कि इसमें सत्ता के विकेन्द्रीकरण किया जाता है तथा इसके लिए पंचायतों, सहकारी संस्थाओं, नगरपालिकाओं नगर महापालिकाओं, नगर एवं अन्य क्षेत्रीय प्रबन्धक संस्थानों की स्थापना की जाती है। इस नियोजन में करारोपण, सार्वजनिक व्यय, सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक कल्याण से सम्बन्धित विविध प्रकार के कार्यक्रमों को प्रतिपादित किया जाता है तथा शान्तिपूर्ण तरीकों से आय की विषमता को कम करने का सार्थक प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार के प्रयत्न की व्यवस्था की जाती है कि धन के असमान वितरण का प्रारूप बहुत सुदृढ़ न हो। साधारणतया लोगों का ऐसा अभिमत है कि प्रजातांत्रिक नियोजन विकासशील देशों के लिए सर्वथा उपयुक्त है। भारत में भी विकास को अविरल गति प्रदान करने के लिए प्रजातांत्रिक नियोजन को अपनाया जाता है।

इस प्रकार प्रजातांत्रिक नियोजन समाज के आदर्शों, मूल्यों, प्रतिमानों एवं परम्पराओं को ध्यान में रखते हुए इस बात पर विशेष बल देता है कि समाज में प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को पूर्ण करते हुए अधिकाधिक लोगों के हितों की रक्षा की जाये तथा सत्ता एवं शक्ति के विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत लोगों को अधिकाधिक लाभ प्रदान किया जाये। लाभ प्रदान करने की इस प्रक्रिया के

अन्तर्गत समाज के विपन्न एवं अभावबोध से पीड़ित लोगों के जीवन को सुधारने के लिए अधिक क्रियाशील होना पड़ता है।

## 6.3 प्रजातंत्रिक नियोजन की मूलभूत विशेषताएँ

सामाजिक नियोजन के अन्य प्रकारों की तुलना में प्रजातांत्रिक नियोजन को अपनी कुछ मूलभूत विशेषताएँ हैं जिसके आधार पर इसका मूल्यांकन अन्य से कुछ भिन्न प्रकार का होता है। प्रजातांत्रिक नियोजन की विशेषताएँ निम्न हैं-

**क )** प्रजातांत्रिक नियोजन की संरचना में पूँजीवादी एवं समतावादी नियोजन के प्रमुख गुणों एवं लक्ष्यों को सम्मिलित किया गया है। उपर्युक्त दोनों प्रकार के नियोजन में व्याप्त कमियों को इसमें स्थान नहीं दिया गया है। इस नियोजन के प्रकार्यों को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य पर विशेष बल दिया गया है कि समाज में विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाज के सभी वर्गों के हितों को पर्याप्त महत्व प्रदान किया जायै वर्ग विशेष को लाभान्वित करने की व्यवस्था इसमें नहीं है।

**ख )** प्रजातांत्रिक नियोजन में नीति एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में प्रतिस्पर्द्धा को कम स्थान प्रदान किया जाता है तथा दोनों को समान रूप से स्थान देते हुए गतिशील बनाने का प्रयास किया जाता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि दोनों क्षेत्र एक दूसरे के पूरक होते हैं। सार्वजनिक क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धा के स्थान पर अभिप्रेरणात्मक स्थितियों का सृजन किया जाता है जिससे सभी को प्रोन्नति के महान अवसर उपलब्ध हो सके।

**ग )** प्रजातांत्रिक नियोजन में मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रीयकरण की नीति का व्यापक उपयोग नहीं किया जाता। अत: राष्ट्रीयकरण की कार्यवाही से उत्पन्न असन्तोष एवं असहयोग से बचने का अविरल प्रयास जारी रहता है।

**घ )** प्रजातांत्रिक में सामाजिक सुरक्षा के विस्तृत कार्यक्रम चलाए जाते हैं जिससे लोगों को सन्तोषप्रद एवं न्यायसंगत जीवन स्तर प्रदान किया जा सके। इस प्रकार के नियोजन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि आर्थिक रूप से विपन्न एवं अभावबोध से पीड़ित लोगों को प्रत्येक स्तर पर सामाजिक न्याय दिलाने की व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार की व्यवस्था से सबको प्रगति करने का अवसर प्राप्त होता है।

**च )** प्रजातांत्रिक नियोजन व्यवस्था में मुक्त बाजार व्यवस्था को अस्तित्व में लाने का प्रयास किया जाता है उसके ऊपर पर्याप्त नियंत्रण रखने का प्रयास किया जाता है। किसी भी स्थिति में 'गलाकाट' प्रतियोगिता को पनपने का अवसर नहीं दिया जाता। इसके अन्तर्गत सामाजिक आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने का प्रयास किया जाता है तथा ऐसे अवसरों को बढ़ावा दिया जाता है जिससे लोगों में समानता उत्पन्न हो सके।

**छ )** विश्व में ऐसा कोई देश अथवा समाज नहीं होगा जहाँ सम्पत्ति एवं आय के आधार पर असमानता हो। प्रजातांत्रिक नियोजन में सम्पत्ति एवं आय के वितरण की विषमता को दूर करने का प्रयास किया जाता है। विषमता के स्थान पर समानता की स्थापना इस नियोजन का मुख्य उद्देश्य होता है।

**ज )** प्रजातांत्रिक नियोजन के अन्तर्गत नियोजन से सम्बन्धित तथ्यों एवं क्रियाकलापों को से थोपा नहीं जाता वरन् जनसाधारण के बीच प्रजातांत्रिक नियोजन के गुणों का प्रसार करते हुए लोगों को लाभ एवं त्याग के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसके अन्तर्गत सत्ता के विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था की जाती है तथा स्वकेन्द्रित न होकर दूसरों के हितों को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। इस नियोजन में विभेदीकरण को विशेष प्रश्रय नहीं दिया जाता। इस बात का प्रयास किया जाता है कि सभी के हितों की रक्षा की जाये तथा समानता की भावना को विकसित किया जाये।

इस प्रकार प्रजातांत्रिक नियोजन समसामयिक समाज के लिए एक उपयुक्त नियोजन है । इसके अन्तर्गत दूसरों के हितों की रक्षा करते हुए समाज में सभी को सामाजिक न्याय दिलाने की व्यवस्था की जाती है।

## 6.4 गुण एवं दोष

प्रजातांत्रिक नियोजन की अनेक विशेषताएँ उसके महत्व का प्रसार करती हैं। विविध प्रकार के विशेषताओं के उपरान्त भी इस नियोजन में कुछ ऐसे दोष हैं जिसके परिणामस्वरूप इसके उपयोग पर कभी कभी सवालिया निशान लग जाते हैं। इस नियोजन के दोष निम्न हैं—

**क )** ऐसी धारणा है कि प्रजातांत्रिक नियोजन का आधार साधारणतया काल्पनिक होता है। विभिन्न स्थितियों में इसके यथार्थ प्रारूप को प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि कहीं भी यथार्थ रूप में प्रजातंत्र संस्थापित नहीं है।

**ख )** जनसामान्य का ऐसा मत है कि प्रजातांत्रिक नियोजन में आदर्श प्रारूप के रूप में सरकारी हस्तक्षेप की बात नहीं होती। सभी प्रकार के प्रशासनिक कार्यवाही एवं निर्णय को परादर्शी बनाने का प्रयास किया जाता है। सामान्य अनुभव इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि सरकारी हस्तक्षेप एक सामान्य बात है। इस प्रकार के हस्तक्षेप के कारण आर्थिक स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है। आर्थिक स्वतंत्रता में व्यवधान के कारण लक्ष्य उन्मेषित कार्य नहीं हो पाते हैं और आर्थिक स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है।

**ग )** प्रजातांत्रिक नियोजन में भी विविध प्रकार के आज्ञासूचक प्रकृति का बोध होता है, इससे उसे मुक्त नहीं किया जा सकता। कभी-कभी प्रजातंत्र के आड़ में लोगों को भयानक हानि का सामना करना पड़ता है।

**घ )** प्रजातांत्रिक नियोजन में त्याग की अपेक्षा की जाती है जो एक कपोल कल्पना है। समसामयिक परिस्थितियों में इसका अभाव होता है। त्याग के अभाव में बचत नहीं कर पाते हैं जिससे निवेश की मात्रा में वृद्धि नहीं होती। इस प्रकार के नियोजन में आर्थिक विकास की गति साधारणतया मन्द हो जाती है।

**च )** प्रजातांत्रिक नियोजन वाले देशों के सन्दर्भ में साधारणतया यह कहा जाता है कि यहाँ के लोग सामान्यतया अपढ़ एवं अनभिज्ञ होने के कारण योजना की समस्याओं, कठिनाइयों तथा जटिलताओं को समझ नहीं पाते। ऐसी मान्यता है कि इस प्रकार के देश के लोगों में विवेक का अभाव होता है। इसका परिणाम यह होता है कि योजना के विभिन्न अवयवों के

गतिविधियों एवं सफलताओं के प्रति निराश हो जाते हैं और जन-सहयोग से वंचित रह जाते हैं।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि प्रजातांत्रिक नियोजन को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि सभी राजनीतिक दल विशेषकर सत्तारूढ़ राजनीतिक दल अनुशासनबद्ध रहते हुए इसे जनसाधारण के प्रति लोकप्रिय बनाने का प्रयास करें तथा ऐसे ऐसे कार्यक्रमों को संचालित करें जिसमें सामान्यजन की भागीदारी बन सके। इसके अन्तर्गत इस बात का प्रयास होना चाहिए कि समाज में आर्थिक सामाजिक समानता स्थापित हो तथा ऐसी नीतियों एवं कार्यक्रमों का निर्माण हो जिससे लोगों के जीवन स्तर विकसित हो सके इसके अन्तर्गत ऐसे वातारण का निर्माण हो जिससे लोगों का सक्रिय जनसहयोग प्राप्त हो सके।

## 6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Myrdal Gunnar 1967 Economic Theory and under developed Regions, London.

2. Mishra R.P. & others. 1974 Regional Development Planning in India, New Delhi, Vikas Publishing House.

## 6.6 प्रश्नोत्तर

### दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. प्रजातांत्रिक नियोजन से क्या अभिप्राय है। इसके मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. प्रजातांत्रिक नियोजन के गुण दोष की उदाहरण सहित विवेचना कीजिए।
3. प्रजातांत्रिक नियोजन जनतांत्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए किस प्रकार उपयुक्त है? अपने उत्तर की पुष्टि उदाहरण के साथ कीजिए।
4. प्रजातांत्रिक नियोजन विकासोन्मुख देशों के लिए क्यों आवश्यक है? विश्लेषण कीजिए।

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. प्रजातांत्रिक नियोजन के तीन मूल उद्देश्य क्या है?
2. प्रजातांत्रिक नियोजन के लिए नीतियों एवं कार्यक्रमों का निर्माण कैसे किया जाता है?
3. प्रजातांत्रिक नियोजन एवं विकास में क्या सम्बन्ध है?
4. क्या प्रजातांत्रिक नियोजन एक कल्पना (myth) है? स्पष्ट कीजिए।

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. प्रजातांत्रिक नियोजन के अन्तर्गत लालफीताशाही को—

   क) बढ़ावा मिलता है

ख) जड़ से समाप्त कर दिया जाता है

ग) अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ता है

घ) अस्पष्ट स्थितियों का सामना करना पड़ता है।

2. प्रजातांत्रिक नियोजन से सामुदायिक आवश्यकता के सन्तुष्टि की सम्भावना बढ़ती है।

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता।

उत्तर—

1. क

2. क

# इकाई 7 समाजवादी नियोजन

## इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 समाजवादी नियोजन का अर्थ
7.3 समाजवादी नियोजन की उपलब्धियों को प्राप्त करने में कठिनाइयां
7.4 समाजवादी नियोजन के प्रति भारतीयमत
7.5 प्रश्न उत्तर

## 7.0 उद्देश्य

समाजवादी नियोजन के उद्देश्य उसके नाम से ही स्पष्ट है। इसमें सरकार, उत्पादन, उपयोग, विनियम, वितरण एवं राजस्व आदि क्षेत्रों पर अपना पूर्ण नियंत्रण रखने का सार्थक प्रयास करता है। इस प्रकार के नियोजन में केन्द्रीय सत्ता को नियोजन के लक्ष्यों के अनुरूप महत्वपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार होता है तथा क्षेत्र अथवा देश-विदेश के लोगों को उस निर्णय को मान लेने की बाध्यता होती है। परिस्थिति विशेष ने यदि कोई भी जनसामान्य का व्यक्ति उसे मानने में अपनी असमर्थता अथवा असहमति व्यक्त करने का प्रयास करता है, तो उसे कठिन से कठिन दण्ड देने की भी व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार के नियोजन में लोगों को आर्थिक स्वतंत्रता से बहुत निकट का सम्बन्ध नहीं होता है और कभी-कभी कठोर आर्थिक निर्णय के दबाव में विशेष बल का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार इस नियोजन में उत्पादन के विविध साधनों पर राज्य या सत्ता का पूर्ण स्वामित्व होता है।

## 7.1 प्रस्तावना

समाजवादी नियोजन अपने नाम से ही अपने महत्व को सार्थक करता है। इस प्रकार के नियोजन का महत्व साम्यवादी अथवा समाजवादी दोनों में विशेषकर होता है। इसे समाजवाद के अधीनस्थ नियोजन की भी संज्ञा प्रदान की जाती है। चीन एवं रूस में इसी प्रकार के नियोजन को अपनाने की व्यवस्था है। इस नियोजन में देश की सम्पदा पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण रहता है। योजना से सम्बन्धित नीतियों एवं कार्यक्रमों में साधारणतया किसी प्रकार के छेड़छाड़ को स्वीकार नहीं किया जाता है। इस नियोजन के अन्तर्गत सत्ता सार्वभौम होती है तथा श्रमिकों को काम और उनके पारिश्रमिक का निर्धारण सरकार करती है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत वैयक्तिक स्वतंत्रता पूर्णत: समाप्त कर दी जाती है। कभी-कभी सरकार के निर्णयों के विरुद्ध आवाज उठाने पर कठोर दण्ड की भी व्यवस्था है। इस प्रकार इस नियोजन में योजना का क्रियान्वयन इतना कठोर होता है कि मानवीय मूल्य अपना अस्तित्व समाप्त कर बैठते हैं।

## 3.2 समाजवादी नियोजन का अर्थ

सामाजिक नियोजन अपने नाम के सार्थकता के अनुरूप अपने प्रकार्यों को व्यक्त करता है। इसका प्राबल्य समतावादी देशों में विशेष रूप से देखने को मिलता है। इसकी प्रकृति साधारणतया पूर्णरूपेण केन्द्रित होती है। इस प्रकार के नियोजन में देश के लगभग सम्पूर्ण सम्पत्ति पर सरकार का स्वामित्व होता है। इसमें सरकार ही उत्पादन, उपभोग विनिमय, वितरण, राजस्व आदि क्षेत्रों पर अपना पूर्ण नियंत्रण रखने का प्रयास करता है। इसके अन्तर्गत केन्द्रीय नियोजन अधिकारी होता है, जिसे योजना निर्माण एवं उसके क्रियान्वयन के सन्दर्भ में पूर्ण निर्णय लेने का अधिकार होता है। इस सन्दर्भ में इसकी सत्ता सार्वभौमिक होती है। आर्थिक जीवन के विविध पहलुओं पर कठोर नियंत्रण होता है तथा आर्थिक स्वतंत्रता पर अंकुश लगा होता है। उपभोग की मात्रा/कीमत, उत्पादन की मात्रा/कीमत तथा श्रमिकों के काम और उनका पारिश्रमिक सभी चीजें सरकार निर्धारित करती है। इस प्रकार के नियोजन में बाजार प्रणाली एवं मूल्य तंत्र पूर्ण रूप से समाप्त कर दिया जाता है। इस प्रकार की योजना का अधिक महत्व समाजवादी देशों में है। रूस एवं चीन में इस प्रकार की योजना को अधिक प्रासंगिकता प्राप्त है।

समाजवादी नियोजन के अन्तर्गत केन्द्रीय सत्ता के नियोजन के लक्ष्यों, उन्हें प्राप्त करने के विविध साधनों, उत्पादन की मात्रा एवं प्रकार, साधनों के विभिन्न क्षेत्रों में वितरण आदि से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार होता है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक दशा में लोगों को केन्द्रीय सत्ता के निर्णय को मान लेने की बाध्यता होती है। इस नियोजन के अन्तर्गत केन्द्रीय सत्ता के निर्देश की अवहेलना करने का प्रयास करने वाले को कठोर दण्ड देने की व्यवस्था की जाती है। इस नियोजन के अन्तर्गत केन्द्रीय सत्ता अथवा सरकार का आर्थिक जीवन के विविध पक्षों पर बहुत बड़ा कठोर नियंत्रण रहता है। साधारणतया लोगों के पास किसी भी प्रकार की आर्थिक स्वतंत्रता नहीं रहती। उत्पादकों, उपभोक्ताओं एवं श्रमिकों को साधारणतया उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन एवं उपभोग करना पड़ता है, जिसे सरकार चाहती है, लोगों को उन्हीं पेशों को स्वीकार करना पड़ता है, जिसके प्रति सरकार अपने उन्मुकता को व्यक्त करती है। इस प्रकार के नियोजन में निजी क्षेत्र का साधारणतया कोई अस्तित्व नहीं रहता। विपणन व्यवस्था एवं मूल्य तंत्र समाप्त हो जाता है। इसके अन्तर्गत कठोर आर्थिक निर्णय, दबाव एवं सैन्यीकरण के कारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में नियोजन से सम्बन्धित लक्ष्यों को पूर्ण करने का प्रयास किया जाता है।

केन्द्रीय कृत सत्ता होने के कारण उत्पादन के विविध साधनों पर राज्य या सरकार का पूर्ण स्वामित्व तथा नियंत्रण होता है। सरकार नियोजन के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पूर्ण प्रयास करती है और इसके लिए प्राथमिकताओं का निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पूर्ण प्रयास करती है और इसके लिए प्राथमिकताओं का निर्धारण करती है। इस प्रकार के नियोजन में वैयक्तिक लाभ का कोई महत्वपूर्ण नहीं होता। सभी के लाभ को ध्यान में रखकर किसी प्रकार के लक्ष्य का निर्धारण किया जाता है। समाज के अन्तर्गत लाभ पर वैयक्तिक स्वामित्व समाप्त होने के कारण धनी एवं निर्धन के बीच में बहुत बड़ी खाई नहीं होती। दूसरे

शब्दों में कहा जा सकता है कि उत्पादन के साधनों पर भी वैयक्तिक स्वामित्व समाप्त हो जाता है।

सामाजिक नियोजन में अधिकतम सामाजिक कल्याण को प्राप्त करना तथा सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करना महत्वपूर्ण होता है। इसके अन्तर्गत व्यक्तित्व कल्याण एवं सुरक्षा को कोई महत्व प्राप्त नहीं होता। इस नियोजन में दलित, आर्थिक रूप से विपन्न, कमजोर वर्ग आदि के हितों को सर्वोपरि महत्व प्रदान करते हुए उनकी समस्याओं को हल करने का प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत समानता की स्थापना के लिए प्रत्येक सम्भव प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत निजी उपक्रम एवं मूल्यतंत्र के अस्तित्व को लगभग समाप्त करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के नियोजन में विषमता को दूर करते हुए समानता के प्रसार का प्रत्येक सम्भव प्रयास किया जाता है।

इस नियोजन में व्यक्ति आर्थिक एवं सामाजिक रूप से जुड़े स्वतंत्रता से दूर हो जाता है। इसके अन्तर्गत समाज में प्रतिस्पर्द्धा लगभग समाप्त हो जाती है और व्यक्ति केन्द्रीय सत्ता द्वारा प्रदत्त आर्थिक उपभोग को ही स्वीकार करने के लिए बाध्य होता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार के नियोजन में लक्ष्य की प्राप्ति महत्वपूर्ण होती है। प्रयास यह होता है कि निर्धनता, बेरोजगारी, आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने का प्रयास किया जाये तथा लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास किया जाये।

## 7.3 समाजवादी नियोजन की उपलब्धियों को प्राप्त करने में कठिनाइयाँ

विभिन्न अध्ययनों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि समाजवादी नियोजन के क्रियान्वयन से सम्बन्धित लक्ष्य तो प्राप्त होते हैं, परन्तु क्रियान्वयन की प्रक्रिया इतनी कठिन होती है कि साधारणतया मानवीय मूल्य लगभग पूर्णरूप से समाप्त हो जाते हैं। अर्थव्यवस्था का लगभग सैन्यीकरण हो जाता है। इस प्रकार के नियोजन में जन सहयोग एवं उत्साह की भावना लगभग समाप्त हो जाती है। लाल फीताशाही को पर्याप्त बढ़ावा प्राप्त होता है। इसका परिणाम यह होता है कि भ्रष्टाचार का प्रसार उत्तरोत्तर होता रहता है तथा धन का दुरुपयोग होने लगता है। इस प्रकार के नियोजन के अन्तर्गत प्रजातांत्रिक मूल्यों का अस्तित्व लगभग समाप्ति के कगार पर पहुँच जाता है। इसके अन्तर्गत नियोजन से सम्बन्धित विविध प्रकार के आलोचनाओं को दबा दिया जाता है। निजी स्वार्थ की अपेक्षाकृत सामाजिक कल्याण पर अधिक ध्यान देने के कारण इसे श्रेष्ठ नियोजन की संज्ञा प्रदान की जाती है। इस नियोजन में आर्थिक व्यवस्था को संयमित बनाने, स्थिरता प्राप्त करने तथा तीव्र गति से आर्थिक विकास की बात की जाती है। इस नियोजन के लागू करने में अर्द्धविकसित देशों के लोगों को अपनी आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता का हनन करना पड़ता है।

## 7.4 समाजवादी नियोजन के प्रति भारतीय मत

समाजवादी नियोजन के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध आर्थिक सम्वृद्धि से होना चाहिए। अगर किसी भी प्रकार का नियोजन

आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करने की क्षमता नहीं रखता। ऐसी स्थिति में उसकी प्रासंगिकता संदिग्ध होती है। इस सन्दर्भ में यह कहना उचित होगा कि सम्बन्धित देश को आर्थिक दृष्टि से दूसरों की ओर झांकने का प्रयास नहीं करना पड़े। भारतीय मत के अनुसार उस नियोजन को सार्थक माना जाता है, जो आर्थिक असमानताओं को दूर करते हुए रोजगार के अवसरों का विस्तार करने की प्रमुखता को बढ़ावा देता है। नियोजन के सन्दर्भ में साधारणतया ऐसा भारतीय मत है कि आर्थिक समृद्धि का लाभ अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग को प्राप्त होता है। इसका परिणाम यह होता है कि समाज में आर्थिक असमानताओं में प्रसार होता है। भारतीय पटभूमि में आर्थिक समृद्धि को सामाजिक नियोजन का मुख्य लक्ष्य माना जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत का औपनिवेषिक शोषण होता रहा। परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था विकास की दृष्टि से बहुत पीछे रहा। यही कारण है कि सामाजिक नियोजन को सही ढंग से चरितार्थ करने के लिए आर्थिक समृद्धि पर विशेष बल प्रदान किया गया।

भारत में नियोजन की रणनीति का प्रारम्भ द्वितीय पंचवर्षीय योजना के समय से प्रारम्भ होती है। इस रणनीति के अन्तर्गत औद्योगीकरण की प्रक्रिया को दृढ़ता प्रदान करने के लिए भारी उद्योगों में विनियोग पर बल दिया गया। इसी सन्दर्भ में भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुए कहा कि "भारी उद्योगों का विकास औद्योगीकरण का पर्यायवाची है। उन्होंने अपने विचारों को और स्पष्ट करते हुए कहा कि आधारभूत उद्योगों को विशेष महत्व प्रदान करना चाहिए। औद्योगीकरण के सन्दर्भ में अपना विचार स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि ऐसे उद्योगों को कायम करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे मशीनों का निर्माण हो सके।

भारत जैसे विकासोन्मुख देश में नियोजन की सफलता के सन्दर्भ में ऐसा मत है कि यह दो कृषि प्रधान होने के कारण यहाँ के नियोजन के व्यूह रचना में कृषि के निर्माण एवं तीव्र विकास में प्रमुख आधार होना चाहिए। कृषि एवं उद्योग में समन्वय होना चाहिए । दोनों को एक-दूसरे के पूरक एवं सहयोगी के रूप में संसाधनों की उपलब्धि के आधार पर विकसित किया जाना चाहिए।

सामाजिक नियोजन की सफलता तभी सम्भव है, जब पूँजीपतियों, तकनीक विशेषज्ञों और श्रमिकों के बीच अच्छे सम्बन्ध हों।

अत: सामाजिक नियोजन एवं उसके विविध प्रकार एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है। इसकी सफलता तभी सम्भव है, जब इसके विविध अवयवों की प्रकृति दीर्घकालिक हों। यद्यपि इसके अन्तर्गत अल्पकालीन योजनाएँ सम्मिलित रहती हैं, तथापि इसके देख-रेख की सुविधा एवं सफलता के मूल्यांकन हेतु नियोजन की सम्पूर्ण प्रणाली को विभिन्न समयावधि में विभाजित किया जाता है। भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएं इसकी ज्वलंत उदाहरण हैं।

## 7.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Streeten Paul P. 1981 Development Ideas in Historical Perspective. The New Interest in Development. Regional Development Dialogue Vol. 1, No. 2, Autumn 1980 Nagoya : U.N.C.R.D. p. 24.

2. Kulkarni P. D. 1978 Concept of Social Development in Rajasthan. Journal of Social Work, Udaipur.

3. John F. Jones & Pandey S. Rama 1978 Social Development through Institutional Change Rajasthan of Social Work Udaipur. p. 9.

4. Bhooshan B. S. 1980 Regional Development Alternatives in Predominantly Rural Societies. Position Paper Expert Group Meeting August 1980, Nagoya, U. N. C. R. D.

5. Lewis A. W. 1966 Development Planning. The Essential of Economic Policy New York Harper & Row Publishers Inc.

6. Ponsioen J. A. 1968 National Development—A Sociological Contribution. The Hague.

7. Mishra R. P and others. 1974. Regional Development Planning in India. New Delhi, Vikash Publishing House.

## 7.8 सम्बन्धित प्रश्न

### दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. समाजवादी नियोजन की प्रासंगिकता को स्पष्ट कीजिए।
2. समाजवादी नियोजन से क्या अभिप्राय है? इसके मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. समाजवादी नियोजन के गुण-दोषों की विवेचना उदाहरण सहित कीजिए।
4. समाजवादी नियोजन के प्रति भारतीय मत का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. समाजवादी नियोजन के उद्देश्य क्या हैं?
2. समाजवादी नियोजन का केन्द्रीय विषयवस्तु क्या है?
3. समाजवादी नियोजन का आर्थिक स्वतंत्रता से क्या सम्बन्ध है।
4. क्या समाजवादी नियोजन में सामाजिक सुरक्षा को स्थान प्राप्त है?

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. क्या समाजवादी नियोजन में निरंकुशता को प्रोत्साहन प्राप्त होता है?

   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता/जानती

2. क्या समाजवादी नियोजन के प्रकार्यों पर सरकार का अंकुश रहता है?

   (क) हाँ (ख) नहीं (ग) मैं नहीं जानता/जानती

# इकाई 8 नियोजन संबंधी भारतीय मत

## इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत

8.3 नियोजन के मुख्य उद्देश्य

8.4 विकेन्द्रीकृत नियोजन की प्रमुखता

8.3 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.6 सम्बन्धित प्रश्न

## 8.0 उद्देश्य

इसके अन्तर्गत नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसके अन्तर्गत यह विश्लेषित किया गया है कि नियोजन विविध प्रकार के तकनीकों का प्रयोग करते हुए विकास की दृष्टि से आर्थिक व सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए अपनी क्रिया प्रणाली में उन चीजों का समावेश करें जिससे सन्तुलित विकास हो सके। यदि ऐसा सम्भव नहीं है तो नियोजन बहुत अधिक सार्थक परिणामों को प्रस्तुत नहीं कर पायेगा। नियोजन के अन्तर्गत इस बात पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है कि नियोजन सिर्फ सरकार द्वारा प्रदत्त एवं सम्बोधित प्रक्रिया बनकर वरन लोगों के भागीदारी को भी सुनिश्चित करें। अत: इसके अन्तर्गत इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि नियोजन इस प्रकार का हो जिसके अन्तर्गत लोगों की न्यूनतम आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा करने का सुअवसर प्राप्त हो। अत: भारतीय मत नियोजन के प्रकार्यों पर केन्द्रित होते हुए इस बात पर विशेष महत्व प्रदान करता है कि नियोजन के माध्यम से कृषि उत्पादन को बढ़ाने, विविध प्रकार के रोजगार का सृजन करने, कार्य कुशलता एवं तकनीकी का स्तर ऊँचा उठाने जनमतों को विभिन्न मदों पर पूँजी निवेश को प्राथमिकता देने और जीवन स्तर में विविध प्रकार के सुधार लाने सम्बन्धी कार्यनीति को तैयार करने में अपना सहायोग प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत बहुत स्पष्ट है और इसके अन्तर्गत मानव विकास को सभी विकास प्रयासों को केन्द्र बिन्दु माना जाता है। इसके अन्तर्गत मानव कल्याण के विविध पक्षों को महत्व प्रदान करते हुए इस बात की व्यवस्था की जाती है कि संगठित क्षेत्रों के साथ ही साथ असंगठित क्षेत्र भी विकसित हो जिससे विस्तारशील अर्थव्यवस्था के रूप में विविध प्रकार के क्रिया-कलापों को प्रसारित किया जा सके।

## 8.1 प्रस्तावना

भारतीय पटभूमि में नियोजन का एक महत्व है। विकासोन्मुख देशों में साधारणतया अधिकांश समस्याओं का प्राथमिक समाधान कृषि क्षेत्र के विकास पर ही निर्भर करता है। अत:

पुनर्निर्माण और विकास को ध्यान में रखते हुए इस बात की व्यवस्था की जाती है कि कृषि क्षेत्र को आधारभूत महत्व प्रदान करते हुए नियोजन की रूपरेखा को उसी के परिप्रेक्ष्य में बनाने का प्रयास किया जाये । सामाजिक नियोजन के प्रकार के अन्तर्गत विविध प्रकार के नियोजन की व्याख्या करते हुये इस तथ्य पर बल देने का प्रयास किया गया है कि किसी भी प्रकार के नियोजन को समझने से पहले तथा उसके उपादेयता को मूल्यांकित करने से पहले यह आवश्यक है कि नियोजन के प्रति भारतीय मत क्या है? और यह किस प्रकार देश के विकास को विश्लेषित करते हुए अपने माध्यम से उसके रूपरेखा को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। भारतीय मत इस तथ्य पर विशेष बल प्रदान करता है कि सन्तुलित विकास एवं असन्तुलित विकास के अन्तर्गत नियोजन के रूपरेखा तभी सार्थक हो सकती है जब कृषि क्षेत्र के पुनर्निर्माण को महत्व प्रदान करते हुए उपभोक्ता उद्योगों को प्राथमिकता देने का प्रयास करते रहना चाहिए। नियोजन के अन्तर्गत विकास के लिए रेखीय अथवा ज्यामितीय पद्धति का अनुसरण करते हुए इस प्रकार से नियोजन के रूपरेखा का निर्माण किया जाये जिससे विभिन्न प्रकार की योजनायें एक दूसरे पर निर्भर होते हुए गतिशील हों। भौतिक प्रगति के साथ ही साथ तकनीकी विकास विविध प्रकार के समन्वय अथवा सामन्जस्य को बनाये रखने में अपना रचनात्मक योगदान प्रदान कर सकता है। अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विविध प्रकार के सन्तुलन को ध्यान में रखते हुए इस बात का प्रयास करना चाहिए कि क्रमिक विकास दृढ़ आधारशिला का निर्माण कर सकता है। आकस्मिक विकास परिवर्तनशील परिस्थितियों में विविध प्रकार के विघटनकारी परिस्थितियों का निर्माण कर सकता है अत: नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत स्वयं में स्पष्ट है तथा इस बात पर विशेष बल देता है कि नियोजन सभी पक्षों को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करें।

## 8.2 नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत

नियोजन से सम्बन्धित भारतीय दृष्टिकोण का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता हे कि नियोजन का प्रत्यक्ष सम्बन्ध आर्थिक सम्वृद्धि से अवश्य हो। सम्बन्धित देश को आर्थिक दृष्टि से दूसरों की ओर आँकने का प्रयास न करना पड़े। भारतीय मत के अनुसार उस नियोजन को सार्थक माना जाता है जो आर्थिक असमनताओं को दूर करते हुए भी रोजगार के अवसरों का विस्तार करने की प्रमुखता को बढ़ावा देता है। साधारणतया ऐसा भारतीय मत है कि आर्थिक समृद्धि का लाभ अपेक्षाकृत सम्पन्नवर्ग को प्राप्त होता है। परिणामस्वरूप आर्थिक असमानाताओं में प्रसार होता है। भारत में आर्थिक समृद्धि को सामाजिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य बनाया गया है। भारतवर्ष की अर्थव्यवस्था का लगभग दो सौ वर्षों तक औपनिवेशिक शोषण होता रहा। परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था विकास की दृष्टि से बहुत पीछे रहा। यही कारण है कि सामाजिक नियोजन को सही ढंग से चरितार्थ करने के लिए आर्थिक समृद्धि पर विशेष बल प्रदान किया गया।

भारत में नियोजन की रणनीति का प्रारम्भ द्वितीय पंचवर्षीय योजना के समय से प्रारम्भ होती है। इस रणनीति के अन्तर्गत औद्योगीकरण प्राप्त करने के लिए भारी उद्योगों में विनियोग पर बल दिया गया। इसी सन्दर्भ में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुए कहा कि भारी उद्योगों का विकास औद्योगीकरण का पर्यायवाची है।

उन्होंने अपने विचारों को और स्पष्ट करते हुए कहा कि आधारभूत उद्योगों को विशेष महत्व प्रदान करने का प्रयास होना चाहिए। औद्योगीकरण के सन्दर्भ में अपना विचार स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि ऐसे उद्योगों को कायम करने का प्रयास करना चाहिए जिससे मशीनों का निर्माण हो सके।

भारत जैसे विकासोन्मुख देश में नियोजन भी सफलता के सन्दर्भ में ऐसा मत है कि यह देश कृषि प्रधान देश होने के कारण यहाँ के नियोजन के व्यूह रचना में कृषि का निर्माण और तीव्र विकास प्रमुख आधार होना चाहिए। कृषि एवं उद्योग में समन्वय होना चाहिए। दोनों को एक दूसरे के पूरक एवं सहयोगी के रूप में संसाधनों की उपलब्धि के आधार पर विकसित किया जाना चाहिए। सामाजिक नियोजन की सफलता तभी सम्भव है जब पूँजीपतियों, तकनीकी विशेषज्ञों और श्रमिकों के बीच अच्छे सम्बन्ध हों।

## 8.3 नियोजन के मुख्य उद्देश्य

भारतवर्ष जैसे विकासोन्मुख देश में नियोजन का बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके द्वारा चतुर्दिक विकास के साथ ही साथ सामान्यजस्य को न्याय प्रदान करने की व्यवस्था करना है। नियोजन सिर्फ विकास पर ही बल प्रदान नहीं करता वरन् यह सामाजिक न्याय के साथ विकास को महत्व प्रदान करता है। भारत देश की अर्थव्यवस्था निर्धनता से ग्रसित और इसका निराकरण तभी सम्भव है जब आर्थिक वृद्धि सुचारु रूप से हो। आर्थिक संवृद्धि से लोगों को जीवन स्तर सुधारा जा सकता है। देश की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इस बात का प्रयास रहा है कि वृद्धि के साथ ही साथ राष्ट्रीय आय में भी अनुरूप वृद्धि हो। अत: भारतीय पटभूमि में नियोजन का सदैव अभिमत रहा है कि आर्थिक सम्वृद्धि उच्च दर पर हो तथा लोगों को अधिक से अधिक लाभ प्राप्त होने की एक महत्वपूर्ण आधारशिला बने।

नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत बहुत ही स्पष्ट एवं तथ्यपरक है। इसके अन्तर्गत यह प्रसास किया जाता है कि आर्थिक असमानता को कम करने के साथ ही साथ निर्धनता को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। यद्यपि सभी पंचवर्षीय योजनाओं में इन्हें दूर करने का प्रयास किया गया है, परन्तु चौथी पंचवर्षीय योजना से इसे विशेष रूप से कार्यान्वित किया गया। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में यह नारा ही दिया गया कि 'गरीबी हटाओ' पर विशेष ध्यान देना चाहिए। गरीबी दूर करने के सन्दर्भ में विविध प्रकार के कार्यक्रमों जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण प्रशिक्षण एवं प्राविधिकी केन्द्र, ग्रामीण, भूमिहीन रोजगार, कार्यक्रम आदि को इसलिए संचालित किया गया जिससे लोगों को विकास का तो अवसर प्राप्त हो ही साथ ही साथ समाज के सभी वर्गों को विविध प्रकार की सन्तुष्टि प्राप्त हो।

नियोजन इस बात का प्रयास करता है कि इसके द्वारा आर्थिक समानता एवं सामाजिक न्याय के प्राप्ति के साथ ही लोगों को रोजगार के सुअवसर प्राप्त हो। अधिक से अधिक रोजगार के अवसरों को प्रदान करना नियोजन का प्राथमिक उद्देश्य था और भविष्य में भी रहेगा। इसके अन्तर्गत इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि रोजगार के अवसरों को प्रदान करने के लिए इस प्रकार के कार्यक्रमों को संचालित किया जाये जिनसे लोगों को विशेषकर ग्रामीण

समुदाय के लोगों को अधिक सुअवसर प्राप्त हो। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के कायक्रमों जैसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम आदि महत्वपूर्ण है। नियोजन का ये स्पष्ट मत है कि यदि इसके द्वारा रोजगार के सुअवसरों में वृद्धि नहीं होती तो इससे न तो देश की समृद्धि होगी और न लोगों का असन्तोष कम होगा।

आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता नियोजन का बहुत ही महत्वपूर्ण पक्ष है और इस लक्ष्य को प्राप्त करने में भारतवर्ष चौथी पंचवर्षीय योजना से ही विशेष कार्यक्रम संचालित किया गया था। उदाहरणार्थ पी एल 480 के अन्तर्गत खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता को महत्व दिया गया था और इस बात का प्रयास किया गया था कि खाद्यान्न का कम से कम आयात किया जाये। पांचवीं, छठवीं, सातवीं और आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं में भी इस बात पर विशेष बल दिया गया था कि इस तरह के कार्यक्रम बनाये जायें जिससे खाद्यानों में साथ ही साथ खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता बढ़े। सब कुछ के बावजूद अभी भी वह आत्मनिर्भरता नहीं आ पायी है जिसकी अपेक्षा की जाती है।

नियोजन के अन्तर्गत इस बात की भी व्यवस्था की गयी है कि देश के विभिन्न प्रभागों को आधुनिकीकृत किया जाये और इसके अन्तर्गत विशेष रूप से कृषि एवं औद्योगिक प्रभाग को आधुनिक बनाने का प्रयास करना चाहिए। चौथी पंचवर्षीय योजना से ही देश के कृषि प्रभाग को विविध प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से आधुनिकीकृत करने का प्रयास किया गया और इसी के अन्तर्गत कृषि को आधुनिकीकृत करने के लिए 'हरित क्रान्ति' को महत्व प्रदान किया गया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अधिकाधिक लाभ बड़े किसानों को तो हुआ, परन्तु छोटे किसान बहुत अधिक लाभान्वित नहीं हो सके। आधुनिकीकरण से यहाँ अभिप्राय क्रिया-कलापों में संरचनात्मक एवं संस्थागत परिवर्तनों से है जो अर्थव्यवस्था को प्रगतिमूलक बनाने का प्रयास करते हैं। इसके अन्तर्गत यह व्यवस्था की जाती है कि विविध प्रकार के औद्योगिक प्रभागों एवं संगठनों को आधुनिक प्राविधिकी से सुसज्जित किया जाये और इस बात का प्रयास किया जाये कि आधुनिकीकरण के उद्देश्यों एवं बेरोजगारी एवं निर्धनता को दूर करने के उद्देश्यों में टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो। भारत जैसे विकासोन्मुख देश में जनसंख्या आधिक्य की समस्या एक जटिल समस्या है इससे सहज में छुटकारा प्राप्त करना अगर असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है, अत: इस बात का प्रयास किया जाता है कि नियोजन के अन्तर्गत लोगों को अधिक से अधिक रोजगार के अवसर प्रदान किये जाये तो दूसरी ओर इस बात का भी प्रयास है कि औद्योगिक केन्द्रों को किसी प्रकार भी आधुनिक प्राविधिक से वंचित न किया जाये । अत: नियोजन की प्रक्रिया में इस बात का प्रयास होता है कि अधिक से अधिक विभिन्न प्रभागों के बीच में सन्तुलन बना रहे।

क्षेत्रीय विषमता एवं अर्थव्यवस्था में असन्तुलन को दूर करना नियोजन का केन्द्रीय बिन्दु रहा है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इस बात का प्रयास रहा है कि उन्हें दूर किया जाये। क्षेत्रीय विकास तभी सम्भव है जब सभी क्षेत्रों का विकास प्राकृतिक एवं मानवीय स्रोतों का शोषण करते हुए किया जाये। प्रति व्यक्ति के आय को विकसित करते हुए लोगों के जीवन स्तर में वृद्धि नियोजन का प्रतिपाक्ष्य विषय रहा है। छठवीं पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय

विषमता को दूर करते हुए विकास के मार्ग को प्रशस्त करने का प्रयास किया गया और इस बात का विशेष बल दिया गया कि देश के सभी क्षेत्रों को प्राविधिकीय लाभ प्राप्त हो। इस प्रकार नियोजन विषमताओं को दूर करने के साथ ही साथ औद्योगीकरण की प्रक्रिया को तीव्र करते हुए पुनर्वास एवं विविध प्रकार के संरचनात्मक सुविधाओं को प्रदान करने का प्रयास करता है।

## 8.4 विकेन्द्रीकृत नियोजन को प्रमुखता

नियोजन के सन्दर्भ में यह मत है कि नियोजन विकेन्द्रीकृत हो अर्थात् जनपद, उपप्रखण्ड, विकास खण्ड एवं ग्राम स्तर पर इनका क्रियान्वयन होना चाहिए। इस प्रक्रिया से लोगों की सहभागिता सुनिश्चित हो सकती है और प्रत्येक स्तर पर व्यक्ति अपने भागीदारी के महत्व को समझ सकता है। भारतवर्ष में इस प्रकार का नियोजन सातवीं पंचवर्षीय योजना में कार्यान्वित हुआ। इसके अन्तर्गत इस लक्ष्य को विशेष प्रमुखता दी जाती है कि नियोजन का सही निष्पादन शीर्ष से नहीं वरन नीचे से होना चाहिए। इसका अभिप्राय यह है कि इसके द्वारा साधारण स्तर के लोगों को भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। इसके अन्तर्गत जनपद, उपखण्ड, विकास खण्ड एवं ग्राम स्तर पर नियोजन के महत्व को समझा जा सकता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि किस प्रकार लोगों को अधिक से अधिक आकर्षित किया जाय।

नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत ये हैं कि यथार्थवादी हो। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि स्थानीय स्तर पर उपलब्ध स्रोतों, स्थानीय कुशलता, मानवशान्ति एवं लोगों के मांग के बीच अच्छा समन्वय हो। नियोजन की प्रकृति कुछ इस प्रकार की हो कि परिवर्तित स्थानीय दशाओं में समायोजन किया जा सके। यदि नियोजन स्थानीय स्तर के लोगों के आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम है तो वह नियोजन ज्यादा सार्थक हो सकता है। नियोजन इस बात पर भी महत्व देता है कि स्थानीय लोगों के सहयोगिता को अधिक से अधिक विकसित किया जाये। यह तभी सम्भव है जब विभिन्न स्थानीय योजनाओं एवं कार्यक्रमों को महत्व दिया जाये। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार नियोजन की सार्थकता तक है जब स्रोतों का कम से कम दुरूपयोग हो। अगर ऐसा नहीं है तो इस प्रकार के नियोजन को बहुत महत्व नहीं दिया जा सकता।

नियोजन के सन्दर्भ में यह मत प्रचलित है कि नियोजन सामाजिक सेवाओं को अपने अन्तर्गत समाहित करते हुए स्वास्थ्य, पोषाहार, पेयजल शिक्षा आदि में अधिकाधिक और प्रभावोत्पादक कार्यक्रमों को लागू करे जिससे विभिन्न वर्गों के लोगों को अपने दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायता प्राप्त हो। अगर ऐसा सम्भव नहीं हो सकता। इस प्रकार ऐसे स्रोतों को जो सक्षम नहीं है जिनका उपयोग प्रभावोत्पादक नियंत्रण के अन्तर्गत महत्वपूर्ण नहीं है ऐसी स्थिति में उस प्रकार के स्रोतों का प्रयोग न करते हुए उन्हें जनसामान्य के हितों का ध्यान में रखते हुए बंद कर देना चाहिए।

भारतीय पटभूमि में नियोजन आर्थिक विकास के लिए वैकल्पिक योजनाओं का निर्माण करने में बहुत सफल नहीं रहा है। योजनाओं के निर्माण एवं उसके कार्यान्वयन में साधारणतया बहुत

अन्तर पाया जाता है यह अन्तराल जितना अधिक होता है परिवर्तित परिस्थितियों में योजना की सफलता भी उतनी ही सन्देहप्रद होती जाती है। भारतीय पटभूमि में भौतिक एवं वित्तीय साधनों में साधारणतया अन्तर पाया जाता है। इनके बीच में सन्तुलन बनाये रखने का प्रयास साधारणतया नहीं नहीं किया जाता जो कि नियोजन के लिए आवश्यक है। अत: नियोजन के सन्दर्भ में यह स्पष्ट मत है कि यह ऊपर से नियोजन पद्धति को स्वीकार न करते हुए नीचे से नियोजन स्वीकार करना चाहिए। इस प्रकार नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत बहुत स्पष्ट है और इसके अन्तर्गत इस बात पर विशेष महत्व दिया गया है कि नियोजन सैद्धान्तिक आधारशिला की तुलना में व्यावहारिक आधारशिला को अधिक महत्व प्रदान करना चाहिए कि जनसहयोग और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का क्रमिक विकास हो। यदि नियोजन निजी स्वार्थ की अपेक्षाकृत सभी वर्गों के हितों को महत्व देगा तो वह विशेष रूप से लाभप्रद प्रमाणित हो सकता है। अत: इसके अन्तर्गत आर्थिक व्यवस्था को संयमित बनाने स्थिरता प्राप्त करने तथा तीव्रगति से आर्थिक विकास को प्रश्रय प्रदान किया जाता है। भारतीय मत इस बात को भी बल देता है कि नियोजन लोगों के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता का हनन न करें। यह बात सैद्धान्तिक रूप से तो सम्भव हो पाता है, परन्तु व्यावहारिक रूप में इसका सही स्वरूप कई प्रकार के प्रश्नों को उत्पन्न करता है जिसका सामान्य स्तर पर उत्तर प्राप्त करना कठिन है। भारतीय सन्दर्भ में नियोजन सिर्फ आर्थिक संवृद्धि को महत्व नहीं देता वरन् इसके अन्तर्गत इस बात पर विशेष महत्व दिया जाता है कि नियोजन किस प्रकार सामाजिक आयामों को महत्व प्रदान करते हुए जीवन की गुणवत्ता में सुधार सुनिश्चित करें। नियोजन अपने लक्ष्यों के प्रति लोगों में उत्साह, विश्वास आदि को जागृत करने में सफल नहीं हो पाता तो इसका तात्पर्य है कि अभी भी लोगों में नियोजन और उसके लक्ष्यों के प्रति वह जागरुकता नहीं उत्पन्न हो पायी है जिसकी अपेक्षा है । अत: नियोजन के प्रति भारतीय मत बहुत ही गत्यात्मक है और इसके अन्तर्गत किसी स्तर पर गुणात्मकता और व्यावहारिकता से समझौता नहीं किया जा सकता।

## 8.4 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. P.K. Dhar Indian economy Its growing dimensions Kalyani Publishers, New Delhi, 2000.

## 8.5 सम्बन्धित प्रश्न

### दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत को स्पष्ट कीजिए?
2. भारतीय पटभूमि में नियोजन के प्रासंगिकता का विश्लेषण कीजिए?
3. नियोजन के प्रति भारतीय मत को स्पष्ट करते हुए उसके कमियों को स्पष्ट कीजिए?
4. नियोजन सम्बन्धी भारतीय मत का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए?

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. नियोजन के सन्दर्भ में भारतीय मत क्या है?

2. भारत में नियोजन की रणनीति का प्रारम्भ कब होता है?

3. नियोजन के मुख्य उद्देश्य क्या हैं?

4. भारतीय सन्दर्भ में नियोजन की भूमिका क्या है?

## वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. क्या नियोजन के प्रति भारतीय मत सामुदायिक आवश्यकता को महत्व प्रदान करता है?
हाँ/नहीं

**उत्तर** हाँ

2 भारतीय पटभूमि में नियोजन के अन्तर्गत लालफीताशाही को :

क) प्रश्रय मिलता है

ख) मूल रूप से समाप्त हो जाता है।

ग) अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

घ) संगठनात्मक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण विशेषता है

**उत्तर** क

# NOTES

# NOTES

# NOTES

खण्ड

# 3

## कल्याणकारी रा

इकाई 9

कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का उदभव एवं विकास

इकाई 10

अनुसूचित जनजाति : समस्याएँ एवं कल्याणकारी योजनाएं

इकाई 11

अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्ग : समस्याए एव कल्याणकारी योजनाएं

इकाई 12

कमजोर वर्ग : महिला एवं बाल विकास : समस्याए एवं कल्याणकारी योजनाएं

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## परामर्श समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो. केदार नाथ सिंह यादव,** कुलपति | अध्यक्ष |
| **डॉ. हरीश चन्द्र जायसवाल,** वरिष्ठ परामर्शदाता | कार्यक्रम संयोजक |
| **प्रो के.पी. सिंह,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. अर्जुन तिवारी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **प्रो. ए.एन. द्विवेदी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. रत्नाकर शुक्ल,** कुलसचिव | सचिव |

## विशेषज्ञ समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो० सी.एस. एस. ठाकुर**<br>आचार्य एवं अध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग<br>रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर | विषय विशेषज्ञ |
| **प्रो. जयकान्त तिवारी**<br>आचार्य समाजशास्त्र विभाग<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी | विषय विशेषज्ञ |
| **डॉ. मंजूलिका श्रीवास्तव**<br>रीडर, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली | दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञ |
| **प्रो. वी. के. पंत**<br>सेवा निवृत्त आचार्य एवं अध्यक्ष , समाज शास्त्र विभाग<br>(कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) लखनऊ | सम्पादक |

## MASY-06 : – *सामाजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य*

*लेखक मण्डल :*

| | | |
|---|---|---|
| **खण्ड एक :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड दो :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड तीन :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 4 इकाई |
| **खण्ड चार :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 2 इकाई |
| **खण्ड पाँच :** | **डॉ. अंशु केडिया,** लखनऊ | 2 इकाई |
| | **डॉ. जे.पी. मिश्र** , लखनऊ | 2 इकाई |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ. ए. के. सिंह, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जुलाई 2012
मुद्रक : नितिन प्रिन्टर्स, 1 पुराना कटरा, इलाहाबाद।

# खण्ड-3: खण्ड परिचय - कल्याणकारी राज्य

स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे देश के कर्णधारों एवं संविधान निर्माताओं ने भारत के संविधान में ''समाजवादी धर्म निरपेक्ष लोकतांत्रिक व्यवस्था'' की स्थापना के लिए आदर्श ढांच की संकल्पना की। यह संकल्पना स्वतंत्रता, समानता व मातृत्व के आदर्श पर आधारित थी। परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में अन्तर्निहित असमानता को कैसे समाप्त किया जाए एवं कैसे नयी व्यवस्था में सभी को क्षमता व योग्यता के आधार पर उपयुक्त स्थान मिल सके? इस प्रश्न ने नीति नियंताओं का ध्यान कमोजर वर्ग के विकास हेतु आकर्षित किया। समाज के कमजोर वर्गों के सच्चे अर्थ में न्याय मिल सके। इसी प्रेरणा ने कुछ संरक्षणवादी योजनाओं का समावेश कर संविधान की मूल भावना के अनुरूप उन्हें और अधिक मजबूत करने की आवश्यकता पर बल दिया गया।

शाब्दिक अर्थ में निर्बल वर्ग अंग्रेजी शब्द वीकर सेक्शन (Weaker Section) का हिन्दी अनुवाद है। कन्साइज आक्सफोर्ड डिक्शनरी (Concise Oxford Dictionary) के अनुसार वीकर शब्द का अर्थ है—

1. निर्बल शक्तिहीन, संख्या में कम होना, झुकने व पराजित होना।
2. असक्त, अस्वस्थ, प्रभावहीन, अस्थिर होना
3. संकल्प, पहल, लोभ संवरण का अभाव होना
4. तार्किक दृष्टि से अक्षम, अनिश्चित प्रकृति का होना।

सेक्शन (वर्ग) शब्द का अर्थ है सामाजिक संरचना में एक मानव समूह वर्ग, जो अन्य मानव समूहों या वर्गों से किसी न किसी प्रकार से भिन्नता रखता हो।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से कमजोर वर्ग सम्पन्नता और विपन्नता की सापेक्षिक अवधारणा है। इसके सृजन स्रोत सामाजिक संरचना में निहित होते हैं।

संवैधानिक दृष्टि से कमजोर वर्गों में अनुसूचित जातियां, जनजातियाँ, पिछड़े वर्ग, महिलाएँ आदि आते हैं। प्रस्तुत खण्ड भारतीय समाज के इन कमजोर वर्गों की समस्याओं ने इनके विकास हेतु अपनाए गये कल्याणकारी नीतियों पर आधारित हैं।

**पहली इकाई** का शीर्षक है 'कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का उदय एवं विकास'। इसमें कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट किया गया है। कल्याणकारी राज्य को प्रकृति, उत्पाती व विकास पर प्रकाश डालते हुए कल्याणकारी राज्य के कार्य एवं गुण-दोष का भी उल्लेख हुआ है। **इकाई दो** का शीर्षक है अनुसूचित जाति, समस्याएँ एवं कल्याणकारी योजनाएँ'। इस इकाई में 4 अनुसूचित जाति वे अर्थ एं स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। उनकी समस्याओं और वर्तमान में इनकी सामाजिक स्थिति का चित्रण किया गया है।

**तीसरी इकाई** का शीर्षक 'अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग : समस्याएँ एवं कल्याणकारी योजनाएँ'। इसमें अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्ग के अर्थ व स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। इनकी समस्याओं एवं कल्याणकारी योजनाओं पर प्रकाश डाला गया है। **इकाई चार** का शीर्षक है 'कमजोर वर्ग : महिला व बाल विकास : समस्याएँ एवं प्रावधान'। इसमें कमजोर वर्ग, महिला एवं बाल विकास की समस्याओं और संवैधानिक प्रावधान पर प्रकाश डाला गया है।

# इकाई 9 कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का उदय एवं विकास

## इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 अर्थ व परिभाषा
9.3 कल्याणकारी राज्य की प्रकृति
9.4 कल्याणकारी राज्य की उत्पत्ति व विकास
(अ) सैद्धान्तिक विकास
(ब) व्यवहारिक विकास
9.5 कल्याणकारी राज्य के कार्य
9.6 कल्याणकारी राज्य के गुण
9.7 कल्याणकारी राज्य के दोष
9.8 सारांश
9.9 संदर्भ सूची
9.10. प्रश्न उत्तर

## 9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कल्याणकारी राज्य पर आधारित है। इस इकाई के माध्यम से हम कल्याणकारी राज्य के अर्थ को समझ सकेंगे साथ ही विभिन्न विचारकों ने इसे किस रूप में परिभाषित किया है, इसे भी जान सकेंगे।

इसकी उत्पत्ति आकस्मिक घटना न होकर क्रमिक विलास आधारित है। अत: वे क्या कारक हैं, जो इसकी उत्पत्ति में सहायक हैं, का भी विस्तृत रूप से अध्ययन कर सकेंगे। अन्त में इस राज्य व्यवस्था के निहित गुण व दोषों से भी अवगत हो सकेंगे।

## 9.1 प्रस्तावना

कल्याणकारी राज्य की भावना नयी नहीं है, तथापि जिन अर्थों में वर्तमान में 'कल्याणकारी राज्य' का प्रयोग किया जा रहा है, उसका प्रारम्भ सर्वप्रथम ब्रिटेन में सन् 1948 में किया गया। आधुनिक समय में कल्याणकारी राज्य की अवधारणा अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। जिसका प्रमुख कारण इसके आर्थिक, सामाजिक व व्यवहारिक लाभ हैं। यह एक मध्यम मार्गीय अवधारणा है, जो अप्रतिबन्धित आर्थिक व्यक्तिवाद के दोषों तथा अप्रतिबन्धित समूहवाद की निरंकुशता को रोकने के लिए विकसित हुयी। इस प्रकार आधुनिक समय में कल्याणकारी राज्य को एक ओर पूँजीवाद तथा दूसरी ओर साम्यवाद की तुलना में कहीं अधिक उचित विकल्प के रूप में स्वीकृत किया जा रहा है।

## 9.2 कल्याणकारी राज्य का अर्थ व परिभाषाएँ

प्रारम्भ के कल्याण शब्द का अर्थ निराश्रित व अभावग्रस्त लोगों की समस्याओं को कम कर उसे सहायता पहुँचाने से लिया जाता था, परन्तु वर्तमान में कल्याणकारी क्रियाकलापों में सुरक्षात्मक गतिविधियाँ जैसे—सामाजिक बीमा आदि को भी सम्मिलित कर लेने से वह शब्द स्वयं में गतिशील हो गया है। अत: कल्याणकारी राज्य की परिभाषा देना एक कठिन कार्य है।

**आक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोष के अनुसार**—"कल्याणकारी राज्य एक ऐसी राजनैतिक प्रणाली है, जो इस प्रकार सुसंगठित होती है, जिससे समुदाय के हर सदस्य को उसके उचित भरण पोषण का आश्वासन मिलता है और जिसमें सभी व्यक्तियों के लिए अधिकाधिक यथासम्भव लाभदायक दशाओं की व्यवस्था की जाती है।"

**श्री हाबमैन के अनुसार**—"कल्याणकारी राज्य एक ओर साम्यवाद की दो पराकाष्ठाओं और दूसरी ओर उच्छृंखल व्यक्तिवाद के मध्य एक तरह का समझौता है और इस तरह अपनी सभी अपूर्णताओं के होते हुए भी यह किसी मानवीय तथा प्रगतिशील समाज के लिए एक आदर्श स्थापित करता है। यह वैयक्तिक उद्यम के उत्प्रेरणों को बिना किसी प्रकार की बाधा पहुँचाए जीवन निर्वाह के एक न्यूनतम स्तर को बनाये रखने का आश्वासन देता है एवं आर्थिक समानता स्थापित करने की भावना रखता है। इसमें आर्थिक असुरक्षा व निराश्रितता के समय लोगों को पर्याप्त सहायता मिलने का आश्वासन बना रहता है।"

**मारिस ब्रूस के अनुसार**—कल्याणकारी राज्य समाजवादी या साम्यवादी राज्य के व्यापकतर राजनैतिक एवं सामाजिक नियंत्रण के बिना व्यक्तिगत और सामूहिक कल्याण के निश्चित न्यूनतम स्तरों के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था की ओर संकेत करता है। **एम० पी० ओ० पर्सेल** के अनुसार कल्याणकारी राज्य में निम्न तत्वों की अनिवार्यता होती है—

1. सामाजिक सुरक्षा की योजना
2. राजकीय निशुल्क सेवाओं की व्यवस्था
3. सभी के लिए रोजगार की योजना
4. करों का इस प्रका आरोपित किया जाना कि अधिक से अधिक आर्थिक समानता प्राप्त की जा सके।
5. उद्योगों का अधिकाधिक जनस्वामित्व

## 9.3 कल्याणकारी राज्य की प्रकृति

सामान्यतया निम्न प्रकार के राज्य प्रचलन में रहे हैं या वर्तमान में हैं - अहस्तक्षेपी राज्य, समाजसेवी राज्य, युद्ध राज्य, पुलिस राज्य, समाजवादी राज्य, साम्यवादी राज्य, समग्रवादी राज्य इत्यादि।

उपरोक्त सभी में सर्वाधिक स्वीकृत राज्य व्यवस्था कल्याणकारी राज्य ही है। कल्याणकारी राज्य में जनतांत्रिक प्रणाली की सरकार होती है और लोगों के मध्य समानता के सिद्धान्त पर विश्वास करते हुए स्वाधीनता और स्वतंत्रता भी प्रदत्त रहती है। इसे एक सकारात्मक राज्य

व्यवस्था भी कहा जाता है क्योंकि यह शान्ति और व्यवस्था की स्थापना और बाहरी आक्रमण से सुरक्षा जैसे नकारात्मक कार्यों के साथ-साथ अनेक सकारात्मक कार्य भी करता है । जैसे सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक सेवा व सभी व्यक्तियों के लिए स्वच्छ एवं सभ्य जीवनस्तर का प्रबन्ध सुनिश्चित करना आदि।

पूंजीवादी नीतियों के समर्थक अहस्तक्षेप नीति (सरकार के कम से कम हस्तक्षेप) के समर्थक थे। समाजशास्त्री स्पेंसर का भी मानना था कि सबसे अच्छी सरकार वह है, जो सबसे कम नियंत्रण लागू करती है। लगभग यही विचार डब्ल्यू० जी० समनर के भी थे।

लेसेले (Lasselle) ने सरकारी हस्तक्षेप के विरुद्ध व्यंग्य करते हुए इसे 'पहरेदार राज्य' कहा था। परन्तु कल्याणकारी राज्य आर्थिक व्यक्तिवादी नीति तथा साम्यवादी नीति के बीच के मार्ग का अनुसरण करता है। इस प्रकार यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा सरकारी सुरक्षा व सेवा समन्वयोन्मुखी नीति है।

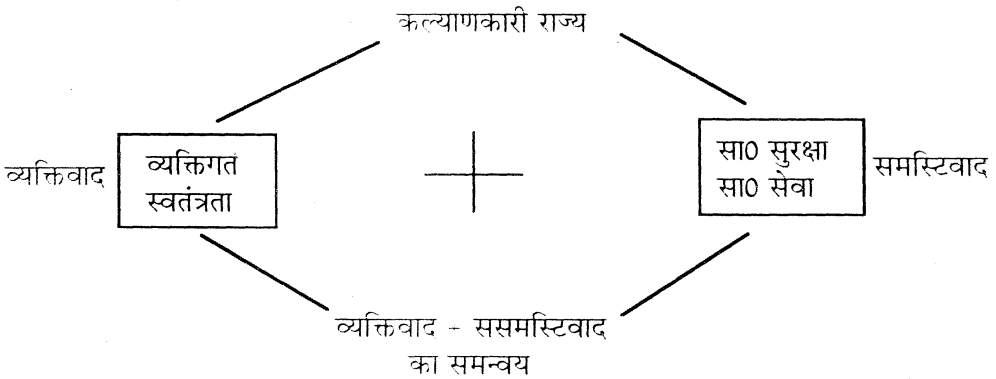


टी० एच० मार्शल ने कल्याणकारी राज्य को अर्धउदारतावाद तथा अर्धसमाजवाद के समन्वय के रूप में प्रस्तुत किया है। लगभग यही विचार हॉबमैन के हैं। इस प्रकार इसे पूंजीवाद और साम्यवाद के अवगुण से बचने के एक माध्यम के रूप में स्वीकृत किया गया है।

## 9.4 कल्याणकारी राज्य की उत्पत्ति

कल्याणकारी राज्य का उद्भव आकस्मिक न होकर क्रमिक विकास आधारित प्रक्रिया है। जैसा कि **हॉबमैन** का मानना है कि "यह कल्पना करना गलत होगा कि कल्याणकारी राज्य दैवीय भोजन की भांति स्वर्ग से लोगों के मुख में टपकी हुयी कोई वस्तु है वरन् यह ब्रिटिश राजनीतिक प्रतिभाओं का परिणाम है, जो एक ऐसे वृक्ष पर पल्लवित होता रहा, जिसका रोपण साढ़े चार शताब्दि पूर्व किया गया था।" कल्याणकारी राज्य की उत्पत्ति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी रहे हैं। जैसे—आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व प्राविधिक इत्यादि। जैसा कि प्रोफेसर राबसन का कथन है कि "कल्याणकारी राज्य की उत्पत्ति में विभिन्न स्रोतों का योगदान है। फ्रांस की क्रान्ति के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता, समानता तथा भातृत्व भावना के तत्व सामने आए। 19वीं शताब्दी के आठवें और नौवें दशकों में इंग्लैण्ड में किए जाने वाले सामाजिक सर्वेक्षणों ने कल्याणकारी राज्य के उद्भव के लिए प्रेरणा की। उपयोगितावादी दार्शनिकों जैसे मिल तथा बेन्थम ने अपने दर्शन में अधिक से अधिक जनसाधारण के कल्याण

पर बल दिया। समाजवाद विशेषकर फेबियन समाजवाद से मूल उद्योगों एवं अनिवार्य सेवाओं के सार्वजनिक स्वामित्व के सिद्धान्त को मान्यता मिली। जॉन मेनार्ड, कीन्स तथा निर्धन कानून आयोग के अल्प संख्यक प्रतिवेदन ने जन बेरोजगारी से बचने के सिद्धान्तों को जन्म दिया। बिस्मार्क एवं बेवरिज ने सामाजिक बीमा तथा सामाजिक सुरक्षा की धारणाएं समाज को दी। सिडनी व बीट्राइस वेब ने औद्योगिक जनतंत्र व श्रमिक संघों के महत्व के सम्बन्ध में जानकारी देकर कल्याणकारी राज्य की उत्पत्ति में सहयोग दिया।

प्राचीन काल में राज्य—प्रारम्भिक काल में अर्थव्यवस्था पर सामान्यत: राज्य का हस्तक्षेप होता था। जैसा कि कैम्बलिस रॉलिन, अरस्तू को उद्धृत करते हुए लिखते हैं कि उस समय राज्य का स्वरूप मुख्यत: एक राजनीतिक संगठन मात्र नहीं था। सम्पत्ति सुरक्षा और सामान्य सुरक्षा में राजकीय योगदान की अपेक्षा राज्य का निहित नैतिक उद्देश्य कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।

कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के विकास के परिप्रेक्ष्य में हम सैद्धान्तिक वाद-विवाद व परिस्थितिजन्य व्यवहारिक घटनाओं व समस्याओं को ध्यान में रखेंगे।

**( अ ) सैद्धान्तिक विकास—राज्य की व्यवसायोन्मुख विचारधारा**—15वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पुनर्जागरण, सुधार तथा अमेरिका की खोज ने यूरोप में तीव्र परिवर्तन उत्पन्न किये। विकेन्द्रित राज्य प्रणाली के अन्तर्गत प्रभावशाली शासन व्यवस्था ने जन्म लिया। राष्ट्रीय भावना तथा स्पर्धा उत्पन्न हुयी। मैकियावेली ने राजनीति में निरंकुशता को प्रेरित किया एवं बोडिन ने राज्य की सर्वोच्च शक्ति को महत्व दिया। राज्यों द्वारा अधिनाधिक शक्तिशाली होने की भावना के कारण धन का महत्व बढ़ता गया और जनसमुदाय ने भी धन के पीछे दौड़ना आवश्यक समझा। राज्य को अधिकाधिक आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से अर्थशास्त्रियों द्वारा सिद्धान्तों का निर्माण किया जाने लगा। प्रत्येक क्षेत्र में राजकीय हस्तक्षेप को वाणिज्यवादियों ने उचित ठहराया एवं उनका यह भी मानना था कि यदि राज्य यह समझता है कि किसी कार्य से जनकल्याण में वृद्धि होगी, तो उस कार्य को हाथ में ले सकता है।

प्रोफेसर हेने का मानना है कि वाणिज्यवादी साक्य आर्थिक जीवन में राज्य अथवा शासक द्वारा अधिक निर्देशित होते थे, किन्तु राज्य के पास आर्थिक जीवन को नियंत्रित करने अथवा औद्योगिक संस्थाओं को चलाने की शक्ति या संगठन नहीं था। शासकीय नियम भी वैयक्तिक उद्यम को बढ़ाने, प्रेरित करने और निर्देशित करने वाले थे। इस प्रकार तत्कालीन राज्य व्यवस्था में संगठनों का निर्माण निहित उद्देश्यों तथा विशेषाधिकारों को बनाए रखने के लिए किया जाता था और इसीलिए उनका स्वरूप कहीं अधिक नियंत्रित तथा एकाधिकारिक रहता था।

**( ब ) अहस्तक्षेपी नीति**—फ्रांसीसी विचारक क्वेस्ने, टर्गोट विशेषकर एडम स्मिथ ने प्राकृतिक व्यवस्था में अपना विश्वास व्यक्त करते हुए वाणिज्य वादी सिद्धान्त की तीव्र आलोचना की। इस नीति के समर्थकों के अनुसार सरकारी नियंत्रण मनुष्य के स्वभाव अथवा प्राकृतिक सामाजिक व्यवस्था के प्रतिकूल है। प्रसिद्ध राजनीतिक दार्शनिक, जॉन लॉक के अनुसार मनुष्य को अपने उन अधिकारों का प्रयोग करने का अधिकार था, जो उसे जन्म से ही उपलब्ध थे। माल्थस व रिकार्डो भी अहस्तक्षेपी नीति के समर्थक थे। माल्थस के अनुसार

निर्धन लोगों को निर्धनता हेतु राज्य उत्तरदायी नहीं है वरन् व्यक्ति स्वयं ही जिम्मेदार है। इसी तरह मजदूरी को बाजार की निष्पक्ष व मुक्त प्रतिस्पर्धा में छोड़ने की नीति का समर्थन करते हुए रिकार्डो ने मजदूरी के लौह निमय का प्रतिपादन किया।

**( स ) उपयोगितावादी विचार**—जेरेमी बेंथम के अनुसार मनुष्य द्वारा किए गये कार्य सुख-दुख के आकलन के पश्चात ही सम्पन्न किए जाते हैं। व्यक्तियों के हित प्राथमिक महत्व रखते हैं, जबकि समुदाय के द्वैतीयक, क्योंकि समुदाय व्यक्तियों के समुच्चय के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

**अहस्तक्षेपी नीति की आलोचना**—औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप श्रमिकों की गिरती हुयी दशा एवं श्रमिक और नियोक्ता के बीच बढ़ती खाई ने विचारकों की अहस्तक्षेपी नीति की आलोचना करने के लिए प्रेरित किया। इस नीति की आलोचना करने वालों में **रे तथा सिसमों डी** प्रमुख थे। **रे के अनुसार** राष्ट्रीय तथा व्यक्तिगत हितों के मध्य कोई स्वाभाविक तादात्म्य नहीं होता। अत: राष्ट्रीय धन की वृद्धि अपने लाभ के लिए उद्यत एक व्यक्ति के द्वारा नहीं की जाती। अपितु एक विधायन ही धन वृद्धि के लिए कार्य कर सकता है। राष्ट्रीय हित की प्राप्ति के लिए शिशु उद्योगों को प्राथमिकता देते हुए पारितोषिक, अनुग्रह आदि माध्यम अपनाए जाने चाहिए।

सिसमोंडी भी सरकारी हस्तक्षेप के पक्षपाती थे। आपका मानना था कि उस प्रगति के लिए व्यक्तियों का बलिदान होने से बचाया जाए, जिससे उन्हें कोई लाभ न होता हो। साथ ही श्रमिकों की कार्य की दशाओं, वेतन आदि के सुधार हेतु भी नियोक्ता उत्तरदायी है।

**समाजवादी विचारक**—सेंट साइमन, फोरियर, ब्लाक व प्राउडन प्रमुख समाजवादी विचारक थेश सेंट साइमन ने निर्बलों को शोषण से बचाने के लिए अभिजात वर्ग के विशेषाधिकारों को समाप्त करने का पुरजोर समर्थन किया। चार्ल्स फोरियर स्वार्थों के संघर्ष को समाप्त करने के लिए सहकारिता के समाजवाद के पक्षधर थे। राबर्ट ओवेन ने भी सहकारी संगठनों और साम्यवादी स्वरूपात्मक ढांचे का किसी न किसी रूप में समर्थन किया।

लोइस ब्लाक की धारणा थी कि प्रतिस्पर्धा को सहभागिता द्वारा समाप्त किया जाना चाहिए। इस हेतु राज्यों को निर्धनों का बैंकर अभिकर्ता बनने की आवश्यकता है।

**वैज्ञानिक समाजवाद**--प्रारम्भिक समाजवाद का स्वरूप अधिकांशत: काल्पनिक एवं आदर्शात्मक था। इन समाजवादियों को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। राष्ट्रीय समाजवादी और अन्तर्राष्ट्रीय समाजवादी कार्ल मार्क्स के समय समाजवाद का कार्यक्षेत्र सर्वदेशीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का हो गया था।

कार्ल मार्क्स के समय समाजवाद ने एक विशुद्ध भौतिक वादी स्वरूप धारण किया एवं हेगेल के द्वन्द्वात्मक सिद्धान्त को और सामाजिक उद्विकास को मार्क्स ने भौतिक एवं आर्थिक शक्तियों के रूप में प्रस्तुत किया। मार्क्स वर्ग विहीन समाज के समर्थक थे। आपका मानना था कि वर्ग संघर्ष जो प्रत्येक समाज में अनिवार्यत: पाया जाता है। इसकी परिणति वर्ग विहीन समाज के रूप में होगी।

समाजवादियों की आलोचना के परिणामस्वरूप सरकार के कार्य में आमूल चूल परिवर्तन चाहने वालों की संख्या में वृद्धि हुयी। फेबियनवादी क्रमिक सुधारों और भूमि तथा पूँजी दोनों

में ही सरकार द्वारा अनार्जित वृद्धि की व्यवस्था के पक्ष में थे। टायन बी ने भी सामाजिक सुधारों का समर्थन किया और उसका विश्वास था कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था (व्यक्तिगत सम्पत्ति व्यवस्था) द्वारा भी समाज में सुधार किया जा सकता है। ग्रीन ने भी कुछ विषयों में सरकारी हस्तक्षेप को वैध ठहराया। अल्फ्रेड मार्शल के समय तक आर्थिक जीवन की प्रविधियों में भी अनेक परिवर्तन सामने आए। मशीनों के अभूतपूर्व प्रयोग, व्यापार चक्रों साख, विश्वासों एवं लिखित पत्रों के प्रयोग पर आधारित बैंकिंग एवं आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप सरकार की भूमिका में परिवर्तन आए। अत: यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया कि क्यों सरकारी हस्तक्षेप उपयोगी था।

**प्रथम विश्व युद्ध के समय व पश्चात् के विकास**—प्रथम विश्व युद्ध काल में ऊँचे मूल्यों और लाभों को नियंत्रित करने के लिए सरकार द्वारा कुछ नियंत्रणों को लागू किया गया। शीघ्र ही **प्रो० पीगू** ने जनकल्याण में वृद्धि करने वाले अपने कल्याणकारी अर्थशास्त्र को प्रस्तुत किया।

प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त आर्थिक नीति के क्षेत्र में कुछ नवीन विकास हुए। जैसे—अपूर्ण प्रतिस्पर्धा, एकाधिकारिक प्रतिस्पर्धा, व्यवसाय चक्र सिद्धान्त इत्यादि।

**जे० एम० कौन्स** ने पुराने अर्थशास्त्रियों की धारणा थी कि आर्थिक व्यवस्था की प्रवृत्ति स्वत: कुछ प्रदत्त साधनों से पूर्ण रोजगार उत्पन्न करने की होती है का विरोध किया। पूर्ण रोजगार के लिए उन्होंने निम्नांकित बातों को आवश्यक बताया (1) उपभोग प्रवृत्ति का बढ़ाना। (2) लगान-उपजीवी वर्ग को समाप्त करना। (3) विनियोजन का समाजीकरण। इस प्रकार उनके लेखों से अहस्तक्षेपी नीति को भारी आघात लगा और संकट को दूर करने अथवा पूर्ण रोजगार लाने के लिए सरकार द्वारा कुछ हस्तक्षेप अनिवार्य माना गया। देश में पूर्ण रोजगार देना 'कल्याणकारी राज्य' का अतिरिक्त कार्य बन गया।

**(2) व्यावहारिक विकास—प्रो० राबसन** के अनुसार इंग्लैण्ड में दो प्रकार की सेवाएँ उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में विकसित हुयी। उनमें एक प्रकार की सेवा जन स्वास्थ्य शिक्षा, कारखाना नियम तथा ऐसे ही अन्य विषयों के सम्बन्ध में प्रारम्भ की गयी थी। दूसरी प्रकार की सेवाएँ अकिंचनता से मुक्ति दिलाने के सम्बन्ध में शुरू की गयी।

**एम० पर्सेल** के अनुसार इंग्लैण्ड में निर्धन कल्याण कानून 1601 का स्वीकृत होना ही कल्याणकारी राज्य की स्थापना का प्रारम्भ कहा जा सकता है। सन् 1832, 1867 व 1884 के सुधार कानूनों के प्रावधानों के अन्तर्गत मताधिकार विस्तार के कारण शक्ति संतुलन अल्पमतों (अभिजात वर्ग) के हाथ से बहुसंख्यकों के हाथ आ गया। **चैंम्बरलेन** ने नगर समाजवाद का अनुसरण करते हुए गैस कार्यशालाओं जल-कल और एक मल-मूत्र फार्म खरीदा और गंदी बस्तियों को ध्वस्त करके उसके स्थान पर उपयुक्त मकानों का निर्माण करवाया। नि:शुल्क पुस्तकालयों व नगर पालिका बैंक की स्थापना करायी।

श्रम संघों को महत्व मिलने से उन्होंने उन वैधानिक और राजनीतिक बाधाओं पर विजय प्राप्त कर ली, जो उनकी राष्ट्रव्यापी स्वीकृति और अनुमोदन में बाधक थी। श्रमिक वर्ग में सहकारिता विकसित हुयी। 1909 के निर्धन कानून आयोग के प्रतिवेदन ने बाद के वर्षों में सामाजिक विधान के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

कल्याणकारी राज्य के उद्भव के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण योग निर्धनता के कारकों की खोज करने वाले सामाजिक अनुसंधानों ने दिया। उन अध्ययनों में चार्ल्स बूथ, राउनट्री व विलियम बेवरिज के अध्ययनों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। 20वीं शताब्दी के चौथे दशक में इंग्लैण्ड में कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए कुछ कानून बनाए गये, जिन्हें कल्याणकारी राज्य के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में माना गया। इंग्लैण्ड में 1948 में कल्याणकारी राज्य की स्थापना पश्चात् जर्मनी तथा यूरोप के दूसरे देशों में भी लगभग इंग्लैण्ड के समान परिस्थितियां होने के कारण कल्याणकारी राज्य की स्थापना की गयी।

## 9.5 कल्याणकारी राज्य के कार्य

प्रोफेसर माइडल का मानना है कि कल्याणकारी राज्य अभी तक कहीं पूर्णता नहीं प्राप्त कर सकता है, यह एक निरन्तर प्रक्रिया है, जो सदैव आगे बढ़ रही है। श्री पर्सेल का मानना है कि कल्याणकारी राज्य की स्पष्ट परिभाषा देना कठिन कार्य है। इसका साधारणतया प्रयोग एक ऐसे समाज के लिए किया जाता है, जिनमें लगभग निम्न सभी लक्षण विद्यमान रहते हैं—जीवन के जोखिमों के विरुद्ध सामान्य सुरक्षा की व्यापक योजना, नि:शुल्क सेवाओं का प्रावधान, पूर्ण रोजगार की अवस्था को प्राप्त करना, करारोपण की ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित करना कि समाज में अधिकाधिक आर्थिक समानता स्थापित की जा सके एवं उद्योगों में जन स्वामित्व का होना आदि। इस प्रकार कल्याणकारी राज्य देश व नागरिकों के लिए निम्न कार्य सम्पन्न करता है।

1. समाज में आय का पुनर्वितरण इस प्रकार किया जाए कि बहुसंख्यक जनसाधारण विशेषकर श्रमिकों तथा कमजोर वर्गों के लोगों के लिए जीवन के एक उच्चतर स्तर को प्राप्त किया जा सके।
2. नागरिकों के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी नि:शुल्क सेवाओं के साथ-साथ परिवार कल्याण एवं नियोजन के लिए भी नि:शुल्क सेवाओं का क्रियान्वयन।
3. नि:शुल्क शिक्षा के प्रबन्ध के साथ-साथ पूर्ण रोजगार की व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास।
4. जन साधारण की आवास सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उनके लिए सस्ते व सुविधाजनक निवास स्थानों का निर्माण।
5. निराश्रित, वृद्ध व्यक्तियों, स्त्रियों, बालकों तथा बालिकाओं हेतु अनेक सामाजिक सेवाओं की उपलब्धि।
6. सार्वजनिक स्थानों जैसे—सड़कों, पार्कों, सेतुओं, क्रीड़ास्थलों आदि का निर्माण।
7. बेरोजगारी तथा अन्य अनेक घटनाओं के कारण आय में व्यवधान उत्पन्न करने वाले तथा जीवन की दूसरी साधारण आपत्तियों के विरुद्ध सामाजिक सुरक्षा तथा सामाजिक बीमें का प्रबन्ध।
8. भाषाओं, संस्कृतियों, ललितकलाओं के विकास को प्रोत्साहन।
9. देश की सीमाओं के अन्दर शान्ति एवं व्यवस्था की स्थापना करने तथा बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा का प्रबन्ध।

## 9.6 कल्याणकारी राज्य के गुण

श्री पर्सेल के अनुसार कल्याणकारी राज्य के गुण निम्नलिखित हैं—

( अ ) **आर्थिक गुण**—आय व अवसरों के क्षेत्र में समता की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है। करारोपण इस प्रकार किये जाने का प्रयास किया जाता है कि अधिकाधिक आर्थिक समानता स्थापित की जा सके। न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण और उचित मजदूरी द्वारा आमदनी तथा अवसरों में अधिक समानता लाने का प्रयास किया जाता है। समुदाय के श्रम साधनों का उनकी अधिकतम क्षमता तक प्रयोग किए जाने हेतु पूर्ण रोजगार प्राप्ति का प्रयास करना किया जाता है।

( ब ) **राजनीतिक गुण**—नागरिकों में संतुष्टि की भावना का विकास होता है। पूंजीवाद और साम्यवाद के मध्य का मार्ग होने के कारण दोनों की ही विकृति से बचाव होता है। धन की गम्भीर विषमताओं से उत्पन्न शत्रुता एवं ईर्ष्या का स्थान सुरक्षा, अवसर तथा उन्नति की आशा ले लेती है। यह क्रान्तिकारी समाजवाद के विपरीत एक विकासवादी प्रक्रिया है।

( स ) **सामाजिक लाभ**—कल्याणकारी राज्य आयु, रोग, निराश्रितता, विकलांगता एवं बेकारी से उत्पन्न निर्धनता एवं आवश्यकता के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। निःशुल्क शिक्षा और छात्रवृत्ति के लिए प्रयास करता है। जनसाधारण में सामाजिक सुरक्षा की भावना का विकास करता है।

(द) नैतिक गुण - बाजार की कठोरता कम हो जाती है आय का अधिकार आवश्यकता और योग्यता के आधार पर निर्धारित होता है। मुक्त व्यापार की नीतियों को तिरस्कृत किया जाता है। श्रमिक शोषण का अस्तित्व समाप्त हो जाता है वस्तुओं पर एकाधिकार का हनन होता है।

## 9.7 कल्याणकारी राज्य के दोष

कल्याणकारी राज्य के अनेक दोष भी रहे हैं जिन्हें स्वयं उन विचारकों ने भी स्वीकार किया है। जो इसके समर्थक हैं।

कल्याणकारी राज्य सरकारी तंत्र पर अधिक भार और बल देता है। यह माना जाता है कि सरकार जितना अधिक अपना कार्यक्षेत्र बढ़ाएगी उतनी ही अधिक शान्ति व सुरक्षा लोगों में आती जाएगी। परिणाम यह होता है कि व्यक्ति कल्याणकारी राज्य द्वारा प्रदत्त सेवाओं एवं सुविधाओं पर इतने आश्रित हो जाते हैं कि जो उत्तरदायित्व उन्हें स्वयं निभाने चाहिए उनके लिए भी वे राज्य पर आश्रित हो जाते हैं। इस तरह कल्याणकारी राज्य उत्प्रेरणा एवं उद्योगशीलता को हतोत्साहित करता है। शूल्य के स्थान पर कुछ का सिद्धान्त आत्मगौरव तथा उत्तरदायित्व के लिए घातक होता है शक्ति और कार्य करने की इच्छा, नए आविष्कारों का खतरा उठाने की जिज्ञासा भी कम हो जाती है। यही कारण है कि कल्याणकारी राज्य के विरूद्ध व्यंग्य में कहा जाता है कि राज्य पालने से लेकर कब्र तक व्यक्ति के पालन पोषण एवं कल्याण का उत्तरदायित्व निभाता है। कल्याणकारी राज्य के दोष का उल्लेख करते हुए यहाँ तक भी कहा जाता है। कि कल्याणकारी राज्य की गतिविधियाँ ईश्वरीय गतिविधियों से

भी बढ़कर है क्योंकि ईश्वर के बारे में तो यह माना जाता है कि ईश्वर उन्हीं की सहायता करते हैं जो अपनी सहायता करते हैँ जो अपनी सहायता स्वयं करना चाहते हैं। जबकि कल्याणकारी राज्य उन व्यक्तियों की सहायता करता है जो अपनी सहायता करना नहीं चाहते।

कल्याणकारी राज्य में वैयक्तिक क्षमता के ह्रास का दोष देखते हुए अर्थशास्त्री ग्राहम हट्टन कहते हैं कि हमने पहले इसके बारे में नहीं सोचा था, लेकिन जब कल्याणकारी राज्य की स्थापना को कुछ वर्ष हो गये, तो इसका यह दोष सामने आया।

कल्याणकारी राज्य व्यवस्था में औद्योगिक प्रोत्साहन का हनन होता है। बचत की प्रेरणा कम होती है। अत: पूंजी निवेश भी कम हो पाता है। उच्च कराधान द्वारा आर्थिक समानता की प्राप्ति का सिद्धान्त नवीन सम्पदा के निर्माण में रुकावट डालता है। कल्याणकारी राज्य में प्रतिस्पर्धा को निर्बन्धित करने की प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार प्रतिस्पर्धा पश्चात् उपलब्धि का आनन्द प्राप्ति हेतु जो प्रयास व मनोयोग की आवश्यकता होती है, उसे हतोत्साहित किया जाता है। इसके उदय के साथ-साथ सरकार की संरचना तथा कर्मचारी तंत्र के आकार में कई गुना वृद्धि हो जाती है। नए-नए विभाग स्थापित करके कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। सामाजिक सेवा व सुरक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक धन व्यय के कारण भ्रष्टाचार पनपने की सम्भावना बढ़ जाती है।

सार्वभौमिक मताधिकार की प्रक्रिया द्वारा शक्ति का संतुलन बहुमत के पक्ष में होने के कारण लोग राजनीतिक शक्ति का प्रयोग अपने वर्ग के लाभ के लिए करने लगते हैं। इस प्रकार बहुमत की अल्पजन पर क्रूरता प्रकट होती है। सत्ताधारी राजनीतिज्ञों द्वारा उपलब्ध सेवाओं, सुविधाओं और योजनाओं का उपयोग जनसाधारण के मत खरीदने के लिए किया जाने लगता है।

## 9.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई कल्याणकारी राज्य के अर्थ, प्रकृति उद्भव व विकास तथा साथ ही गुणों व दोषों के अध्ययन पर आधारित है। इस इकाई में सर्वप्रथम हमने कल्याणकारी राज्य के अर्थ को समझने का प्रयास किया। विभिन्न विद्वानों के क्या विचार थे। उनसे भी अवगत हुए। किस प्रकार यह राज्य व्यवस्था पूंजीवाद और साम्यवाद के मध्य मार्ग का अनुसरण कर अधिकाधिक सामाजिक सुरक्षा व सेवा प्रदान करने का कार्य करती है। इस तथ्य से भी अवगत हुए। इस प्रकार इसकी प्रकृति को जानने के पश्चात् इसके उद्भव व विकास पर विस्तृत रूप से अध्ययन किया। उदय व विकास से अवगत होने के लिए सैद्धान्तिक विकास के साथ-साथ व्यावहारिक विकास पर भी अलग-अलग ध्यान केन्द्रित किया। अन्त में इस राज्य व्यवस्था के क्या कार्य हैं। इसको जानने के पश्चात् इसके गुण व दोषों से भी अवगत हुए।

## 9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मारिस ब्रूस—द कमिंग ऑफ द वेलफेयर स्टेट लन्दन, 1961
2. हावमैन डी० एल०—द वेलफेयर स्टेट (लन्दन 1953) पृ० 1

3. एम० पी० ओ० पर्सेल—द मार्डन वेलफेयर स्टेट—ए हिस्टारिकल एनालिसिस
4. राबसन, डब्ल्यू० ए०—द वेलफेयर स्टेट (लन्दन 1957)
5. डा० मिराज अहमद—वेलफेयर स्टेट इन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस
6. हेने, एच० एल०—हिस्ट्री ऑफ इकानॉमिक थाट (1949) पृ० 126-126
7. डा० मिराज अहमद—विकास का समाजशास्त्र
8. मिल जे० एस०—प्रिंसिपल ऑफ पालिटिकल इकोनामी (1848) बुक-5
9. जी० आर० मदान—विकास का समाजशास्त्र

## 9.10 प्रश्न उत्तर

**लघु उत्तरीय प्रश्न—**

प्र० 1 कल्याणकारी राज्य पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

प्र० 2 कल्याणकारी राज्य से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट करें।

प्र० 3 कल्याणकारी राज्य की प्रकृति व कार्यों की संक्षिप्त व्याख्या करें।

प्र० 4 वर्तमान में कल्याणकारी राज्य के क्या दोष सामने आ रहे हैं? उल्लेख करें।

**दीर्घ उत्तरीय प्रश्न—**

प्र० 1 कल्याणकारी राज्य का क्या अर्थ है? इसकी प्रकृति को स्पष्ट करें।

प्र० 2 कल्याणकारी राज्य के उद्‌भव व विकास पर प्रकाश डालें।

प्र० 3 कल्याणकारी राज्य पूँजीवाद व समाजवाद का मध्य मार्ग है, स्पष्ट करें।

प्र० 4 कल्याणकारी राज्य के गुणों और अवगुणों की व्याख्या कीजिए।

**बहुविकल्पीय प्रश्न—**

प्र० 1. इंग्लैण्ड में कल्याणकारी राज्य की स्थापना कब मानी जाती है?

(अ) 1902 (ब) 1875 (स) 1962 (द) 1948

प्र० 2. पूँजीवाद के समर्थक किस नीति को स्वीकारते थे?

(अ) पूर्ण सरकारी नियंत्रण (ब) अल्प सरकारी नियंत्रण
(स) अहस्तक्षेप नीति (द) उपरोक्त में कोई नहीं

प्र० 3. निम्न में से कौन समाजवादी विचारक हैं?

(अ) एडम स्मिथ (ब) सेंट साइमन
(स) अल्फ्रेड मार्शल (द) मैकियावेली

प्र० 4. कल्याणकारी राज्य निम्न में से किस नीति को स्वीकृत नहीं करता है?

(अ) पूर्व रोजगार की अवस्था प्राप्त करना
(ब) उद्योगों में जनस्वामित्व प्राप्त करना
(स) सामान्य सुरक्षा की व्यापक योजना
(द) लघु उद्योगों को हतोत्साहित करना।

उत्तर (1) द (2) स (3) अ (4) द

# इकाई 10 अनुसूचित जाति: समस्याएं एवं कल्याणकारी योजनाएं

## इकाई की रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 अनुसूचित जाति का अर्थ व परिभाषा

10.4 अनुसूचित जातियों की संख्या

10.5 अनुसूचित जातियों की समस्याएं (निर्योग्यताएं)

10.6 समस्या सम्बन्धित वर्तमान स्थिति

10.7 संवैधानिक व कल्याणकारी विकास हेतु प्रावधान

10.8 सारांश

10.9 संदर्भ पुस्तकें

10.10 प्रश्नोत्तर

## 10.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई शताब्दियों से शोषण व निर्योग्यताओं का शिकार रहे अनुसूचित जाति पर आधारित है। इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप :

* अनुसूचित जाति का अर्थ व परिभाषा दे सकेंगे।
* देश के विभिन्न प्रान्तों मे इनकी संख्याओं पर टिप्पणी कर सकेंगे।
* समाज में इनके शोषण के भयानक चेहरे पर विस्तार कर सकेंगे।
* वर्तमान में इनकी सामाजिक स्थिति का उल्लेख कर सकेंगे।
* अन्त में हमारे संविधान, केन्द्र व राज्यों द्वारा इने उत्थान हेतु प्रयत्नों का वर्णन कर सकेंगे।

## 10.2 प्रस्तावना

प्रत्येक समाज में किसी न किसी रूप में सामाजिक स्तरीकरण पाया जाता है। जहां तक भारतीय समाज की हम चर्चा करते हैं, यहां पारम्परिक रूप से वर्णव्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण का प्रतिनिधित्व करती आयी है। वर्तमान में सर्वत्र व्याप्त जातिव्यवस्था इसी वर्ण व्यवस्था का परिवर्तित रूप है। वर्ण व्यवस्था में स्तरीकरण के अन्तिम सोपान पर रहे शूद्र वर्ण की स्थिति इतनी शोषित व दयनीय कभी नही रही जितनी कि जातिव्यवस्था में। अनुसूचित जाति के रूप में देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा सदियों से न केवल अत्यन्त पिछड़ा

अपितु समाज द्वारा उत्पीड़ित शोषित व मानवीय अवहेलना के बोझ से ग्रस्त रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संविधान व सरकारी स्तर पर इनको अनेक सुविधाएं व संरक्षण प्रदान किया गया है।

प्रस्तुत इकाई में इनकी समस्याओं के निवार्णार्थ संवैधानिक प्रयत्न व कल्याणकारी कार्यक्रमों व इनकी वर्तमान स्थिति को सरल शब्दों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

## 10.3 अनुसूचित जाति का अर्थ व परिभाषा

जाति प्रथा का भारतीय समाज में महत्वपूर्ण स्थान है। इस व्यवस्था का हिन्दू धर्म में तो महत्व ही है साथ ही अन्य धर्म - इस्लाम, इसाई आदि भी इससे अप्रभावित नहीं हैं। सदियों से प्रचलित इस व्यवस्था ने एक ओर हमारे समाज को लाभान्वित किया है, तो दूसरी ओर इसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की कुरीतियां भी सामने आयी हैं। जैसा कि स्वामी विवेकानन्द जी का भी मानना था कि ... "मानवीय उच्चता को कोई भी धर्म इतने सुन्दर ढंग से व्यक्त नहीं करता है, जितना कि हिन्दू धर्म और किसी भी धर्म में मानव का इतना अधः पतन नहीं होता जितना कि हिन्दू धर्म में।"

जाति प्रथा द्वारा जनित व्यवस्था के अन्तर्गत हिन्दू समाज के अनुसूचित जाति के करोड़ों लोगों को अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर उन्हें अमानवीय शोषित जीवन व्यतीत करने हेतु मजबूर किया गया। समाज सुधारकों के अथक प्रयत्न एवं स्वतंत्रता पश्चात संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों से स्थिति में बहुत परिवर्तन आया है। इन परिवर्तनों के बाद भी यह व्यवस्था हमारे समाज को कलंकित कर रही है।

बृहद अर्थों में अनुसूचित जाति का अर्थ उन समस्त समूहों से है जो समाज के निम्नतम वर्ग से जुड़े हुए हैं इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1935 में साइमन कमीशन द्वारा अस्पृश्य लोगों के लिए किया गया। अंग्रेजों द्वारा इन्हें दलित वर्ग कहा गया। पहले इन्हें अछूत, शूद्र, चाण्डाल, अन्त्यज, पिछड़ी जातियों आदि की संज्ञा प्राप्त रही है। डा0 अम्बेडकर के अनुसार आदिकालीन भारत में इन्हें 'भग्न पुरूष' (Broken Men) या वाह्य जाति (Out castes) माना जाता था। सन 1931 में तत्कालीन जनगणना आयुक्त ने इनको बाहरी जाति (Exterior caste) या बहिष्कृत जाति की संज्ञा दी ताकि इन्हें हिन्दू धर्म से पृथक कर इसाई धर्म स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया जा सके। परन्तु गांधी जी के प्रयत्नों द्वारा 'पूना पैक्ट' के अन्तर्गत इन्हें पुनः हिन्दू धर्म का अविभाज्य अंग स्वीकार किया गया। गांधीजी ने इन्हें हरिजन (ईश्वर के जन) नाम दिया। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन्हें अछूत, दलित, बाहरी जातियाँ, हरिजन अस्पृश्य एवं अनुसूचित जाति आदि नामों से सम्बोधित किया जाता रहा है। 1935 में ब्रिटिश सरकार द्वारा पद दर्शित जातियों की एक सूची तैयार की जिनमें लगभग 430 जातियों को शामिल किया गया, तत्पश्चात इनका सर्वमान्य नाम सूची में सम्मिलित होने के कारण अनुसूचित जाति पड़ा। इस सूची में शामिल कुछ जातियां निम्न हैं- चुहडा, भंगी, चमार, डोम, पासी, मोची, राजबंसी, कोरी, परैया, धियान, शानन, दोसड़ आदि।

डी. एन. मजूमदार के अनुसार - अनुसूचित जातियां वे हैं जो बहुत सी सामाजिक तथा राजनैतिक निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं, जिसमें से अधिकतर निर्योग्यताओं को परम्परा द्वारा

निर्धारित करके सामाजिक रूप से उच्च जातियों के द्वारा लागू किया गया है।

हट्टन ने कुछ ऐसी निर्योग्यताओं का उल्लेख किया है जिनके आधार पर अस्पृश्य जातियों को निर्धारित करने का प्रयत्न किया गया है। आपके अनुसार अस्पृश्य जातियां वे हैं जो (1) उच्च स्थिति के ब्राहमणों की सेवा प्राप्त करने के अयोग्य हों (2) सवर्ण हिन्दुओं की सेवा करने वाले नाइयों, कहारों तथा दर्जियों की सेवा पाने के अयोग्य हो, (3) हिन्दू मंदिरों में प्रवेश हेतु अयोग्य हों, (4) सार्वजनिक सुविधाओं (सड़क, तालाब, कुआं, पाठशाला आदि) का लाभ उठाने हेतु अयोग्य हों, (5) घृणित पेशे से पृथक न होने योग्य हों।

इसी प्रकार डा. के. एन. शर्मा लिखते हैं, ''अस्पृश्य जातियां वे हैं, जिनके स्पर्श मात्र से एक व्यक्ति अपवित्र जो जाए और उसे पवित्र होने हेतु कुछ कृत्य करने पड़ें।

उपरोक्त हट्टन व डा. के. एन. शर्मा की अनुसूचित जातियों हेतु परिभाषा अस्पृश्यता के आधार पर दी गयी है। अनुसूचित जातियों को ऐसी जातियों के आधार पर परिभाषित किया गया है जो घृणित पेशों के द्वारा अपनी जीविका उपार्जित करती है, किन्तु अस्पृश्यता के निर्धारण का यह आधार सर्वमान्य नहीं है क्योंकि कुछ ऐसी जातियां भी हैं जो घृणित व्यवसायों में नहीं लगी हुयी हैं फिर भी उन्हें अनुसूचित जाति की सूची में सम्मिलित किया गया है।

डा. घुरिये अनुसूचित जातियों को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि ''मेरे विचारानुसार अनुसूचित जातियों को उन समूहों के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए जिनका नाम इस समय लागू अनुसूचित जातियों के आदेशों में हैं।''

अनुसूचित जातियों के निर्धारण के आधार जो भी हों पूर्व वैदिक युग में आर्यों (हिज वर्ण) की सेवा करने वाले, मासाद्रि भक्षण करने वालों, यज्ञादि कर्तव्यों से विमुख रहने वाले व्यक्तियों को शूद्र, चाण्डाल, अन्त्यज नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। शनैः-शनै इनकी स्थिति और बदतर होती गयी एवं इन्हें विभिन्न निर्योग्यताओं का शिकार होना पड़ा। ये जातियां ही 1935 में घोषित सूची में सम्मिलित होकर अनुसूचित जातियों के रूप में सामने आयी।

## 10.4 अनुसूचित जातियों की संख्या

1935 में सभी अनुसूचित 227 जातियों में 5 करोड़ 10 लाख की जनसंख्या सहित अनुसूची बनायी गयी। 1991 में यह संख्या बढ़कर 13 करोड़ 82 लाख हो गयी जो कि 1991 में देश की कुल जनसंख्या का 16.3 प्रतिशत था। अनुसूचित जातियों की सर्वाधिक जनसंख्या उत्तरप्रदेश में है जो कि देश की जनसंख्या का 23.3 प्रतिशत है। लगभग 84ब अनुसूचित जातियों की जनसंख्या गांवों में निवास करती है जो कि खेतिहर मजदूरों व सीमान्त किसानों के रूप में जीवन यापन करती हैं लगभग 45ब लोग चमड़े का काम, जुलाहे का काम, मछुआरे का काम रस्सी व टोकरी बनाने का, धोबी, भंगी, शिल्पी, जूते बनाने का, ढोल बजाने का, शराब बनाने का, बढ़ई व लुहार का तथा अन्य विविध कार्य करते हैं।

पीपुल आफ इण्डिया प्रोजेक्ट के अनुसार भारत के कुल (4635) संजाति समूहों मे 751 अनुसूचित जाति वाले हैं।

निम्न सारणी में देश के कुछ राज्यों व संघ क्षेत्रों में वितरित अनुसूचित जाति वाले समुदायों की संख्या प्रस्तुत की गयी है।

| | क्षेत्र | अनुसूचित जाति वाले समुदायों की संख्या |
|---|---|---|
| 1. | उत्तर प्रदेश | 88 |
| 2. | बिहार | 24 |
| 3. | पं0 बंगाल | 49 |
| 4. | तमिलनाडु | 41 |
| 5. | आन्ध्र प्रदेश | 44 |
| 6. | मध्य प्रदेश | 53 |
| 7. | राजस्थान | 36 |
| 8. | कर्नाटक | 56 |

मेघालय, नागालैण्ड, अण्डमान, निकोबार द्वीप समूह, अरूणाचल प्रदेश, लक्षद्वीप व मिजोरम में अनुसूचित जाति वालों समुदाय अनुपस्थित हैं।

स्रोत - पीपुल ऑफ इण्डिया (1992)

परिशिष्ट - 8

## 10.5 अनुसूचित जातियों की समस्याएं ( निर्योग्यताएं )

शताब्दियों से समाज के एक बड़े वर्ग पर लादी गयी अमानवीय शोषण युक्त निर्योग्यताएं मानव समाज को कलंकित करती आयी हैं। विभिन्न समाज सुधारकों के अथक प्रयत्न व संविधान द्वारा प्रदत्त सुविधाओं के कारण यद्यपि इनकी स्थिति में सुधार हुआ है। फिर भी यह सुधार संद्धान्तिक अधिक है व्यवहारिक रूप से एवं विशेषकर ग्रामीण समाजों में ये अभी भी निर्योग्यताओं के शिकार हैं। इनकी निर्योग्यताओं पर चर्चा करते हुए डा0 अम्बेडकर का मानना था कि प्रारम्भिक समाज जिस अपवित्रता को मानता था वह थोड़ी अवधि तक रहती थी तथा खाने पीने आदि प्राकृतिक कर्तव्यों या जीवन में मृत्यु जन्म या अन्य जो असाधारण अवसर होते हैं उन्हीं में उत्पन्न होती थी। अपवित्रता का समय व्यतीत हो जाने पर तथा पवित्र बना देने वाले संस्कार हो जाने पर व्यक्ति की अपवित्रता नष्ट हो जाती थी और वह पवित्र एवं समाज में मिलने योग्य हो जाता था। किन्तु अब यह करोड़ों लोगों का अछूतापन जन्म, मृत्यु आदि के अछूतेपन से सर्वथा पृथक है जो भी हिन्दू उनका स्पर्श करते हैं वे स्नानादि के द्वारा पवित्र हो सकते हैं किन्तु ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो कि अछूत को पवित्र बना सके। वे अपवित्र ही उत्पन्न होते हैं। और जीवन पर्यन्त अपवित्र ही बने रहते हैं वे अपवित्र ही बने रहकर मर जाते हैं तथा वे जिन बच्चों को जन्म देते हैं वे बच्चे भी अपवित्रता का टीका अपने मस्तक पर लगाए ही जन्म ग्रहण करते हैं। यह एक स्थायी वंशानुगत कलंक है जो किसी भी भांति छूट नहीं सकता है।

स्मृतियों, पुराणों तथा धर्म ग्रन्थों में अस्पृश्यों (अनुसूचित जातियों) की निर्योग्यताओं का उल्लेख निम्न प्रकारसे किया गया है।

( 1 ) **अनुसूचित जातियों की आर्थिक समस्याएं** - वर्ण व्यवस्था से ही शूद्रों का कर्तव्य सवर्ण (द्विज वर्ण) की सेवा करना था कालान्तर में इनकी स्थिति और अधिक दयनीय हो गयी इन्हें विवश होकर सवर्णों के झूठे भोजन, त्याज्य वस्तुओं तथा फटे पुराने वस्त्रों पर ही आश्रित रहना पड़ा। इनसे प्रत्येक प्रकार के घृणित और अपवित्र कार्य करवाए गये जैसे मरे पशुओं को उठाने इनके चमड़े की वस्तुएं बनाने मल मूत्र उठाने, जन्म मृत्यु के समय के अपवित्र कार्य करने आदि। विभिन्न प्रकार के निषेधों तथा प्रतिबन्धों के परिणामस्वरूप अनुसूचित जातियां कभी भी आर्थिक रूप से सक्षम और आत्मनिर्भर नहीं बन सकी और सदैव शोषण व अत्याचार की शिकार बनी रही। धन सम्पत्ति संग्रह सम्बन्धी निर्योग्यता पर मनुस्मृति में उल्लेख है कि "एक शूद्र को कभी धन का संचय नहीं करना चाहिए भले ही वह ऐसा कार्य करने में सक्षम क्यों न हो। धन संचय करने वाला शूद्र ब्राहमणों को पीड़ा प्रदान करता है। इसी प्रकार सम्पत्ति सम्बन्धी निर्योग्यताओं में भी ऐसा ही स्वीकृत किया गया था। " वास्तव में उन्हें घृणित से घृणित पेशों को अपनाने के लिए बाध्य किया गया, बदले में इतना भी नहीं दिया गया कि वे भरपेट भोजन कर सकें। जैसा कि पटामिसीतारमैय्या का मानना है कि "वह हमारे लिए कुएं खोदता है किन्तु अपने प्रयोग हेतु उनको छू भी नहीं सकता है वह हमारे लिए तालाब साफ करता है परन्तु जब वे जलसे भरे होते हैं तो उसको उनसे दूर ही रहना पड़ता है। "

विभिन्न प्रतिबन्धों को लागू करके तथा साथ ही इनके घृणित कार्य को पुनर्जन्म से जोड़कर सदियों गुलामों की तरह रखना एक सोची समझी चाल का परिणाम ही प्रतीत होता है।

( 2 ) **धार्मिक समस्याएं ( निर्योग्यताएं )** - धर्म के साथ पवित्रता अपवित्रता की अवधारणा जुड़ी होती है अत: अनुसूचित जाति के लोगों को अस्पृश्य (न छूने योग्य घोषित कर अपवित्र बना दिया गया तथा अनेक धर्म सम्बन्धी निर्योग्यताएं लाद दी गयी। मंदिर में प्रवेश करने पवित्र नदी घाटों के उपयोग करने, पवित्र स्थानों पर आने-जाने तथा स्वयं के घरों में भी पूजा, आराधना करने पर पाबंदी लगायी गयी मनुस्मृति में लिखा है कि "अछूतों को न तो देवी देवताओं का प्रसाद मिले न उनके सामने पवित्र विधान की व्याख्या ही की जाए और न ही उन पर तप करने और प्रायश्चित करने का भार डाला जाए।" इसी प्रकार उच्च जातियों को भी निर्देश दिया गया था कि "जो व्यक्ति अछूत के सामने पवित्र विधान की व्याख्या करता है अथवा उसको प्रायश्चित करने के लिए विवश या बाध्य करता है उसे भी अछूत के साथ असंवृतनामक नरक प्राप्त होता है।"

इन्हें जन्म से ही अपवित्र माना गया अत: इनकी शुद्धि का भी कोई प्रावधान नहीं किया गया। हिन्दुओं के शुद्धिकरण हेतु 16 संस्कारों का उल्लेख मिलता है परन्तु यह सुविधा अछूतों के लिए नहीं उपलब्ध रही। इन्हें यज्ञापवीत धारण करने, ब्राहमणों को पूजा पाठ, यज्ञ हेतु आमंत्रित करने का भी अधिकार नहीं दिया गया ।

( 3 ) **सामाजिक समस्याएं ( निर्योग्यताएं )** - अनुसूचित जाति के लोग सदैव हिन्दू समाज के अभिन्न अंग रहे हैं लेकिन उन्हें सामान्य जीवन जीने का अधिकार कभी नहीं मिला। सवर्ण लोगों के साथ सामाजिक सम्पर्क रखने खान-पान का सम्बन्ध रखने में व इनके उत्सवों, पंचायतों, गोष्ठियों आदि में जाने से वंचित रखा गया। इन्हें किसी भी तरह की शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं दिया गया साथ ही सार्वजनिक उत्सव के स्थानों जैसे मेलों, हाटों में

सम्मिलित होने से भी वंचित रखा गया। परिणामस्वरूप समाज का एक विशाल वर्ग अज्ञानी व निरक्षर रह गया। इन्हें धर्म पथ पर चलने का उपदेश तो दिया गया किन्तु धर्म सम्बन्धी कोई भी जानकारी प्राप्त करना इनके लिए प्रतिबन्धित रहा।

अनुसूचित जाति के लोगों के साथ एक अन्य समस्या, स्वयं के अंदर भी संस्तरण का पाया जाना रहा है। ये लोग 300 से भी अधिक उच्च व निम्न जातिय समूहों में बटे हुये हैं। जिनमें से प्रत्येक समूह की स्थिति एक दूसरे से ऊंची व नीची है। जैसा कि के. एम. पणिक्कर लिखते हैं - ''विचित्र बात यह है कि स्वयं अछूतों के बीच भी एक पृथक जाति के समान संगठन था । सवर्ण हिन्दुओं के समान उनमें से बहुत उच्च तथा निम्न स्थिति वाली उपजातियों का स्तरीकरण था जो कि एक दूसरे से श्रेष्ठ होने का दावा करती थी।''

( 4 ) **अनुसूचित जातियों की राजनैतिक समस्याएं ( निर्योग्यताएं )** - दलितों के शासन के कार्य में किसी भी प्रकार का कोई हस्तक्षेप करने, सार्वजनिक सेवाओं में नौकरी प्राप्त करने का कोई अधिकार नही दिया गया। मनुस्मृति में उल्लेख है कि ''ब्राहमण वर्ण मं जन्म लेने वाला एक धर्महीन ब्राहमण भी राजा का परामर्शदाता हो सकता है किन्तु शूद्र तथा अन्त्यज कभी भी राजा के परामर्शदाता नहीं हो सकते।'' दलितों के लिए सामान्य अपराध के लिए भी कठोर दण्ड की व्यवस्था थी। ब्राहमण, क्षत्रिय और वैश्य जातियों को क्रमशः सत्य, शस्त्र तथा गाय की ही शपथ लेनी पड़ती थी, जबकि शूद्रों को 8 अंगुल लम्बा गरम लोहे का टुकड़ा लेकर सात पग चलने का विधान था।

## 10.6 अनुसूचित जातियों की वर्तमान स्थिति

दलितों की निर्योग्यता सम्बन्धित उपरोक्त स्थिति उत्तरवैदिक काल एवं विशेषकर मध्यकाल से सम्बन्धित रही है। वर्तमान में विभिन्न समाज सुधारकों के प्रयत्नों, शिक्षा के प्रचार प्रसार एवं संविधान द्वारा दलितों को प्रदत्त विशेषाधिकार के कारण निर्योग्यताओं की स्थिति में परिवर्तत आया है। वर्तमान में इनकी समस्या आर्थिक व सामाजिक है न कि धार्मिक व राजनीतिक। इनमें ऊर्ध्व सामाजिक गतिशीलता की कुछ प्रवृष्टियां दिखायी देती हैं फिरभी बीते दशकों में कम प्रगति दर्शायी है। काफी लम्बे समय से सब प्रकार के अधिकारों से वंचित निरक्षर व अज्ञानी रहे दलितों की स्थिति में सुधार में समय लगेगा। एवं लोगों की मनोवृत्ति में बदलाव भी शनैः-शनैः शिक्षा के प्रचार प्रसार के साथ-साथ आएगा। नगरों में स्थिति में काफी परिवर्तन है परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत ग्रामों का देश है जहां परम्परा निर्वहन का विशेष महत्व है।

दलितों में संस्तरण तो पाया ही जाता था वर्तमान में वर्ग भेद भी दिखाई देता है। जिन परिवारों के सदस्यों ने व्यावसायिक क्षेत्र में प्रगति की है या उच्च आर्थिक पद प्राप्त किये हैं वे स्वयं अपनी जाति के लोगों से कहने लगे हैं सवर्ण वर्ग के साथ सामाजिक सम्पर्क खान पान सम्बन्ध रखने में ज्यादा दिलचस्पी रखने लगे हैं।

अपने वर्चस्व को बनाए रखने की मनोवृत्ति के कारण सवर्ण वर्ग द्वारा अनुसूचित जातियों के प्रति अव्याचार में वृद्धि के समाचार भी लगभग प्रतिदिन समाचार पत्रों की सुर्खियों में स्थान पाते हैं। प्रति दो घण्टे में एक दलित की पिटाई होती है प्रतिदिन तीन दलित महिलाएं

बलात्कार की शिकार होती हैं, दो दलितों का कत्ल और दो दलित के घर जलाए जाते हैं। 1998 में पुलिस द्वारा दलितों के विरूद्ध 25638 अपराध दर्ज किये गये। इस प्रकार की घटनाएं उत्तर प्रदेश, गुजरात, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तथा कुछ अन्य प्रदेशें में भी घटित होती रहती हैं। इन घटनाओं के पीछे मुख्य कारण मजदूरी सम्बन्धी विवाद भूमि सम्बन्धी विवाद, सार्वजनिक स्थानों के प्रयोग सम्बन्धित विवाद रहते हैं।

## 10.7 अनुसूचित जातियों हेतु प्रावधान

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात दलितों के उत्थान के लिए संविधान द्वारा व केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न प्रयत्न किये गये है-

**संवैधानि प्रयत्न**

**अनुच्छेद 15** (1) धर्म, मूलवंश, जाति लिंग के आधार पंर भेदभाव न किया जाना।

(2) सार्वजनिक स्थानों में प्रवेश एवं सार्वजनिक स्थान के उपभोग हेतु प्रतिबन्धों का हटाया जाना।

**अनुच्छेद 16 एवं 335** सरकारी सेवाओं में भर्ती हेतु भेद भाव न किया जाना तथा जहां इनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है हितों परध्यान दिया जाना।

**अनुच्छेद 17** अस्पृश्यता का पूर्णतया अन्त ।

**अनुच्छेद 29 ( 2 )** राज्य निधि द्वारा सहायतातीत एवं पोषित शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश का अधिकार।

**अनुच्छेद 330, 332, 334** के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों को लोकसभा, राज्य सभा एवं स्थानीय निकायों में विशेष प्रतिनिधित्व का प्रावधान

**अनुच्छेद 146 एवं 338** दलितों के कल्याणार्थ राज्यों में सलाह कार परिषद तथा पृथक विभाग की स्थापना ओर केन्द्र में एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान।

**विधिक संरक्षण**

अनुच्छेद 17 के माध्यम से अस्पृश्यता को समाप्त किया गया एवं इस प्रावधान को क्रियान्वित करने के लिए केन्द्र सरकार ने अस्पृश्यता अपराध अधिनियम 1955 पारित किया। इस प्रावधान के अर्न्तगत अस्पृश्यता को संज्ञेय अपराध घोषित करते समय यह माना गया कि जो कोई धार्मिक स्थलों एवं सार्वजनिक स्थानों का प्रयोग करने से रोकेगा उस पर 500/- तक जुर्माना तथा 6 माह तक की सजा दी जायेगी। अस्पृश्यता का व्यवहार प्रदर्शित करने वाले सार्वजनिक स्थलों, संस्थाओं का लाइसेंस भी समाप्त किया जा सकता है। उपरोक्त अधिनियम को और अधिक व्यापक और कठोर बनाने के लिए नागरिक अधिकार संरक्षण कानून 1976 में इसको व्यापक रूप से संशोधित किया गया।

अनुसूचित जाति के कल्याणार्थ 1989 में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम पारित हुआ जो 30 जनवरी 1990 से लागू हुआ। इसमें अत्याचार की श्रेणी में आने वाले अपराधों के उल्लेख के साथ साथ उनके लिए कड़े दण्ड की व्यवस्था भी

की गयी है। राज्यों में यह अपेक्षा की गयी है कि वे इनके प्रति अत्याचारों की रोकथाम के उपाय करें ओर पीड़ितों के आर्थिक व सामाजिक पुनर्वास की व्याख्या करें।

**सेवाओं में आरक्षण**

अनुच्छेद 16 व 335 के अन्तर्गत अनुसूचित जाति के सदस्यों को सेवाओं में आरक्षण उपलब्ध करवाने की दृष्टि से समय समय पर आदेश जारी किए गये जैसे-

1. अखिल भारतीय सेवा में खुली प्रतियोगिता के आधार पर 15ब स्थान आरक्षित

2. अखिल भारतीय स्तर पर अन्य प्रकार से की जाने वाली भर्ती के मामले में 16.64ब स्थान आरक्षित ।

3. गैर चयन (वरिष्ठता के आधार पर परन्तु अयोग्य नहीं पाए जाने की शर्त पर चयन) की पद्धति द्वारा की जाने वाली सभी पदोन्नतियों में दलितों हेतु आरक्षण का प्रावधान।

**81वें व 82वें संविधान संशोधन अधिनियम 2000**

के द्वारा भर्ती सम्बन्धी क्षेत्र में एवं अंकों के मूल्यांकन मानक में ढील का प्रावधान किया गया।

**अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग**

65वें संविधान संशोधन अधिनियम (1990) के अन्तर्गत अनुच्छेद 338 के तहत नियुक्त किए जाने वाले विशेष अधिकारी के स्थान पर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति आयोग बनाया गया है यह आयोग इनकी सुरक्षा सम्बन्धी सभी मामलों की जांच तथा निगरानी करने, शिकायतों की जांच करने सामाजिक और आर्थिक विकास की योजनाएं बनाने में सहयोग और प्रगति का मूल्यांकन करने के साथ साथ केन्द्र व राज्य सरकारों को परामर्श देने का कार्य भी करता है।

**विशेष संघटक योजना 1979**

के अन्तर्गत विशेष योजना के माध्यम से निधियों/ परिव्ययों के प्रवाह को इस तरह सुव्यवस्थित कर सुनिश्चित करने का प्रावधान किया गया कि अनुसूतिच जाति के सदस्य लाभान्वित हो सके इस कार्य हुतु राज्यों के प्रयास को सफल बनाने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को विशेष केन्द्रीय सहायता देने का प्रावधान किया गया।

**अनुसूचित जाति विकास निगम**

अनुसूचित जातियों के आर्थिक कार्यक्रमों के लिए ऋण उपलब्ध कराने जैसे मुद्दों में क्रियात्मक पहलुओं पर कारगर ढंग से कार्यवाही करने के लिए सरकार ने 1978-79 में राज्यों में अनुसूतिच जाति विकास निगम की स्थापना की। इसमें राज्य सरकार व निगम का निवेश क्रमश: 51ब एवं 49ब रखा गया।

**अनुसूचित जाति एवं जनजाति वित्त एवं विकास निगम**

1989 को गठित इस निगम के अन्तर्गत राज्य स्तरीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति विकास निगम एवं अन्य माध्यम से इन जातियों की व्यावसायिक एंव उद्यमीय क्षमताओं को बढ़ाने के लिए लक्षित समूह को रियायती दरों पर धनराशि उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया।

## केन्द्र द्वारा प्रायोजित अन्य योजनाएं

### सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति एवं पुनर्वास योजना 1992

1992 से प्रारम्भ की गयी इस योजनाके अन्तर्गत प्रत्येक सफाई कर्मचारी एवं उसके आश्रितों को वैकल्पिक सम्मानजनक व्यापार उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक लाभार्थी को 50,000/- तक की वित्तीय सहायता प्रदान करने का प्रावधान किया गया।

### दसवीं कक्षा पूर्व तथा बाद की शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति

1977-78 में अस्वच्छ व्यवसायों में कार्यरत व्यक्तियों के बच्चों के लिए दसवीं कक्षा पूर्व शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करने की योजना लागू की गयी।

उच्चतर शिक्षा जारी रखने के लिए छात्रवृत्ति के रूप में मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति योजनाका प्रावधान कियागया। 2000-01 में इसे संशोधित करते हुये छात्रवृत्ति की दरों को औद्योगिक कामगारों के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक से समायोजित करके आयु सीमा में वृद्धि की गयी।

### अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए विदेशी छात्रवृत्तियां

इस जाति के प्रति वर्ष 4 उम्मीदवारों के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं अनियंत्रण के क्षेत्र में उच्चतर अध्ययन जारी रखने के लिए छात्रवृत्ति व यात्रा अनुदान का प्रावधान किया गया है।

### प्रशिक्षक तथा सम्बद्ध योजना

विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में भाग लेने केलिए अनुसूचित जाति के प्रतिभागियों हेतु केन्द्र सरकार व राज्य सरकार द्वारा 50 : 50ब के आधार पर कोचिंग एवं सम्बद्ध योजना के अन्तर्गत सहायता उपलब्ध करायी जाती है।

### छात्रावास योजना

तीसरी पंच वर्षीय योजना में बालिकाओं की शिक्षा हेतु छात्रावासों की व्यवस्था की गयी है इसी तरह 89-90 में लड़कों के लिए छात्रावासों की व्यवस्था की गयी है। 2000-01 के संशोधित कार्यक्रमानुसार छात्रावासों का जल्द संचालन सम्भव बनाने हेतु वर्तन एवं फर्नीचर के लिए केन्द्रीय अंश और केन्द्रीय सहायता में वृद्धि की गयी ।

### स्वैच्छिक संगठन का योगदान

अनुसूचित जाति के सदस्यों की आय सृजन के लिए तकनीकी तथा कौशल विकास के लिए स्वेच्छिक संगठन भी 90ब अनुदान द्वारा प्रशिक्षण देती है।

### अनुसूचित जाति विकास सम्बन्धी अनुसंधान एवं प्रशिक्षण के अन्तर्गत

उन विश्वविद्यालयों, संगठनों एवं अनुसंधान संस्थाओं को वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाती है जिन्होंने अपनी उपयोगिता सिद्ध करदी है।

### पुस्तक बैंक योजना

यह योजना चिकित्सा और इंजीनियरिंग डिग्री पाठ्यक्रमों के अनुसूचित जातियों के उम्मीदवारों के लिए शुरू की गयी है तीन छात्रों के गुप को 5,000/- की पाठय पुस्तकों का सेट दिया जाता

है और यह सेट तीन वर्ष के लिए दिया जाता है।

**डा. अम्बेडकर प्रतिष्ठान की स्थापना**

24 मार्च 1992 को डा. अम्बेडकर प्रतिष्ठान की स्थापना की गयी जिसके अन्तर्गत (अ) राष्ट्रीय पुस्तकालय की स्थापना (ब) अम्बेडकर का कार्य व उपलब्धियों को उजागर करना (स) सामाजिक सूझ बूझ बढ़ाने के लिए डा. अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार का संचालन डा. अम्बेडकर के जीवन और उद्देश्य पर संगोष्ठी प्रदर्शनी एवं व्याख्यानों का आयोजन करना आदि सम्मिलित है।

## 10.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई सामाजिक स्तरीकरण के अंतिम सोपान पर रहे अनुसूचित जाति के अध्ययन पर आधारित है। इस इकाई में सर्वप्रथम हमने अनुसूचित जाति का अर्थ, अवधारणा व परिभाषा का अध्ययन किया। तत्पश्चात देश में व प्रान्तवार संक्षिप्त में इनकी जनसंख्या के विभाजन से अवगत हुए। अनुसूचित जाति मुख्यतया अपनी समस्याओं के कारण ध्यानाकर्षित करती है अत: इनकी समस्याओं के अध्ययन को इकाई में स्थान देते हुए इनकी वर्तमान स्थिति पर भी संक्षेप में विचार किया। अन्त में इनके विकास हेतु अपनाए गये संवैधानिक प्रयासों व कल्याणकारी कार्यक्रमों से भी अवगत हुए।

## 10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ


| | | |
|---|---|---|
| 1. | डी.एन. मजूमदार | रेसेज एण्ड कल्चर्स ऑफ इण्डिया पृ0 336 |
| 2. | डा. के. एन. शर्मा | भारतीय समाज ओर संस्कृति पृ0 262 |
| 3. | एच. के. हट्टन | कॉस्ट इन इण्डिया पृ0 195 |
| 4. | जी. एस. घुरिये | कॉस्ट क्लास एण्ड अक्यूपेशन बाम्बे 1961 |
| 5. | पीपुल ऑफ इण्डिया | 1992 |
| 6. | के. एम. परिक्कर | हिन्दू समाज निर्णय के द्वार पर एशिया पब्लिशिंग हाउस 1956 |


## 10.10 प्रश्नोत्तर

### लघुउत्तरीय प्रश्न

1. अनुसूचित जाति से क्या तात्पर्य है?
2. दलितों की सामांजिक निर्योग्यताएं बताएं ?
3. अनुसूचित जाति के उत्थान के लिए संवैधानिक प्रयत्नों को बताएं?
4. दलितों के उत्थन हेतु सरकार द्वारा किए गये प्रयासों को संक्षेप में बताएं?

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. अनुसूचित जाति से क्या तात्पर्य है? इन्हें परिभाषित भी करें ?

2. अनुसूचित जाति को स्पष्ट करते हुए इन की जनसंख्यात्मक बनाकर उस पर प्रकाश डालें?

3. अनुसूचित जाति की क्या निर्योग्यताएं रही हैं? इनकी वर्तमान स्थिति पर भी प्रकाश डाले?

4. अनुसूचित जाति के कल्याणार्थ अपनाए गये संवैधानिक प्रयत्न व अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों का उल्लेख करें ?

## बहुविकल्पीय प्रश्न

1. किस विचारक के अनुसार अनुसूचित जाति के सदस्यों को प्राचीन काल में भग्न पुरूष व वाह्य जाति के नाम से जाना जाता था?

1. मजूमदार 2. अम्बेडकर 3. गांधीजी 4. जी. एस. घुरिए

2. अनुसूचित जाति के सदस्यों को हरिजन नाम किस विचारक ने दिया?

1. जे. एच. हट्टन 2. राधाकृष्णन 3. अम्बेडकर 4. गांधी जी

3. अनुसूचित जाति के सदस्यों की सर्वाधिक जनसंख्या किस राज्य में है?

1. उत्तर प्रदेश 2. बिहार 3. मध्य प्रदेश 4. राजस्थान

4. किस अनुच्छेद द्वारा अस्पृश्यता का पूर्णतया अन्त किया गया?

1. अनु. 15 2. अनु. 17 3. अनु. 23 4. अनु. 29

उत्तर 1 (2) 2 (4) 3. (1) 4. (2)

# इकाई 11 अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग: समस्याएं एवं कल्याणकारी योजनाएँ

## इकाई की रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 अनुसूचित जनजाति - अर्थ व परिभाषा

11.4 जनजातीय विशेषताएं (लक्षण)

11.5 जनजातियों का भौगोलिक वितरण

11.6 जनजातियों की समस्याएं

11.7 जनजातीय कलयाणके कार्य

11.8 अन्य पिछड़े वर्ग - अर्थ व परिभाषा

11.9 अन्य पिछड़े वर्ग सम्बन्धित आयोग

11.10 अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याएं

11.11 अन्य पिछड़े वर्ग के कल्याण हेतु प्रावधान

11.12 सारांश

11.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

11.14 प्रश्न उत्तर

## 11.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य समाज के कमजोर वर्ग- अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग से सम्बद्ध अध्ययन करना है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

* अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग का अर्थ व इनकी परिभाषाओं को अवगत कर सकेंगे।
* इनकी विशेषताओं (लक्षणों) का उल्लेख कर सकेंगे।
* इनकी समस्याओं और इसके साथ ही इनके कल्याण के लिए लागू किये गये प्रावधानों पर टिप्पणी कर सकेंगे।

## 11.2 प्रस्तावना

जब हम समाज के कमजोर वर्ग की चर्चा करते हैं उनमें न केवल अनुसूचित जाति के सदस्य वरन अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग व महिलाएं भी आती हैं। पूर्व इकाई में हमने

अनुसूचित जाति के बारे में अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग से सम्बद्ध है।

हमारे संविधान में 'कमजोर वर्ग' शब्द का प्रयोग हुआ है। संविधान के अनुच्छेद 4८ के अर्न्तगत राज्य की जनता की दुर्बलता और विशेषकर अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा तथा आर्थिक हितों की उन्नति के लिए शोषण से उनका संरक्षण करने का निर्देश दिया गया है देश के लगभग एक चौथाई से अधिक लोग अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के सदस्य हैं इनमें पिछड़े वर्ग को भी सम्मिलित करने पर देश की आधी से अधिक जनसंख्या कमजोर वर्ग की हो जाती है। इनमें से कुछ क्षेत्र विशेष के समुदाय को यदि छोड़ दियाजाय तो आज भी ये कमजोर वर्ग अन्यायपूर्ण व उपेक्षा की जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं।

यह सच है कि स्वतंत्रता के बाद समाज के कमजोर वर्गों इनमें चाहे दलित हो अनुसूचित जनजाति के या अन्य पिछड़े वर्ग के इन सभी के कल्याण के लिए संवैधानिक प्रावधान करने के साथ ही विकास के लिए बड़े बड़े कार्यक्रम भी लागू किये गये। जहां तक इन कार्यक्रमों के प्रभाव की बात है अन्य पिछड़े वर्ग की स्थिति इतनी दयनीय नहीं है जितनी कि आदिवासियों की। अधिकांश जनजातीय लोग आज भी आदिम स्तर पर जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

प्रस्तुत इकाई समाज के इन्हीं कमजोर वर्गों मे से अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग के अध्ययन पर आधारित हैं।

## 11.3 अनुसूचित जनजाति: अर्थ व परिभाषा

भारतीय संविधान में अनुसूचित जन जातियों की संख्या 212 बतायी गयी है। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में आदिवासियों की संख्या 6,758 करोड़ थी यह इंग्लैण्ड की जनसंख्या के लगभग बराबर ही थी वर्तमान में यह 8 करोड़ से भी अधिक हो चुकी है। ये जनजातियां अधिकांशतया दुर्गम भौगोलिक क्षेत्रों में रहने के कारण सभ्य समाज से अलग थलग है। यही कारण है कि इन्हें आदिम समाज आदिवासी, वन्य जाति, गिरिजन एवं अनुसूचित जनजाति आदि नामों से पुकारा जाता है। डा. घुरिये इनके लिए पिछड़े हुए हिन्दू शब्द का प्रयोग करते हैं। विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा अनु. जनजाति को निम्न प्रकार परिभाषित किया गयाहै ।

**डा. डी. एन. मजूमदार के अनुसार** - ''जनजाति परिवारों का एक ऐसा समूह है जिसका एक सामान्य नाम होता है जिसके सदस्य एक निश्चित क्षेत्र में निवास करते हैं, एक सामान्य भाषा बोलते हैं तथा विवाह और व्यवसाय के विषय में कुछ विशेष नियमों का पालन करते हैं।

**गिलिन व गिलिन के अनुसार** - ''स्थानीय आदिम समूहों के किसी भी संग्रह को जो कि एक सामान्य क्षेत्र में रहता हो एक सामान्य भाषा बोलता हो और एक सामान्य संस्कृति का अनुसरण करता हो, जनजाति कहते हैं। ''

**रॉल्फ पिडिंगटन** जनजाति का अर्थ स्पष्ट करते हुये लिखते हैं ''हम एक जनजाति की व्यक्तियों के एक समूह के रूप में व्याख्या कर सकते हैं जो कि समान भाषा बोलता हो, समान भू भाग में निवास करता हो तथा जिसकी संस्कृति में समरूपता पायी जाती है।

**हॉबल के अनुसार** - ''एक जनजाति एक सामाजिक समूह है जो एक विशेष भाषा बोलता है तथा एक विशेष संस्कृति रखता है जो उन्हें दूसरे जनजाति समूहों से पृथक करती है। यह अनिवार्य रूप से राजनीतिक संगठन नही है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि जनजाति एक अन्तर्विवाही, क्षेत्रीय समूह है - जिसकी अपनी एक भाषा, संस्कृति व्यवसाय व राजनीतिक संगठन होता है।

## 11.4 जनजाति की विशेषताएं ( लक्षण )

1. प्रत्येक जनजाति का एक निश्चित भू भाग होता है। साधारणतया उनके निवास का क्षेत्र पहाड़ी, जंगली अथवा सीमान्त प्रदेश होता है। किन्तु डा. रिवर्स जनजाति के लिए एक निश्चित भू भाग को आवश्यक नहीं मानते ।

2. प्रत्येक जनजाति की एक सामान्य भाषा होती है भाषा के माध्यम से ही जनजातिय लोग अपनी संस्कृति का हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को करते है।

3. एक जनजाति कई परिवारों का संकलन होता है। इसमें कई वंश समूह, गोत्र व भातृदल होते हैं। कुछ जनजातियां जैसे -भील, संथाल तथा गोंड विस्तृत भौगोलिक क्षेत्रों में फैली हुयी है। एवं इनकी जनसंख्या लगभग एक करोड़ से भी अधिक है।

4. कुछ विशेष नियमों, परम्पराओं, प्रथाओं, विश्वासों आदि पर आधारित प्रत्येक जनजाति की अपनी एक सामान्य संस्कृति होती है।

5. प्रत्येक जनजाति सामान्यतया अन्तर्विवाही होती है।

6. जनजातियों दूसरे समुदायों की तुलना में आर्थिक रूप से कहीं अधिक आत्मनिर्भर होती है, क्योंकि ये अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति आपसी सहयोग से कर लेती है। यद्यपि ये यदा कदा पड़ोसी समुदायों से भी आर्थिक विनिमय करती है।

7. प्रत्येक जनजाति अपने एक नाम द्वारा पहचानी जाती है ।

8. एक जनजाति विभिन्न निषेधों जैसे - खान-पान, विवाह, परिवार, व्यवसाय धम्र आदि का पालन करती है।

9. सामान्यततया प्रत्येक जनजाति मुखिया या वयोवृद्ध लोगों के सहयोग से बनने वाली पंचायत के माध्यम से एक स्वतंत्र राजनीतिक इकाई होती है।

## 11.5 भारतीय जनजातियों का भौगोलिक वितरण

1991 की जनगणना के अनुसार जम्मू व कश्मीर को छोड़कर जनजातियों की संख्या 6.76 करोड़ थी जो भारत की कुल जनसंख्या का 8.08 प्रतिशत है। भारत में सर्वाधिक जनजातीय जनसंख्या निवास करती है ये जनजातियां देश के विभिन्न भागों में वितरित है परन्तु यह वितरण असमान है सम्पूर्ण देश में लगभग 635 जनजातियां हैं यदि नाम के आधार पर वर्गीकरण कियाजाए तो 635 जनजातियों को 225 जनजाति समूहों में विभाजित किया जा सकता है सम्पूर्ण जनजातीय जनसंख्या का 50.38ब मध्य भारत के राज्यों, मध्य प्रदेश,

बिहार, उड़ीसा, पं0 बंगाल, में निवास करती है। इन क्षेत्रों में निवास करने वाली मुख्य जनजातियां हैं - संथाल, मुण्डा, उरांव, गोंड, कमार, बैगा, कोरकू, आदि।

देश की सम्पूर्ण जनजातीय जनसंख्या का 10.60ब हिमाचल क्षेत्र के राज्यों, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल प्रदेश, मणिपुर, त्रिपुरा, अरूणाचल प्रदेश, असम, मेघालय, नागालैण्ड, मिजोरम, में है। जिनमें मुख्यत: गुज्जर, थारू, भोटिया, कूकी, गारो, खासी, नागा, माओ, मिजो, आदि जनजातियां प्रमुख हैं।

देश की कुल जनजातीय आबादी का 10.92ब दक्षिणी भारत के आन्ध्रप्रदेश कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह और लक्ष्यद्वीप आदि राज्यों व संघ क्षेत्रों में है। इस क्षेत्र की प्रमुख जन जातियों में कोया, इरूला, टोडा, यरावा, पुलायन, कादर आदि प्रमुखहैं।

कुछ राज्यों व संघ क्षेत्रीय राज्यों में अनुसूचित जनजातियों की संख्या बहुत अधिक है। जैसे मिजोरम में कुल आबादी में से 94.75ब , लक्ष्यद्वीप में 93.15ब नागालैण्ड में 87.70ब, मेघालय में 85.53ब दादर और नगर हवेली में 78.99ब जनसंख्या अनुसूचित जनसंख्या से सम्बन्धित है। जबकि देश की कुल अनुसूचित जनजाति में से मध्य प्रदेश में 22.73ब महाराष्ट्र में 10.80ब और उड़ीसा में 10.38ब निवास करती है।

## 11.6 जनजातियों की समस्याएं

जनजातियों की समस्याओं पर विभिन्न विचारकों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हैं एल. पी. विद्यार्थी, आशीष बोस, निहार रंजन रे, आदि के अनुसार वर्तमान पविर्तन के दौर ने उनके जीवन में समस्याएं पैदा की हैं। अक्षय देसाई इनकी समस्याओं को शोषण सम्बन्धित मानते हैं। जबकि मजूमदार व मदान जनजातियों की समस्या को सम्पर्क व अलगाव जनित मानते हैं। इनकी समस्याओं का क्रमवार उल्लेख निम्न है-

1. **निवास स्थान सम्बन्धी समस्या**- सामान्यतया जनजातियां पहाड़ों जंगलों जैसे दुर्गम स्थानों पर निवास करती हैं जहां यातायात और संचार के साधनों का अभाव होने के कारण आधुनिकता का प्रकाश नहीं पहुँच पाया है।

2. **सांस्कृतिक समस्याएं** - जनजातियों की सांस्कृतिक समस्याएं मुख्यत: परसंस्कृति ग्रहण से जुड़ी है नयी संस्कृति को अपनाने से पुराने व्यवहार प्रतिमान कमजोर पड़ने लगे हैं अत: सांस्कृतिक एकता के समक्ष खतरा उत्पन्न होने लगा है। अन्य निम्न सांस्कृतिक समस्याएं भी सामने आयी है।

1. धर्म परिवर्तन के कारण धार्मिक समस्याएं भी सामने आयी हैं अब एक ही जनजाति में विभिन्न धर्मावलम्बियों के होने से इनमें आपसी भेदभाव बढ़ा है।

2. वाह्य संस्कृतियों के सम्पर्क में आने से एक ही जनजाति में विभिन्न भाषा को मानने वाले मिलने लगे हैं जो कि सांस्कृतिक आदान प्रदान में बाधक है।

3. पर संस्कृति ग्रहण व नवीन औद्योगिक संस्कृति ने अनुकूलन की समस्या को भी जन्म दिया है।

4. वाह्य संस्कृति के प्रभाव के कारण ये अपने पारम्परिक रीति रिवाजों प्रथाओं, युवागृहों व प्राचीन ललित कला को त्यागने लगे हैं एवं इनके गायन संगीत नृत्य आदि का भी दिन पर दिन लोप होता जा रहा है।

3. **आर्थिक समस्याएं** - वाह्य सांस्कृतिक सम्पर्क व नवीन सरकारी नीति के कारण इन्हें निम्न आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

1) नवीन भूमि व्यवस्था ने इनसे इनकी परम्परागत झूमर खेती (स्थानान्तरित खेती) का अधिकार छीन लिया है। परन्तु नयी भूमि की व्यवस्था नही की गयी। यदि व्यवस्था की भी गयी तो साहूकारों ने इनकी अज्ञानता का लाभ उठाकर इन्हें इनसे हड़प लिया।

2) मुद्रा अर्थव्यवस्था ने इन्हें ऋण ग्रस्त बनाया है एवं बंधुआ मजदूर बनने पर मजबूर किया है।

3) कुटीर उद्योगों ने इन्हे आत्मनिर्भर बनाया था परन्तु इन उद्योगों के पतनने एक बड़े वर्ग के सामने बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न की।

4) वन सम्बन्धी नयी नीति ने इनके शिकार करने, शराब बनाने जड़ी बूटियां, लकड़ियां एकत्रित करने के काम पर प्रतिबन्ध लगा दिया अत: इन्हें कम मजदूरी पर चाय बागानों, औद्योगिक संस्थानों में व ठेकेदारों, साहूकारों के अधीन कार्य करने पर मजबूर होना पड़ा।

4. **सामाजिक समस्याएं** - वाह्य समूहों के सम्पर्क औद्योगीकरण नगरीकरण ने इनके समक्ष अनेक सामाजिक समस्याएं उत्पन्न की।

1) अपने क्षेत्र के बाहर रोजगार की आवश्यकता ने इनके परिवारों में विघटन पैदा किया हैं।

2) हिन्दू समूहों के सम्पर्क ने इनमें बाल विवाह की प्रथा को जन्म दिया।

3) जनजातियों में कन्यामूल्य का प्रचलन रहा है परन्तु मुद्रा अर्थ व्यवस्था के कारण कन्यामूल्य की मांग नकद के रूप में होने लगी है जिसे चुका पाने में असमर्थता के कारण कन्या हरण की समस्याओं में वृद्धि हुयी है।

4) इनके पारम्परिक मनोरंजन के केन्द्र युवागृहों (गोटुल) का भी पता होने लगा है।

5) वाह्य लोगों से सम्पर्क के कारण जनजातीय स्त्रियां अनुचित यौन सम्बन्ध का शिकार होने लगी हैं जिससे यौन रोग की समस्या भी सामने आयी है।

5. **स्वास्थ्य तथा पोषण की समस्या** - अधिकांशत: जनजातियों द्वारा जंगलों तराई क्षेत्र व पहाड़ी क्षेत्रों में रहने के कारण पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध नही हो पाती। गंदे कपड़े पहनने के कारण चर्म रोग से ग्रस्त रहते हैं। इन लोगों में चर्म रोग, मलेरिया, पीलिया, चेचक, रोहे, अपच व गुप्तांगों की बीमारियां पायी जाती हैं, जिनके उपचार के लिए ये जड़ी बूटियों, झाड़फूंक व जादू टोने पर आश्रित रहते हैं। परम्परागत शराब के प्रयोग के स्थान पर अंग्रेजी शराब के अधिक प्रयोग एवं पौष्टिक भोजन के अभाव इनकी कार्य कुशलता व क्षमता का ह्रास हो रहा है।

6. **शिक्षा सम्बन्धी समस्यायें** - 1991 की जनगणना के अनुसार इनकी राष्ट्रीय साक्षरता दर 29.62ब प्रतिशत थी कम शिक्षा के कारण ये लोग सामान्यतया अन्ध विश्वासो व कुरीतियों के शिकार बने रहते हैं। यदि कुछ जन जातीय सदस्य उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं तो वे अपनी परम्परागत संस्कृति को हीन समझकर दूरी बना लेते हैं।

7. **राजनीतिक असंतोष की समस्या** - स्वतंत्रता पूर्व जनजातियों के आंदोलन सामान्यतया विकास के मुद्दों व बुराइयों से लढ़ाई हेतु होते थे। स्वतंत्रता पश्चात इनके आन्दोलनों में प्रथमता वाद और राजनीतिक असंतोष ही दिखायी देता है। इस असंतोष ने स्थानीय लोगों व वाह्य समूहों के मध्य सम्बन्धों को तनावपूर्ण बनाया है।

8. **सीमाप्रान्त जनजातियों की समस्याएं** - सीमाप्रान्तीय जनजातियों की समस्याएं अन्य क्षेत्रों में निवास करने वाली जनजातियों से अलग हैं चीन, पाकिस्तान, बांग्लादेश द्वारा सीमाप्रान्तीय जनजातिय समूहों को भड़कने का प्रयत्न किया जाता रहा है एवं इन्हें अस्त्र शस्त्रों की आपूर्ति भी की जाती रही है। परिणामस्वरूप में समूह अधिकाधिक स्वायत्तता की मांग करने लगे हैं।

9. **विकास कार्यक्रमों से उत्पन्न समस्याएं** - स्वतंत्रता उपरान्त अपनाए गये विकास कार्यक्रमों से इन जनजातीय लोगों को लाभ के साथ साथ अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ रहा है। स्वीकृत किए गये ऋण का अधिकांश हिस्सा प्रशासनिक कर्मचारियों की भ्रष्ट विधि के कारण जनजातियों तक नहीं पहुंच सका है। साथ ही ऋण की वसूली की प्रक्रिया भी असंतोष उत्पन्न करने वाली है।

## 11.7 जनजातीय कल्याण के कार्य

1. **संवैधानिक प्रयत्न** - संविधान में जनजातियों के लिए दो प्रकार की व्यवस्थाएं की गयी हैं एक संरक्षी एवं दूसरी विकास सम्बन्धी।

**अनु. 275** के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्यों को जनजातीय कल्याण के लिए व प्रशासन के लिए धनराशि देने का प्रावधान है।

**अनु. 325** के अन्तर्गत जनजातिय लोगों को मताधिकार का अधिकार दिया गया है।

**अनु. 330 व 332** में लोकसभा व विधानसभाओं में स्थान सुरक्षित रखे गये हैँ 1992 से पंचायत राज में भी इनके लिए स्थान सुरक्षित रखे गये हैं।

**अनु. 335** में नौकरियों में स्थान सुरक्षित रखने का आश्वासन दिया गया है।

**अनु. 338** में इनके कल्याण कार्यक्रमों के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान किया गया है।

**अनु. 342** व **344** में राज्यपालों को जनजातियों के संदर्भ में विशेषाधिकार प्रदान किऐ गये है

अनुसूचित जाति व जनजातियों के विरूद्ध अत्याचारों की रोकथाम के लिए "अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति (अत्याचारों की रोकथाम अधिनियम 1989 बनाया गया है जो 30 जनवरी 1990 से लागू है।

2. **सेवाओं में आरक्षण** - केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्तियों में 7.5ब स्थान आरक्षित किए गये हैं विभिन्न राज्यों द्वारा भी जनसंख्या के अनुपात में स्थान आरक्षित किए गये हैं ।

3. **शिक्षा की सुविधा** - 1991 से पांचवी तक की शिक्षा के लिए 50/ मासिक छात्रवृत्ति का प्रावधान किया गया है साथ ही अधिक उच्चशिक्षा के लिए अधिक छात्रवृत्ति का प्रावधान है प्रथम छात्रावासों के अतिरिक्त अपनी संस्कृति के प्रशिक्षण हेतु आश्रम पद्धति के विद्यालयों की भी स्थापना की गयी है। व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु एवं प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता हेतु कोचिंग संस्थान भी खोले गये है।

4. **जनजातिय अनुसंधान संस्थाएं** - जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिए अनुसंधान केन्द्र स्थापित किये गये हैं एवं इन केन्द्रों में समन्वय स्थापित करने के लिए 30 सदस्यीय केन्द्रीय अनुसंधान सलाहकार परिषद का गठन किया गया है।

5. **जनजातीय विकास कार्यक्रम** - 5वीं पंचवर्षीय योजना से जिनक्षेत्रों में 50ब या इससे अधिक जनजातीय संख्या निवास करती है उनके क्षेत्रों के लिए समन्वित जनजातीय विकास परियोजना प्रारम्भ की गयी है। इस परियोजना के अन्तर्गत ऋण, अनुदान व प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी है।

6. **सहकारी विपणन की व्यवस्था** - सरकार द्वारा 1987 में जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ (ट्राईफेड) की स्थापना की गयी। इसका उद्देश्य जनजातियों द्वारा तैयार की गयी व उत्पादित वस्तुओं का व्यापारियों के शोषण से बचाकर उचित मूल्य दिलाना था।

7. **जनजातीय वित्त और विकास निगम** - सन1989 से जनजातिय वित्त और विकास निगम की स्थापना की गयी एवं इसके माध्यम से जनजातीय विकास के लिए अनेक नयी योजनाएं प्रारम्भ की गयी। देश में वर्तमान में इस प्रकार के निगम 24 राज्यों में कार्यरत हैं।

8. **पुनर्वास की सुविधाएं** - स्थानान्तरित (झूम) खेती पर नियंत्रण लगने, वन नीति लागू होने, जनजातीय क्षेत्रों में खानों व उद्योगों का विकास होने से बहुत से जनजातीय परिवारों को निकास व रोजगार हेतु विचलन करना पड़ा है। ऐसे परिवारों के पुनर्वास हेतु भी सरकार द्वारा प्रयत्न किया जा रहा है।

## 11.8 अन्य पिछड़े वर्ग-अर्थ व परिभाषा

सामान्यतया पिछड़े वर्गों को 3 श्रेणियों में रखते हैं (1) अनुसूचित जाति (2) अनुसूचित जनजाति एवं (3) अन्य पिछड़े वर्ग। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की हम पूर्व में ही चर्चा कर चुके हैं अत: अब हम अन्य पिछड़े वर्ग की चर्चा करें गे इस पिछड़े वर्ग को मात्र अन्य पिछड़े वर्ग न कहकर अन्य पिछड़ी जातियां भी कहा जाता है। इन पिछड़े वर्गों का आधार उनका पिछड़ापन है अर्थात वे वर्ग जो कि सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक दृष्टिकोण से एक नीचे स्तर पर है पिछड़े वर्ग में सम्मिलित किऐ गये है। भारतीय संविधान के भाग 16 तथा अन्य कुछ प्रावधानों में पिछड़े वर्गों या अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के साथ अन्य पिछड़े वर्गों शब्द का प्रयोग किया गया है। यद्यपि पिछड़े वर्ग की परिभाषा नहीं

दी गयी है परन्तु आशय स्पष्ट किया गयाहै।

**राजनीति कोश में** - पिछड़े वर्गों को इस प्रकार परिभाषित किया गया है, ''पिछड़े हुए वर्गो का अभिप्राय समाज के उस वर्ग से है जो सामाजिक आर्थिक और शैक्षणिक निर्योग्यताओं के कारण समाज के अन्य वर्गों की तुलना में नीचे स्तर पर हो। यद्यपि संविधान में इस शब्द समूह का अनेक स्थानों पर प्रयोग किया गया है। (अनुच्छेद 16(4) व अनुच्छेद 340) परन्तु इसको कहीं परिभाषित नहीं किया गया है। प्रो0 आन्द्रे विताई ने कृषि करने वाली जातियों को पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत सम्मिलित किया। जब कि कुछ विद्वानों के अनुसार शूद्र वर्ग ही वास्तव में पिछड़ा वर्ग है।

रेणुका अधान दल ने पिछड़े वर्गों में निम्नांकित वर्गों को सम्मिलित करने का सुझाव दिया सीमान्त किसान, खेतिहर मजदूर, बहुत छोटे दस्तकार, अनुसूचित जातियां, गरीब महिलायें, असहाय लोग जैसे - विधवाएं, अनाथ, वृद्ध एवं बेरोजगार आदि ।

संक्षेप में पिछड़ा वर्ग समाज के उस भाग को माना जाता है जो कि सामाजिक शैक्षिणिक और आर्थिक दृष्टि से (मण्डल आयोग के अनुसार भी) पिछड़ा हुआ है। इस वर्ग में मुख्यत: मध्यम श्रेणी की जातियां व कृषक जातियां आती हैं।

पिछड़े वर्ग शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग सन 1917-18 में तत्पश्चात 1930-31 में किया गया। सन 1948 में उत्तर प्रदेश सरकार ने 56 जातियों को पिछड़े वर्ग में सम्मिलित करके इन्हें शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएं देने की घोषणा की। सन 1950 में पहली बार अखिल भारतीय स्तर पर ''अखिल भारतीय स्तर पर ''अरिवल भारतीय पिछड़ा वर्ग महा संघ की स्थापना की गयी। कई राज्य सरकारों में भी पिछड़े वर्गों की सूचियां बनवायी गयी। ये पिछड़ी जातियां अलग अलग राज्यों में अलग-अलग है उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश अहिर, घोसी, यादव, भुंजीया, दर्जी, धोबी, रजक, पाल, कुसवाहा, मोया, धिमर, धीवर, कश्यप, केवट, कुम्हार, लुहार, सैनी मनिहार आदि।

## 11.9 पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित आयोग

विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा पिछड़े वर्गों का पता लगाने के लिए समय समय पर विभिन्न आयोगों की स्थापना की गयी। वैसे - मुंगेरीलाल आयोग (बिहार राज्य), एल. जी हवानूर की अध्यक्षता में आयोग (कर्नाटक राज्य) पी. डी. पेट्टर की अध्यक्षता में आयोग (केरल राज्य) केन्द्र स्तर पर अन्य पिछड़े वर्गों के सामाजिक आर्थिक उन्नयन हेतु 1953 में एक पिछड़ा वर्ग आयोग की स्थापना की गयी। इस आयोग के अध्यक्ष काका साहेब कालेलकर थे अत: इसे काका कालेलकर आयोग के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट 1955 में सरकार को दी जिसमें पिछड़े वर्गों को चिन्हित करने के निम्न आधार प्रस्तुत किये।

1. जाति संस्तरण में निम्न सामाजिक स्थिति
2. शैक्षिक विकास की कमी
3. राजकीय सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व
4. व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योगों में प्रतिनिधित्व का अभाव

आयोग ने पिछड़ वर्ग की सूची तैयार करने में जाति को प्रमुख आधार माना जिसे केन्द्र सरकार ने अस्वीकार कर दिया एवं यह भी निर्णय लिया कि पिछड़े वर्गों की कोई अखिल भारतीय सूची नहीं बनायी जा सकती। केन्द्रीय सेवाओं में पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण की स्वीकृति भी नहीं दी।

केन्द्रीय स्तर पर दूसरा आयोग 1978 में बी. पी. मण्डल की अध्यक्षता में गठित हुआ। जिसे मण्डल आयोग के नाम से जाना गया। इस आयोग द्वारा पिछड़पन को आंकने के लिए 11 मानक निर्धारित किये गये। सामाजिक कारकों के लिए 3 अंक, शैक्षिक कारकों के लिए 2 अंक व आर्थिक कारकों के लिए 1 अंक निर्धारित किया गया। जिन जातियों ने (50.0ब) यानि आधे या आधे से अधिक अंक प्राप्त किए उन्हें पिछड़े वर्ग में रखा गया।

30 अप्रैल 1982 को आयोग ने अपना प्रतिवेदन भारत सरकार को प्रस्तुत किया। आयोग ने 3,743 जातियों को पिछड़ी जातियां घोषित किया जिनकी जनसंख्या देश की आबादी का 52ब है। आयोग ने इसी अनुपात में आरक्षण की मांग की किन्तु संविधान के अनुसार 50ब से अधिक स्थान आरक्षित नहीं किये जा सकते एवं चूंकि 22.5ब स्थान पहले से ही आरक्षित थे अत पिछड़ी जातियों हेतु 27ब आरक्षण की संस्तुति की।

आयोग की इस संस्तुति को स्वीकार करते हुए 7 अगस्त 1990 को वी. पी. सिंह सरकार द्वारा इस आशय की सरकारी अधिसूचना जारी कर दी।

इस घोषणा का देशव्यापी विरोध हुआ परन्तु 16 नवम्बर 1992 को सर्वोच्च न्यायालय ने इसे (27ब आरक्षण को) वैध ठहराते हुए यह कहा कि इन जातियों के सम्पन्न लोगों (क्रीमी लेयर) को आरक्षण का लाभ नहीं दिया जाना चाहिए।

इस आयोग की सिफारिशों की जनगणना सूची की अपूर्णता क्रीमीलेयर का आधार स्पष्ट न होने व राजनीतिक चाल के कारण वृहद आलोचना भी की गयी।

## 11.10 पिछड़े वर्गों की समस्याएं

अनुसूचित जाति व जनजाति की समस्याओं पर पृथक रूप से चर्चा की जा चुकी है। अत: यहां हम मात्र अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याओं पर चर्चा करेंगे।

1. **भूमिहीन कृषक की समस्या** - हमने पूर्व ही चर्चा की है कि अन्य पिछड़े वर्गों में सीमान्त कृषक व खेतिहर मजदूर आते हैं ये अपनी व परिवार के जीवनयापन हेतु उच्च जातियों के खेतों में मजबूरी में कार्य करते हैं। जहाँ ये शारीरिक व मानसिक शोषण का शिकार का स्वयं को शिकार पाते हैं। ये नियमित रूप से रोजगार भी नहीं पा पाते इस प्रकार इनका सारा जीवन बेकारी, गरीबी, शोषण, उत्पीड़न, व अनिश्चितता भरा रहता है।

2. **कार्य की खराब दशाएं व अल्प वेतन की समस्या** - सामान्यतया असंगठित क्षेत्र से सम्बद्ध होने के कारण इनकी कार्य की दशाएं अत्यन्त दयनीय होती हैं इनके लिए कार्य के घण्टों अवकाश आदि के कोई पूर्व निर्धारित मानकों का पालन भी नहीं होता। दिहाड़ी व मौसमी रोजगार होने के कारण इन्हें या तो खानी बैठना पड़ता है या अत्यन्त अल्प वेतन पर निर्भर रहना पड़ता है।

3. **ऋणग्रस्तता** - कम आय के कारण इस वर्ग के अधिकांश सदस्य ऋणग्रस्त रहते हैं। ऋण इन्हें विरासत में मिलता है एवं आने वाली पीढ़ी के लिए छोड़कर मरते हैं असम के चाय बागानों के मजदूरों के बारे में प्रो0 गाडगिल ने लिखा है, ''उनकी स्थिति गुलामों से बेहतर नहीं थी।''

4. **निम्न सामाजिक स्थिति** - ये सामान्यतया सामाजिक स्थिति में निम्न होते हैं एवं अपने पिछड़े पन के कारण श्रम विभाजन में भी निम्न स्तर पर होते हैं ये जिन्दगी भर अकुशल श्रमिक बने रहते हैं।

5. **उच्च वर्ग द्वारा भेदभाव व अत्याचार की समस्या** - पिछड़े वर्गों का पिछड़ापन ही उनके प्रति भेदभाव व अत्याचार का कारण बन जाता है प्रो0 एम. एन.श्रीनिवास ने अपने अध्ययनों के आधार पर अन्तर्जातीय भेदभाव व शोषण के 4 आधारों का उल्लेख किया है- (1) संख्या शक्ति (2) आर्थिक व राजनीतिक शक्ति (3) धार्मिक क्रियाकलाप व जन्म के आधार पर उच्च जातीय स्थिति (4) उच्च शिक्षा व व्यवसाय। संख्या शक्ति के आधार पर यदा कदा पिछड़े वर्ग के लोग प्रभुत्वशील हो सकते हैं परन्तु अन्य आधार उनके प्रति शोषण व अत्याचार के ही द्योतक हैं इन पर सदियों से निर्योग्यताएं लादी गयी, जबरन वोट डालने पर मजबूर करना बहू बेटी की इज्जत लूटना घर व जमीन से बेघर करना आदि शोषण के अपेक्षाएं पाने जाने वाले तरीके ही हैं।

6. **संगठन का अभाव** - आम तौर पर अशिक्षित अज्ञानी व अनभिज्ञ होने के कारण ये संगठित नहीं हो पाते एवं संगठनशक्ति के अभाव में मोलभाव करने की क्षमता भी खो देते हैं।

## 11.11 पिछड़े वर्ग के कल्याण हेतु प्रावधान

**संवैधानिक प्रावधान** - अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत सरकार को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान का अधिकार है।

अनुच्छेद 16(4) सरकारी सेवाओं में किसी भी पिछड़े वर्ग के लिए जिसे पर्याप्त आरक्षण नहीं मिला है, राज्य को यह अधिकार है कि वह आरक्षण का प्रावधान कर सकता है।

अनुच्छेद 340 में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े वर्गों के समक्ष आने वाली समस्याओं का पता लगाने के लिए आयोग नियुक्त कर सकते हैं।

### अन्य कल्याणकारी कार्यक्रम

1. **राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग**- उच्चतम न्यायालय ने पिछड़े वर्गों की सूची में नाम शामिल करने की आवश्यकता और शिकायतों की जांच करने की सिफारिशों के लिए स्थायी संस्था के गठन का निर्देश दिया। अत: 14 अगस्त 1993 को राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग गठित किया गया ।

2. **राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम** - सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की आर्थिक मजबूती के लिए एवं प्रौद्योगिकी तथा उद्यम सम्बन्धी कुशलता बढ़ाने के उद्देश्य से सरकार ने 13 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम का गठन किया। निगम ने 2001-02 तक 3,81,491 लोगों के लाभ के लिए कुल 641.82

करोड़ रूपये आवंटित किए। यह सहायता विभिन्न योजनाओं जैसे – जमानत राशि ओर सावधि ऋण योजना, माइक्रो वित्त योजना तथा शैक्षिक ऋण योजना आदि के माध्यम से उपलब्ध करायी गयी।

3. **परीक्षा पूर्व कोचिंग व्यवस्था**– जिन पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों के माता पिता की वार्षिक आय एक लाख रूपये से कम है सरकार द्वारा उनके लिए प्रतियोगी परीक्षा पूर्व कोचिंग की व्यवस्था कराती है। 2001–02 में 32 संगठनों को 0.66 करोड़ रूपये जारी किये गये।

4. **छात्रावास योजना** – अन्य पिछड़े वर्गों की घनी आबादी वाले राज्यों/ केन्द्र शासित क्षेत्रों में छात्रावास बनाने का प्रावधान है। यह योजना साधन सम्पन्न वर्ग के छात्रों हेतु नहीं है। इनमें एक तिहाई छात्रावास महिलाओं हेतु व 5ब सीटों का विकलांगों हेतु आरक्षण का प्रावधान है।

5. **छात्रवृत्ति योजना** – यह योजना उन छात्र छात्राओं हेतु जो मान्यता प्राप्त विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करते हों एवं उनके माता पिता/ अभिभावक की वार्षिक आय 44500/– रूपये से कम हो मैट्रिक पूर्व यह छात्र वृत्ति वर्ष के10 माह दिये जाने का प्रावधान है इसके अतिरिक्त मैट्रिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर के बाद भी पढ़ाई पूरी करने हेतु छात्रवृत्ति दिये जाने का प्रावधान है।

6. **अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए स्वयंसेवी संगठनों को सहायता**– वे स्वयंसेवी संगठन जो पिछड़े वर्गों के कल्याण हेतु कार्यक्रम चलाते हैं उन्हें सरकार द्वारा सहायता राशि उपलब्ध करायी जाती है। यह सहायता राशि मेरिट के आधार पर तय की जाती है व स्वीकृत खर्च का 90ब तक हो सकती है। इसके लिए वर्ष 2001–02 में गैर सरकारी संगठनों द्वारा चलाए जा रहे 225 कार्यक्रमों के लिए 3.80 करोड़ रूपये जारी किए गये।

उत्तर प्रदेश में भी इस वर्ग के लोगों के लिए कल्याणकारी योजनाओं का संचालन प्रभावी ढंग से संचालित करने के उद्देश्य से 12 अगस्त, 1995 को पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग का गठन स्वतंत्र रूप से किया गया।

## 11.12 सारांश

प्रस्तुत इकाई अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्गों के अध्ययन पर आधारित है। इस इकाई में सर्वप्रथम हमने कमजोर वर्ग के अर्थ को समझने का प्रयास किया। तत्पश्चात कमजोर वर्ग से सम्बद्ध अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग के अर्थ व परिभाषा से अवगत हुए। इनकी विशेषताओं को जानने के पश्चात जनसंख्यात्मक आंकड़ों व भौगोलिक वितरण का भी संक्षिप्त अध्ययन किया। पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित केन्द्र स्तर पर गठित आयोग को भी प्रस्तुत इकाई में सम्मिलित किया गया। अन्त में इन दोनों ही कमजोर वर्गों के समक्ष आने वाली समस्याओं एवं इन समस्याओं के निवारणार्थ क्या राजकीय प्रावधान किए गये हैं। इनका भी अध्ययन किया।

## 11.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. सुभाष कश्यप एवं विश्व प्रकाश गुप्ता, राजनीति कोष, राजकमल दिल्ली, 1971 पृ0 24-25
2. कालेलकर, काका साहेब - रिपोर्ट आफ काका कालेलकर कमीशन, गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया, 1955 (3 खण्डों में)
3. मंडल वी. पी. - रिपोर्ट आफ बैकवर्ड क्लासेज कमीशन, गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया पब्लिकेशन (1981) (दो खण्डों में) पुर्नमुद्रण (1964)
4. भारत (1998) प्रकाशन विभाग दिल्ली
5. अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट (8वीं रिपोर्ट 1985-86) पृ0 44-45
6. द सिड्यूल्ड ट्राइब्स, पापुलर प्रकाशन (1963)
7. जनजातीय विकास का चार दशक, इलाहाबाद (1994)


## 11.14 प्रश्नोत्तर

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

प्र. 1 अनुसूचित जनजाति से क्या तात्पर्य है इनके भौगोलिक वितरण पर प्रकाश डालें?

प्र. 2 भारतीय परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जनजाति की समस्याओं का उल्लेख करें एवं इनकी समस्याओं के समाधान हेतु अपनाए गये कल्याणकारी कार्यक्रमों का उल्लेख करें?

प्र. 3 पिछड़े वर्ग को परिभाषित करें? एवं उनके सन्दर्भ में गठित आयोगों की विवेचना करें?

प्र. 4 पिछड़े वर्ग की समस्याओं का वर्णन करें एवं इनके कल्याण हेतु अपनाए गये प्रावधानों की चर्चा करें?

### लघुउत्तरीय प्रश्न

प्र. 1 अनुसूचित जनजाति की विशेषताओं का उल्लेख करें?

प्र. 2 अनुसूचित जनजातियों को किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है संक्षेप में विवेचित करें?

प्र. 3 अन्य पिछड़े वर्ग को परिभाषित करें?

प्र. 4 पिछड़े वर्ग को किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

### बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र. 1 जनजातियों को पिछड़े हिन्दू किसने माना है?

(अ) डॉ. दुबे (ब) जी. एस. घुरिए (स) एम. एन. श्रीनिवास

(द) अक्षय देसाइ

प्र. 2 सर्वाधिक अनुसूचित जनजाति जनसंख्या किस राज्य में हैं?

(अ) बिहार (ब) उड़ीसा (स) उत्तर प्रदेश (द) मध्य प्रदेश

प्र. 3 कृषि करने वाली जातियों को मुख्यत: पिछड़े वर्ग में किसने सम्मिलित किया है?

(अ) डॉ. घुरिए (ब) एम. एन. श्रीनिवास (स) डॉ. एस.सी. दुबे

(द) आन्द्रे बिताई

प्र. 4 राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम की स्थापना कब की गयी?

(अ) 1990 (ब) 1985 (स) 1992 (द) 1996

उत्तर 1. (ब) 2. (द) 3. (द)4. (स)

# इकाई 12 कमजोर वर्ग : महिला व बाल विकास : समस्याएँ व प्रावधान

## इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य
12.2 प्रस्तावना
12.3 कमजोर वर्ग—महिला एवं शिशु
12.4 महिला विकास
12.5 महिलाओं की जनसंख्यात्मक स्थिति
12.6 भारतीय महिलाओं की समस्याएँ
12.7 कल्याणकारी प्रावधान
12.8 बाल विकास—अर्थ
12.9 बाल कल्याण के उद्देश्य
12.10 बाल कल्याण से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान व अन्य कल्याणकारी कार्यक्रम
12.11 सारांश
12.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची
12.13 प्रश्नोत्तर

## 12.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य समाज के कमजोर वर्ग के अन्तर्गत महिला व बाल विकास से सम्बन्धित है। इस इकाई में हम महिलाओं व बच्चों की समस्याओं व उनके विकास हेतु कल्याणकारी कार्यक्रमों का अलग-अलग अध्ययन करेंगे। इस इकाई के माध्यम से हम महिलाओं की जनसंख्यात्मक स्थिति व उनकी समस्याओं को समझ सकेंगे। इनकी समस्याओं के निवारणार्थ हम विभिन्न संवैधानिक प्रयत्नों व अन्य कल्याणकारी नीतियों में भी अवगत हो सकेंगे। बाल विकास के अन्तर्गत हम बाल विकास का अर्थ व बाल विकास के उद्देश्य का अध्ययन करेंगे। तत्पश्चात बाल विकास सम्बन्धित विभिन्न संवैधानिक व अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों से भी अवगत हो सकेंगे।

## 12.2 प्रस्तावना

प्रत्येक समाज में सम्पन्न उच्च या अभिजात वर्ग के साथ-साथ निर्धन, निम्न या कमजोर वर्ग भी पाया जाता है। भारतीय सन्दर्भ में कमजोर वर्ग एक ऐसा वर्ग है, जो सदियों से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से शोषित व उपेक्षित रहा है। कमजोर वर्ग में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग के साथ-साथ महिलाओं एवं शिशुओं को भी सम्मिलित किया जाता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश के नीति नियंताओं ने भारत को 'कल्याणकारी राज्य' के रूप में स्थापित करने की योजना बनायी। जिसमें कमजोर वर्ग के हितों का विशेष ध्यान रखा गया। अनुसूचित जाति, जनजाति व अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याओं व विकास हेतु संवैधानिक प्रयासों एवं कल्याणकारी कार्यक्रमों का हम पूर्व इकाइयों में अध्ययन कर चुके हैं। अत: प्रस्तुत इकाई महिलाओं एवं बच्चों/बच्चियों से सम्बन्धित समस्याओं व इनके विकास से सम्बन्धित अपनायी गयी नीतियों व कल्याणकारी कार्यक्रम के अध्ययन पर आधारित हैं।

## 12.3 कमजोर वर्ग एवं शिशु, महिला

महिला व बच्चे किसी भी देश की सबसे बड़ी पूंजी होते हैं एवं देश का भावी विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उन्हें अपने विकास के कैसे अवसर उपलब्ध हैं। मानव संसाधन के विकास में सबसे पहले माँ व शिशु का स्थान आता है। इसीलिए विकासवादी योजनाओं और उन पर आधारित कार्यक्रमों का लाभ यदि बच्चों व माताओं को नहीं पहुँचेगा, तो मानव संसाधन विकास के लक्ष्य पूरे नहीं हो सकते।

अत: भारत में प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही महिला व बाल विकास पर बल दिया गया तथा अनेकानेक योजनाएं समय बद्ध तरीके से कार्यान्वित की गयी। लेकिन इन प्रयासों के बावजूद भी महिला व बाल विकास के क्षेत्र में अनेक विकट समस्याएँ विद्यमान है।

## 12.4 महिला विकास

महिलायें साधारणतया प्रत्येक समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है, जिनकी संख्या लगभग पुरुषों के समान ही होती है। जहाँ तक भारतीय समाज का प्रश्न है। प्राचीन काल में स्त्रियों की स्थिति उच्च रही थी। यही कारण है कि उन्हें पुरुष की अर्धांगिनी कहा गया। परन्तु धीरे-धीरे इनके अधिकार छिनते गये एवं स्थिति में गिरावट आने से इन्हें परतंत्र, नि:सहाय व कमजोर मान लिया गया। समाज सुधारकों के स्वतंत्रता पश्चात् संवैधानिक प्रयासों से इनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है।

## 12.5 भारतीय महिलाओं की जनसंख्यात्मक स्थिति

विश्व में आधी जनसंख्या स्त्रियों की है, किन्तु भारतवर्ष में पुरुषों की तुलना में यह अपेक्षाकृत कम है, जिसके कारण लिंग अनुपात में असमानता परिलक्षित होती है। 2001 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या 102.70 करोड़ है। इसमें से 53.12 करोड़ पुरुष तथा 49.57 करोड़ स्त्रियाँ हैं। जहाँ तक स्त्री और पुरुष अनुपात का प्रश्न है यह 933 है। 2001 में साक्षरता दर 1991 52.21% की तुलना में 65.38% हो गया, जिसमें पुरुष साक्षरता दर 75.85% तथा स्त्री साक्षरता दर 54.16% है। जहाँ तक कार्यशील महिलाओं का प्रश्न है। 1971 में केवल 13% देश की कुल कार्यशील जनसंख्या में कार्यरत थीं। जबकि 1991 में यह प्रतिशत बढ़कर 28.57 हो गया। अधिकांश श्रमिक महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत हैं। ग्रामीण महिला श्रमिकों ने 80% असंगठित क्षेत्रों में जैसे घरेलू उद्योग, छोटे-मोटे व्यापार और सेवाएँ, भवन निर्माण आदि में कार्यरत हैं। प्रशासनिक व सार्वजनिक क्षेत्र के

संस्थानों में कार्यशील जनसंख्या का लगभग 12% भाग महिलाएँ हैं।

## 12.6 भारतीय महिलाओं की समस्याएँ

भारतीय नारी की सामाजिक परिस्थिति और समस्याओं का अध्ययन अपने में एक बड़ा जटिल विषय है। एम० एन० श्रीनिवास का मानना है कि इसके अनेक स्वरूप हैं और सामान्यीकरण करना प्राय: असम्भव है। क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों में नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न वर्गों में, विभिन्न धर्मों में और जाति समूहों में नारी की सामाजिक परिस्थिति और उससे जनित समस्याएँ बहुत भिन्नताएँ रखती हैं। इतना ही नहीं वरन् आदर्श और व्यवहार में भी बहुत अन्तर है एक ओर यदि नारी को 'गृहस्वामिनी', 'अर्द्धांगिनी', 'देवी' कहा जाता है, तो दूसरी ओर वह सदैव ही पर निर्भरता की स्थिति में बतायी जाती है। विभिन्न शास्त्र परस्पर विरोधी आदर्श प्रस्तुत करते हैं। इसलिए उनकी समस्याओं पर विचार करना कठिन हो जाता है। फिर भी कुछ समस्याएँ ऐसी हैं, जिनसे हमारे समाज की नारी पीड़ित हैं। महिलाओं के समक्ष आने वाली समस्याओं को निम्न रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

1. **वैवाहिक समस्याएँ—**

**( अ ) बाल विवाह**—यद्यपि 18 वर्ष से कम आयु की लड़की का विवाह वैधानिक दृष्टि से निषिद्ध है, किन्तु फिर भी विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी इस कानून का अनुपालन बहुत कम दिखाई देता है। कम आयु में विवाह होने संतानें होने एवं पारिवारिक दायित्व आ जाने के कारण, स्त्रियों का स्वास्थ्य गिर जाता है और वे रूग्ण बनी रहती हैं। उनकी औसत जीवन अवधि घट जाती हैं। जन्म दर में वृद्धि होती है, परन्तु संतानें दुर्बल उत्पन्न होती हैं।

**( ब ) वैधब्य**—यद्यपि कानून द्वारा विधवा पुनर्विवाह वैध है तथापि हिन्दू समाज में सामान्य तया विधवाएँ दूसरा विवाह नहीं कर पातीं। विधवाओं से बड़े संयमी व तपस्वी जीवन की आशा की जाती हैं। शुभ कार्यों में इनकी उपस्थिति को अपशकुन माना जाता है। यहाँ तक कि इन्हें अच्छा भोजन करने व अच्छे वस्त्र पहनने की मनाही होती है। विधवा पुनर्विवाह के अभाव ने सती प्रथा को जन्म दिया, जिसके अनुसार एक स्त्री अपने पति की मृत्यु के बाद उसकी चिता में आत्मदाह कर लेती है। वर्तमान में विधवाओं की स्थिति में पेंशन, सम्पत्ति, आजीवन पारिवारिक भत्ता आदि अधिकारों के कारण सुधार हुआ है, किन्तु स्थिति अब भी विकट है।

**( स ) दहेज**—दहेज प्रथा के कारण माता-पिता के लिए लड़कियों का विवाह एक अभिशाप बन गया है। जीवन साथी चुनने का सीमित क्षेत्र, धन का महत्व, मंहगी शिक्षा, सामाजिक प्रथा व प्रदर्शन झूठी शान आदि के कारण दहेज लेना और देना आवश्यक हो गया है। दहेज के कारण मादा भ्रूण हत्या, महिलाओं का जलाया जाना, आत्म-हत्याएं, बेमेल विवाह, ऋणग्रस्तती, निम्न जीवन स्तर, अनैतिकता, भ्रष्टाचार आदि सामाजिक बुराइयों ने जन्म लिया है। भारत सरकार की 1993 की एक रिपोर्ट के आधार पर भारत में प्रत्येक 102 मिनट में दहेज से सम्बन्धित एक हत्या होती है। इस प्रकार एक दिन में दहेज से सम्बन्धित 53 तथा पूरे वर्ष में अनुमानत: 5000 दहेज हत्याएँ होती हैं।

**( द ) परदा प्रथा**—भारतीय समाज में संस्कारिक स्त्री वही मानी जाती हैं, जो घूंघट निकालकर पुरुषों से दूरी बरतती हैं। इस प्रथा के कारण स्त्रियों के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता है। वे शिक्षा ग्रहण करने व अर्जन करने से वंचित रह जाती है।

(ङ) **वेश्यावृत्ति व देवदासी प्रथा**—वेश्यावृत्ति, यौनतृप्ति का एक विकृत एवं घृणित साधन माना गया है। इस प्राचीन व्यवसाय का वर्तमान में व्यापारीकरण हुआ है, विधवा विवाह का अभाव, यौन परिवत्रता की अनिवार्यता, दहेज प्रथा, धन की आकांक्षा, गरीबी, नारी की आर्थिक निर्भरता, आदि ऐसे कारण हैं, जिन्होंने इस बुराई को फैलाने में योगदान दिया है।

कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के येलम्मा और पोचम्मा मंदिरों में प्रचलित देवदासी प्रथा के अन्तर्गत लड़कियों को देवता की सेवा के लिए समर्पित कर दिया जाता है, परन्तु वे यौन भूख का शिकार बनती हैं और आखिर में वेश्यावृत्ति द्वारा अपनी जीविका चलाती हैं।

2. **पारिवारिक समस्याएँ**—पुरुष प्रधान समाज होने के कारण पुरुषों को अनेक अधिकार एवं सुविधाएँ प्राप्त हैं। किन्तु स्त्रियों को उनसे वंचित रखा गया है। पारम्परिक हिन्दू संयुक्त परिवारों में स्त्रियों का जीवन खाना बनाने, बच्चों को जन्म देने उनकी देख-रेख करने एवं परिवार के सदस्यों की सेवा में ही व्यतीत हो जाता है। शिक्षा व बाहरी संसार से उसका कोई नाता नहीं रह पाता है। वह सार्वजनिक जीवन से अनभिज्ञ बनी रहती है और उसके व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता है।

3. **स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ**—पुरुषों का अधिक महत्व होने के कारण महिलाओं के स्वास्थ्य का कम ध्यान रखा जाता है। असमान लिंग अनुपात, स्त्रियों की औसत आयु में कमी एवं मृत्युदर की अधिकता के लिए, बाल विवाह, प्रसव काल में मृत्यु, स्त्रियों की आर्थिक पराश्रितता, कुपोषण व स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव आदि उत्तरदायी है।

4. **शैक्षणिक समस्याएँ**—सन् 2001 की जनगणना के अनुसार स्त्रियों की साक्षरता दर 54.16% तथा पुरुषों की 75.85% तथा पुरुषों की 75.85% है। महिलाओं का कार्यक्षेत्र घर की चहार दीवारी के अन्दर माने जाने के कारण इसकी शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता है। नगरों की तुलना में महिलाओं की ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति और भी अधिक दयनीय है।

5. **आर्थिक समस्याएँ**—भारतीय नारियों की समस्याएँ उनकी आर्थिक पराश्रितता गरीबी व शोषण से जुड़ी हुयी है। इन्हें पुरुषों की तुलना में मिलने वाली मजदूरी आज भी बहुत कम है। एक ओर पुरुषों की तुलना में कामकाजी महिलाओं की संख्या बहुत कम है, लेकिन जो स्त्रियाँ विभिन्न सेवाओं द्वारा आजीविका उपार्जित कर रही है। उनको घर के नौकरी से सम्बन्धित दोनों ही कार्य करने पड़ते हैं। संयुक्त परिवार प्रणाली, पुरुषों पर निर्भरता, स्त्री अशिक्षा, अज्ञानता, परदा प्रथा, रुढ़िवादिता आदि कारणों से स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर तक ही सीमित है। अत: अपने भरण-पोषण के लिए उन्हें पुरुष की ओर देखना पड़ता है। यहाँ तक कि धन अर्जित करने वाली स्त्रियाँ स्वेच्छा से धन व्यय भी नहीं कर पाती हैं।

6. **नैतिक शोषण की समस्या**—भारत में जैसे-जैसे आर्थिक, सार्वजनिक और राजनैतिक क्षेत्रों में स्त्रियों की सहभागिता बढ़ी, किसी न किसी रूप में उनके नैतिक शोषण में भी वृद्धि होती गयी। औद्योगीकरण, नगरीकरण, चलचित्र, अश्लील साहित्य, विज्ञापन आदि के कारण बढ़ते सुलेपन ने महिलाओं के विरुद्ध शोषण में वृद्धि की है। एक टी० वी० रिपोर्ट 2000 के अनुसार इस समय महिलाओं के साथ प्रतिवर्ष 8 हजार बलात्कार की

घटनाएँ हो रही हैं।

## 12.7 महिलाओं के कल्याण हेतु किए गए प्रावधान

### संवैधानिक प्रावधान—

**अनुच्छेद—14 :** विधि की नजर में बराबरी व कानूनों की बराबर रक्षा।

**अनुच्छेद—15 :** लिंग के आधार पर भेद-भाव न होना व राज्यों को महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान।

**अनुच्छेद—16 :** रोजगार के अवसरों की समानता

**अनुच्छेद—42 :** कार्य की मानवीय दशाएँ तथा महिलाओं के लिए मातृत्व राहत।

**अनुच्छेद—51 ए-ई :** महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध प्रथाओं को त्यागना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य।

**अन्य कानूनी उपाय—**

**विशेष विवाह अधिनियम—1954,** किसी भी जाति अथवा धर्म की 18 वर्षीय लड़की तथा 21 वर्षीय लड़का इस कानून से लाभान्वित हो सकते हैं।

**हिन्दू विवाह अधिनियम—1955,** स्त्रियों को भी विवाह विच्छेद सम्बन्धी सुविधा प्रदान की गयी।

**हिन्दू दत्तक एवं निर्वाह अधिनियम—1955,** स्वस्थ मस्तिष्क की अविवाहित महिला, विधवा अथवा तलाकशुदा एक बच्चे को गोद ले सकती है।

**हिन्दू उत्तराधिकार कानून ( अधिनियम—1956 ),** पुरुषों के समान सम्पत्ति व उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया।

**दहेज निषेध अधिनियम—1961,** 1986 में संशोधन कर उसे और अधिक कठोर बना दिया।

**मातृत्व हित लाभ अधिनियम—1961, 1976 और समान पारिश्रमिक कानून—1976,** कानून के अन्तर्गत (1) शिशु जन्म के उपरान्त 6 सप्ताह का वेतन सहित अवकाश, प्रसव के 6 सप्ताह पूर्व से ठीक पहले एक माह के लिए श्रम साध्य कार्यों में न लगाना तथा

(2) पुरुषों के समान, समानकार्य हेतु समान पारिश्रमिक के भुगतान का प्रावधान है।

**गर्भपात अधिनियम—1971,** चिकित्सीय दृष्टिकोण से उचित होने पर गर्भपात की अनुमति प्रदान करता है।

**प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक ( दुरूपयोग नियंत्रण एवं रोकथाम ) अधिनियम, 1994,** लिंग निर्धारण का परीक्षण कर कन्या भ्रूण की पहचान पश्चात् गैर कानून गर्भपात पर रोक लगाने का प्रावधान किया गया है।

**महिलाओं का अश्लील चित्रण ( निवारण ) अधिनियम—1986,** इस अधिनियम के अन्तर्गत विज्ञापनों में महिलाओं के अश्लील चित्रण के दोषी व्यक्तियों को दो हजार रुपये एवं दो वर्ष तक का कारावास का दण्ड देने का प्रावधान किया गया।

**अन्य कल्याणकारी कार्यक्रम :**

1. **राष्ट्रीय महिला कोष**—वर्ष 1992-93 में गठित राष्ट्रीय महिला कोष का उद्देश्य गरीब महिलाओं को ऋण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करना है।

2. **महिला विकास निगम (WDC)**—महिलाओं को उत्तम रोजगार सेवाएँ उपलब्ध कराने की दृष्टि से सन् 1986-87 में 'महिला विकास निगम' स्थापित किए गये।

3. **राष्ट्रीय महिला आयोग**—31 जनवरी 1992 को गठित यह आयोग महिलाओं के लिए संवैधानिक और कानूनी उपायों की समीक्षा, उपचारात्मक उपाय सुझाने, शिकायतों को दूर करने, अध्ययन व जांच पड़ताल करने, प्रोन्नति व शैक्षिक अनुसंधान, नीति विषयक मुद्दों पर सलाह देने का कार्य करता है।

4. **महिला समृद्धि योजना**—2 अक्टूबर 1993 में महिला समृद्धि योजना प्रारम्भ की गयी है। इसके अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएँ डाकघर में 300 रुपये जमाकर सकती है। एक वर्ष तक ये रुपये जमा रहने पर सरकार उन्हें 75 रुपये अपनी ओर से अंशदान देती है।

5. **राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना**—इसमें गरीबी रेखा से नीचे परिवारों की 19 वर्ष या उससे अधिक की आयु की गर्भवती महिलाओं को पहले दो बच्चों जन्म पर आर्थिक सहायत 500/- की दी जाती है।

6. **नोराड द्वारा सहायता प्राप्त योजना**—1983 से नार्वे की एजेंसी नोराड द्वारा महिलाओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए सार्वजनिक उपक्रमों, स्वायत्त व स्वयंसेवी संगठनों को सहायता प्रदान की जाती है। उन्हें कम्प्यूटर इलेक्ट्रानिक्स, हथकरघा, वस्त्र निर्माण, कताई, बुनाई, कैण्टीन प्रबन्ध, सौन्दर्य रक्षा आदि व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जाता है।

7. **ड्वाकरा योजना (DWACRA)**—1982-83 से देश में लागू इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं व बच्चों का विकास करना, समूह के माध्यम से आय में वृद्धि करना रहा है। वर्तमान में यह योजना स्वर्ण जयन्ती ग्रामीण स्वरोजगार योजना में सम्मिलित कर दी गयी है एवं स्वयं सहायता समूह के माध्यम से महिलाओं को व्यावसायिक सुविधा प्रदान कर रही है।

8. **केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड**—1953 में महिलाओं, बच्चों तथा विकलांगों के कल्याण कार्यक्रमों को स्वयं सेवी संगठनों के माध्यम से चलाने के लिए समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की गयी। इसके अन्तर्गत 1958 से जरूरतमंद एवं अनाथ महिलाओं को कार्य दिलाने में मदद करने का प्रावधान है।

9. **विविध कार्य**—प्रौढ़ महिलाओं के व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं शिक्षा का कार्य, शार्टस्टे होम्स, कामकाजी महिलाओं के हॉस्टल, शिशु सदन आदि कार्य चल रहे हैं।

10. **इंदिरा महिला योजना**—यह योजना 20 अगस्त 1995 से 200 विकास खण्डों में प्रारम्भ की गयी। इसका उद्देश्य निचले स्तर पर महिलाओं को संगठित व अधिकार सम्पन्न बनाना है।

11. **स्व-शक्ति परियोजना**—अक्टूबर 1998 में 5 वर्षों के लिए 7 राज्यों के जिलों में यह योजना शुरू की गयी। दिसम्बर 2001 से दो राज्यों और 19 नये जिलों में और शुरू की गयी। परियोजना का मुख्य लक्ष्य महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए अनुकूल वातावरण

तैयार करना है।

12. **स्त्री शक्ति पुरस्कार**—1999 में शुरू किए गये ये पुरस्कार प्रति वर्ष ऐतिहासिक प्रसिद्धि प्राप्त महिलाओं के नाम पर उन महिलाओं का दिए जाते हैं, जिन्होंने कठिन परिस्थितियों में सफलता प्राप्त की है और महिलाओं के अधिकारों हेतु लड़ी है।

13. **स्वाधार योजना**—दीन-हीन विधवाएं, वृद्धा, जेल से रिहा महिला कैदी, घर से बेघर महिलाओं की मदद व पुनर्वास हेतु यह योजना 2001-02 में प्रारम्भ की गयी।

इसी तरह महिलाओं को केन्द्र बनाकर उनकी समस्याओं पर विचार विमर्श करने, कल्याणकारी कार्यक्रमों की समीक्षा हेतु प्रति वर्ष 8 मार्च को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाता है।

## 12.8 बाल विकास अर्थ

बाल विकास सामान्यतया दो अर्थों में देखा जाता है।

1. **सीमित अर्थ**—सीमित अर्थ में बाल विकास से तात्पर्य विकलांग, असहाय, मंदित, अनाथ, गोद लिए गये एवं अन्य देखभाल केन्द्रों में रखे गये बच्चों का पर्यावरण के साथ सामंजस्य।

2. **व्यापक अर्थ**—का तात्पर्य बालकों/बालिकाओं के पूर्ण विकास से सम्बन्धित है चाहे वह बालक/बालिका सामान्य हो या असामान्य। सुविधाएँ व सेवाएं सभी के लिए उपलब्ध होनी चाहिए।

**डेविड फैनशेल के अनुसार** "विस्तृत अर्थ में बाल विकास शब्द विभिन्न प्रकार के राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं स्थानीय स्तर पर प्रयासों को संदर्भित करता है जो बच्चों के स्वस्थ विकास के लिए किए जाते हैं।

भारतीय योजना आयोग ने बाल कल्याण का अर्थ बालक के सम्पूर्म कल्याण से लगाया है इसके अन्तर्गत वे सम्पूर्ण आर्थिक, प्रशासनिक, प्राविधिक, शैक्षिक, और सामाजिक प्रयत्न आते हैं जिनका उद्देश्य प्रत्येक बालक को विकास एवं वृद्धि के समान अवसर प्रदान करना है।

## 12.9 बालक कल्याण के उद्देश्य

बालक कल्याण के निम्न उद्देश्य हैं :

1. बालकों की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना तथा उनके विकास के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराना।

2. शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, शैक्षिक एवं व्यावहारिक विकास के लिए सेवाओं का आयोजन करना।

3. कमजोर व पिछड़े बालकों को सुरक्षा प्रदान करना जिससे उनका विकास अवरूद्ध न हो और वे स्वस्थ व्यक्ति विकसित कर सके।

4. ऐसे बच्चों के लिए जो परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में असमर्थ हो, उनके लिए विशेष प्रकार की सेवाएं आयोजित करना।

5. शारीरिक, संवेगात्मक, मानसिक तथा सामाजिक रूप से बाधित बच्चों की चिकित्सा व्यवस्था एवं पुनर्वास का प्रबन्ध करना।

6. रोगों से बचाव करना तथा स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना तथा

7. आत्म निर्भरता विकसित करना।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बालक कल्याण का उद्देश्य उन सेवाओं को उपलब्ध कराना है। जिनसे सामान्य बच्चों तथा समस्या ग्रस्त बच्चों विशेष रूप से पिछड़े एवं कमजोर वर्ग के बच्चों का समुचित विकास हो सके तथा विकलांग एवं उपेक्षित बच्चों का पुनर्वास सम्भव हो सके।

## 12.10 बालक कल्याण सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान

### अन्य कल्याणकारी कार्यक्रम—

**अनुच्छेद - 15** के अनुसार राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार है।

**अनुच्छेद - 24** 14 वर्ष में कम आयु के बच्चों को किसी कारखाने अथवा खान अथवा जोखिम वाले कार्य में लगाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

नीति निर्देशक तत्वों में भी बच्चों के अधिकारों की रक्षा की व्यवस्था की गयी है।

अनुच्छेद - 39 (ङ) पुरूष व स्त्री कामगारों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो, आर्थिक अवस्था से विवश होकर ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु व शक्ति के अनुकूल न हो।

**अनुच्छेद - 39 ( च )** स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ्य विकास का अवसर प्रदान करने की बात कही गयी।

**अनुच्छेद - 45** के अन्तर्गत संविधान लागू होने के 10 वर्ष के अंदर राज्य 14 वर्ष तक की आयु तक के बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध करेग।

**अनुच्छेद - 42, 46, 47** में राज्य को निर्देश दिया गया है कि वह मातृत्व सहायता और कमजोर वर्गों के लोगों को शैक्षिक एवं आर्थिक उन्नित के अवसर प्रदान करें।

### बच्चों की स्थिति में सुधार हेतु पारित विधान—

बच्चों के कल्याण से सम्बन्धित 250 से भी अधिक कानून हैं जो बाल कल्याण कि विभिन्न क्षेत्रों जैसे शिक्षा, श्रम, रोजगार, शारीरिक एवं मानसिक शोषण और कानूनी सुरक्षा आदि से सम्बन्धित है। इन कानूनों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. **बच्चों के सेवायोजन पर रोक लगाने सम्बन्धी विधान**—कारखाना अधिनियम 1948, खान अधिनियम 1952, बच्चों का सेवायोजन अधिनियम 1938 बच्चों के सेवायोजन से सम्बन्धित है इनके अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को रोजगार में नहीं लगाया जा सकता। उनसे साढ़े 4 घण्टों से अधिक कार्य नहीं लिया जा सकता। काम के घण्टों के मध्य 1 घण्टे का व 15 दिन कार्य करने के पश्चात् 1 दिन का सवेतन अवकाश दिये जाने का प्रावधान है। इसी तरह बीड़ी, कालीन, सीमेन्ट, चमड़ा, इत्यादि उद्योगों में 12 वर्ष से कम आयु वाले बालकों को रोजगार में नहीं लगाया जा सकता।

2. **बाल कल्याण सम्बन्धी विधान**—इसमें प्रमुख रूप से उपेक्षित, बाधित, शोषित व अपराधी बच्चों से सम्बन्धित विधान आते हैं। जिनमें इन बच्चों के सुधार उपचार, शिक्षा,

स्वास्थ्य इत्यादि की व्यवस्था की गयी है। इन विधानों में प्रमुख रूप से किशोर न्याय अधिनियम 1986 तथा संशोधित रूप किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल तथा सुरक्षा अधिनियम 2000, महिला एवं बाल संस्था (लाइसेंस) अधिनियम 1993 अनाथालय एवं दातव्य ग्रह (अधीक्षण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1960 आदि हैं।

**3. बालक उपचारों से निपटने सम्बन्धी विधान**—भारतीय दण्ड संहिता तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता एवं बाल अधिनियम 1960 तथा बाल न्याय अधिनियम 1986 में विशेष रूप से बच्चों के उपचारों से निपटने हेतु पृथक रूप से व्यवस्था की गयी है। 7 वर्ष से कम आयु के बालक का आपराधिक कृत्य अपराध नहीं माना जा सकता। 7 से 12 वर्ष की आयु के बच्चे, यदि उसमें परिपक्वता कम हो तो उसके कृत्य को भी अपराध नहीं माना जाएगा। उपचारी बच्चे को जमानत पर अनिवार्यत: छोड़ने का प्रावधान है। युवा व्यक्ति हानिकारक प्रकाशन अधिनियम 1956 में उन प्रकाशनों पर प्रतिबन्ध लगाया गया है जिससे बच्चों को नैतिक या अन्य किसी प्रकार की हानि होने की सम्भावना है।

**4. बच्चों से सम्बन्धित पारिवारिक विधान**—विशेष विवाह अधिनियम 1954 के अनुसार किसी भी समुदाय से सम्बन्धित पक्ष हो यदि लड़के की आयु 21 वर्ष व लड़की की आयु 18 वर्ष की हो चुकी हो तो वे विवाह कर सकते हैं। हिन्दू विवाह अधिनियम (1955) संशोधित बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1978 द्वारा लड़के की आयु 21 व लड़की आयु 18 वर्ष होना आवश्यक है।

बच्चों की वैधता को स्पष्ट करने का कार्य भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 में प्रावधानित है। भारतीय संविदा अधिनियम 1872 के अनुसार नाबालिग द्वारा किया गया समझौता या संविदा अमान्य है। लेकिन यदि वह आवश्यक वस्तुओं के सम्बन्ध में रख-रखाव हेतु किया गया है तो वह मान्य होगा।

**बाल विकास समिति**—1968 में घोषित शिक्षा नीति द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की बात की गयी। 1986 में परिवर्तित नहीं शिक्षा नीति में प्राथमिक विद्यालयों में ममौलिक एवं आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराने की व्यवस्था पर ध्यान केन्द्रित किया गया।

2000 ई० तक सबको स्वास्थ्य नामक नीति 1977 की अल्मामारा घोषणा के आधार पर बनायी गयी। इसके अन्तर्गत जनसंख्या को स्थिर रखने की बात की गयी। बच्चों को विशेष प्रकार की बीमारियों से संरक्षित करने के लिए उनके टीकाकरण, मातृ एवं शिशु संरक्षण और देखभाल से सम्बन्धित क्रियाओं को पुनर्गठित व पुनर्गठित व पुननिर्मित करने का प्रावधान किया गया।

**राष्ट्रीय बाल नीति (1975)**—1967 में नियुक्त बच्चों के कार्यक्रमों के निर्माण सम्बन्धी समिति की संस्तुतियों के आधार पर 1974 में राष्ट्रीय बाल नीति घोषित की गयी। जिसके अन्तर्गत निम्न मुद्दों को सम्मिलित किया गया।

बच्चों हेतु एक व्यापक स्वास्थय कार्यक्म, पौष्टिक आहार सम्बन्धी सेवा, गर्भवती व धात्री माताओं की स्वास्थ्य रक्षा, 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की नि:शुल्क शिक्षा, औपचारिक शिक्षा से लाभ उठाने में असमर्थ बच्चों को उनकी आवश्यकतानुसार शिक्षा देना, शारीरिक शिक्षा, अपराधी भीख मांगने वाले बच्चों की शिक्षा, प्रशिक्षण पुनर्वास, बालश्रम से बचाव,

विकलांग, बाधित हेतु विशेष उपचार, संकट व प्रकृति आपदा के समय संरक्षण व सहायता, कमजोर वर्ग के प्रतिभाशाली बच्चे का विकास, पारिवारिक विवाद से बच्चों का संरक्षण।

**समन्वित बाल विकास कार्यक्रम (ICDS)**—1975-76 में देश के 33 विकास खण्डों में शुरू की गयी (ICDS) इस समय 4200 विकास खण्डों में चलायी जा रही है। जिसके अन्तर्गत लगभग 55.9 लाख माताओं व 6 वर्ष की आयु तक 264.86 लाख बच्चे लाभ प्राप्त कर रहें हैं।

1999-2000 में देशीय संसाधन व विश्व बैंक सहायतातीत 461 नयी परियोजनाओं की स्वीकृति दी गयी है। जिन्हें 9वीं पंचवर्षीय योजना के तहत 3 वर्षों हेतु (ICDS III) के अन्तर्गत मंजूरी दी गयी है।

इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थी वर्ग हैं—0 से 6 आयु वर्ष तक के पंजीकृत बच्चे, गर्भवर्ती, धात्री महिलाएं, किशोरी बालिकाएं।

प्रदान की जाने वाले मुख्य सेवाएं हैं—

1. अनौपचारिक शिक्षा 2. स्वास्थ्य जांच 3. पुष्टाहार 4. संदर्भ सेवाएं 5. टीकाकरण 6. पोषण व स्वास्थ्य सम्बन्धित शिक्षा।

उपरोक्त सेवाओं को प्रदान करने के लिए ग्राम स्तर पर मैदानी क्षेत्र में 1000 जनसंख्या व पर्वतीय में 700 की जनसंख्या में एक आंगनवाड़ी केन्द्र स्थापित किया गया है जिसकी निगरानी एक आंगनवाड़ी कार्यकत्री व सहायिका करती है इनके कार्यो के निर्देशन के लिए एक क्षेत्रीय पर्यवेक्षिका की नियुक्ति की जाती है विकास खण्ड पर सम्पूर्ण कार्यक्रम के संचालन हेतु एक बाल-विकास परियोजना अधिकारी की नियुक्ति की जाती है।

**अन्य गतिविधियाँ—**

1. 1999 में कोलम्बों में स्वास्थ्य जनसंख्या और बाल कल्याण गतिविधियों से सम्बन्धित सार्क की तकनीकी बैठक हुयी।

2. बच्चों के अधिकार के लिए महिला व बाल विकास विभाग के सचिव की अध्यक्षता में 15 सदस्यों का राष्ट्रीय तंत्र गठित किया है।

3. राष्ट्रीय बाल आयोग गठित करने की प्रक्रिया की 1998 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय की संसद की स्थायी समिति ने मंजूरी दे दी।

4. जिन क्षेत्रों में आंगनबाड़ी केन्द्र नहीं है बाल-वाड़ियों की स्थापना की गयी है। 1999-2000 के दौरान 1200 बालवाड़ियों हेतु अनुदान दिया गया।

5. विपत्ति में फंसे बच्चों के लिए चाइल्ड लाइन सेवा (नि:शुल्क फोन सेवा) प्रारम्भ की गयी है। इसके अन्तर्गत विपत्तिग्रस्त बच्चे व उनके अभिभावक 1098 नम्बर डायल कर सम्पर्क कर सकते हैं।

**किशोर न्याय ( बच्चों की देख भाल एवं सुरक्षा ) अधिनियम, 2000**—यह किशोर न्याय अधिनियम, 1986 का संशोधित रूप है। यह जरूरतमन्द बच्चों की देखभाल सुरक्षा और अन्तत: पुनर्वास का प्रावधान करता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत किशोरों से सम्बन्धित मामलों को 4 महीनों की अवधि में पूरा किये जाने का प्रावधान है एवं इनके विरुद्ध सभी अपराधों को संज्ञेय अपराध बनाया गया है। एक हले या जिलों के समूह में किशोर न्याय बोर्ड और बाल कल्याण समिति की स्थापना को अनिवार्य बना दिया गया है।

## 12.11 सारांश

प्रस्तुत इकाई समाज के कमजोर वर्ग में महिला व बाल विकास के अध्ययन पर आधारित थी। इस इकाई में हमने महिला व बाल विकास के अर्थ समस्याओं व कल्याणकारी प्रावधानों का अलग-अलग अध्ययन किया। महिलाओं की जनसंख्यात्मक स्थिति उनके प्रति सामाजिक भेदभाव को किस तरह दर्शाती है तथा साथ ही पारिवारिक वैवाहिक, आर्थिक, शैक्षणिक, शोषण सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन किया। इन समस्याओं के निवारणार्थ क्या संवैधानिक व अन्य नीतिगत प्रयत्न किये गये, काभी विकास सहित अध्ययन किया। महिलाओं के विकास सम्बन्धित अध्ययन पश्चात् बाल विकास का अर्थ व उद्देश्य से अवगत हुये। अन्त में बाल कल्याण से सम्बन्धित संवैधानिक प्रयासों व अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों को भी समझने में सक्षम हुए।

## 12.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एम० एन० श्रीनिवास, द चेंजिंग पोजीशन ऑफ इण्डियन वीमेन, पृ० 7
2. के० एम० पणिक्कर-हिन्दू समाज निर्णय के द्वार पर पृ० 57
3. तस्लीमा नसरीन—''औरत के हक में'', बाली प्रकाशन, नयी दिल्ली 1999 पृ० 56
4. एस० सी० दुबे—'संक्रमण की पीड़ा', बाली प्रकाशन, नई दिल्ली 1998 ए० पृ० 124
5. अरविन्द जैन—औरत होने की सजा, राजकमल 1996
6. डॉ० राम आहूजा, ''सामाजिक समस्याएँ''
7. प्रमिला कपूर, ''कामकाजी भारतीय नारी, राजपाल एण्ड सन्स, नयी दिल्ली, 1976
8. जी० रेहाना—वोमेन इन इण्डियन सोसायटी, सेज पब्लिशर्स, नई दिल्ली 1988
9. भारत 2003, भारत सरकार
10. डी० डी० बसु—भारत का संविधान
11. सायमण्ड पी०-दि साइकोलॉजी ऑफ पैरेण्ट—चाइल्ड रिलेशनशिप, एट लेटन, सेन्चुरी क्राफ्ट्स, न्यूयार्क, 1939 पृ० 217
12. डॉ० पी० डी० मिश्रा—समाज कार्य के क्षेत्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

## 12.13 प्रश्नोत्तर

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न—

प्र० 1. भारतीय महिलाओं की समस्याओं पर एक लेख लिखें।

प्र० 2. महिलाओं की समस्याओं के निवारणार्थ में कौन से संवैधानिक व कल्याणकारी कार्यक्रम अपनाये गये हैं?

प्र० 3. बाल विकास का क्या अर्थ है? यह किन उद्देश्यों को अपने में समेटे हुए हैं?

प्र० 4. बाल कल्याण हेतु किये गये संवैधानिक प्रयत्न एवं नीतिगत प्रयासों की विवेचना करें।

## लघु उत्तरीय प्रश्न—

प्र० 1. कमजोर वर्ग से क्या तात्पर्य है? इनमें कौन-कौन वर्ग आते हैं?

प्र० 2. महिलाओं की जनसंख्यात्मक स्थिति पर टिप्पणी करें।

प्र० 3. महिलाओं की समस्याओं पर संक्षिप्त लेख लिखें?

प्र० 4. बच्चों के कल्याण हेतु पारित विधान पर विचार प्रकट करें।

## बहु विकल्पीय प्रश्न—

प्र० 1. महिला दिवस किस दिनमनाया जाता है?

(1) 1 मई (2) 8 मार्च (3) 19 नवम्बर (4) 19 सिदम्बर

प्र० 2. 2001 की जनगणनानुसार स्त्री पुरुष जनसंख्या अनुपात क्या है?

(1) 927 : 1000 (2)860 : 1000 (3)933 : 1000 (4)970 : 1000

प्र० 3. किशोर न्याय अधिनियम, 1986 पुन: कब संशोधित किया गया?

(1) 1990 (2) 1994 (3) 2000 (4) 2002

प्र० 4. समेकित बाल विकास योजना (ICDS) में लाभार्थी वर्ग में कौन सम्मिलित नहीं है?

(1) 0-6 आयु वर्ग के बच्चे (2) गर्भवती व धात्री महिलायें

(3) किशोरी बालिकाएं (4) 3 वर्ष से 12 वर्ष तक के बच्चे

**उत्तर—**

(1) 2 (2) 3 (3) 3 (4) 4

# NOTES

# NOTES

खण्ड

# 4

## भारत में विकास योजनाएं

इकाई 13

सामुदायिक विकास कार्यक्रम

इकाई 14

समन्वित ग्रामीण विकास योजना

इकाई 15

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

इकाई 16

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## परामर्श समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो. केदार नाथ सिंह यादव,** कुलपति | अध्यक्ष |
| **डॉ. हरीश चन्द्र जायसवाल,** वरिष्ठ परामर्शदाता | कार्यक्रम संयोजक |
| **प्रो के.पी. सिंह,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. अर्जुन तिवारी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **प्रो. ए.एन. द्विवेदी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. रत्नाकर शुक्ल,** कुलसचिव | सचिव |

## विशेषज्ञ समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो० सी.एस. एस. ठाकुर**<br>आचार्य एवं अध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग<br>रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर | विषय विशेषज्ञ |
| **प्रो. जयकान्त तिवारी**<br>आचार्य समाजशास्त्र विभाग<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी | विषय विशेषज्ञ |
| **डॉ. मंजूलिका श्रीवास्तव**<br>रीडर, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली | दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञ |
| **प्रो. वी. के. पंत**<br>सेवा निवृत्त आचार्य एवं अध्यक्ष , समाज शास्त्र विभाग<br>(कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) लखनऊ | सम्पादक |

## MASY-06 : – *सामाजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य*

*लेखक मण्डल :*

| | | |
|---|---|---|
| **खण्ड एक :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड दो :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड तीन :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 4 इकाई |
| **खण्ड चार :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 2 इकाई |
| **खण्ड पाँच :** | **डॉ. अंशु केडिया,** लखनऊ | 2 इकाई |
| | **डॉ. जे.पी. मिश्र** , लखनऊ | 2 इकाई |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ. ए. के. सिंह, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जुलाई 2012
मुद्रक : नितिन प्रिन्टर्स, 1 पुराना कटरा, इलाहाबाद।

# खण्ड परिचय

## खण्ड 4 : भारत में विकास योजनाएँ

खण्ड परिचय : इस खण्ड में भारत की विकास योजनाओं का परिचय दिया गया है। पहली इकाई का शीर्षक है ''सामुदायिक विकास कार्यक्रम''। इसमें सामुदायिक विकास की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है। इस खण्ड में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की आधारभूत मान्यताओं, योजना के प्रशासनिक संगठन तथा उपलब्धियों का मूल्यांकन किया गया है। दूसरी इकाई का शीर्षक है ''समन्वित ग्रामीण विकास योजना''। इसमें समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के स्वरूप, कार्यक्रम संरचना एवं प्रशासनिक क्रियान्वयन की समीक्षा की गयी है। तीसरी इकाई का शीर्षक है ''स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना''। इसमें स्वर्ण जयन्ती रोजगार योजना की कार्यप्रणाली एवं कार्यान्वयन को स्पष्ट किया गया है। चौथी इकाई का शीर्षक है 'सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना''। इसमें सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के स्वरूप और उसके अन्तर्गत निहित कार्यक्रमों एवं योजनाओं का मूल्यांकन किया गया है।

# इकाई 13- सामुदायिक विकास कार्यक्रम

## इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 सामुदायिक विकास की अवधारणा

13.3 सामुदायिक विकास योजना की पृष्ठभूमि एवं सूत्रपात

13.4 सामुदायिक विकास कार्यक्रम की आधारभूत मान्यताएं

13.5 सामुदायिक विकास योजना का प्रशासनिक संगठन

13.6 सामुदायिक विकास योजना का कार्य क्षेत्र

13.7 ग्रामीण विकास में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का योगदान

13.8 सामुदायिक विकास योजना की उपलब्धियों का मूल्यांकन

13.9 सारांश

13.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/ उपयोगी पुस्तकें

13.11 बोध प्रश्न

13.12 उत्तर

## 13.0 उद्देश्य

आजादी के बाद ग्रामीण भारत को सशक्त रूप से ऊपर उठाने के प्रयत्न किए गये जिसमें सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रमुख योगदान रहा है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:

* ग्रामीण भारत में वैज्ञानिक तरीके से विकास का प्रयत्न सामुदायिक विकास कार्यक्रम के माध्यम पर टिप्पणी कर सकेंगे।
* सामुदायिक योजना की पृष्ठभूमि एवं सूत्रपात का उल्लेख कर सकेंगे।
* सामुदायिक विकास के संगठन पर टिप्पणी कर सकेंगे।
* सामुदायिक विकास योजना का मूल्यांकन कर सकेंगे।

## 13.1 प्रस्तावना

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने अपने आर्थिक विकास एवं ग्रामीण पुर्ननिर्माण के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूआत 2 अक्टूबर 1952 ई0 से किया। इस योजना को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सहायता से लागू किया गया। इस कार्यक्रम की प्रेरणा

फरीदाबाद और नीलोखेड़ी की शरणार्थियों की बस्ती से मिली, जहां यह प्रथम बार प्रमाणित हुआ कि गांव के व्यक्ति स्वयं अपनी पूंजी को उत्पन्न करने की शक्ति और क्षमता रखते हैं। तथापि आजादी के पूर्व भारत में गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा की इस तरह के सामुदायिक कार्यक्रम छिट पुट होते रहे हैं सेवाग्राम के आस पास महात्मा गांधी तथा शान्तिनिकेतन में टैगोर के द्वारा किये गये ग्रामीण विकास कार्य विशेष उल्लेखनीय है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम देश के ढलाव गावों में निवास करने वाली 80 प्रतिशत जनसंख्या के सोचने विचारने और कार्य करने के तरीकों को बदलने का एक विशाल प्रयत्न और परीक्षण है। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था "भारत के विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक विकास सबसे महत्वपूर्ण प्रयास हैं।" अतएव हम कह सकते हैं कि वास्तव में पहली बार सामुदायिक विकास के माध्यम ग्रामीण समस्या को हल करने का बेहतर प्रयास किया गया।

## 13.2 सामुदायिक विकास की अवधारणा

सामुदायिक विकास योजना से तात्पर्य उन सभी प्रयासों से है जिससे कि एक समुदाय विशेष के सामाजिक सांस्कृतिक तथा आर्थिक पहलुओं का विकास किया जा सके। इसे लिए जनता सरकार दोनों के समन्वित प्रयास की आवश्यकता होती है। वास्तव में सामुदायिक विकास योजना गहन विकास के लिए एक संगठित तथा नियोजित प्रयत्न है योजना आयोग के अनुसार "सामुदायिक विकास वह विधि है जिसके द्वारा ग्रामीण जनता के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण इच्छित परिवर्तन की प्रेरणा को गतिमान किया जा सकेगा।" यू. एन. ओ. के एक प्रतिवेदन के अनुसार, "यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा समस्त देश का आर्थिक स्तर ऊँचा उठ सके और इस महान कार्य में समस्त समाज सक्रिय रूप से भाग ले सके और यदि सम्भव हो तो उन्हीं के पथ प्रदर्शन पर यह योजना आगे बढ़ सके। लेकिन यदि समाज को इस प्रकार का नेतृत्व प्राप्त न हो सके तो इस प्रकार की व्यवस्था करना है कि समाज अनुप्रेरित होकर सक्रिय रूप से इस महान कार्य में सम्मिलित हो सके।" प्रो0 ए. आर. देसाई के अनुसार, " सामुदायिक विकास योजना एक ऐसी प्रणाली है जिसके द्वारा पंचवर्षीय योजना ग्रामों के सामाजिक ओर आर्थिक जीवन के रूपान्तरण की प्रक्रिया प्रारम्भ करना चाहती है।"

उपयुर्क्त सभी परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामुदायिक विकास ग्रामीण जीवन के सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन के रूपातरण को एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें स्थानीय लोगों के द्वारा पहल की जानी है और संस्कार को प्रौद्योगिकी मार्ग दर्शन एवं आर्थिक सहायता प्रदान करनी है। उपर्युक्त परिभाषाओं में विशेष रूप से दो बातों पर जोर दिया गया है।

1. समुदाय के इस प्रकार के विकास को लक्ष्य के रूप रखा गया है जिससे वह आत्म निर्भर बन सके।
2. बाहरी हस्तक्षेप कम से कम हो ताकि दूसरों पर निर्भर की प्रवृत्ति को कम किया जा सके।

इस प्रकार इस कार्यक्रम में जहां भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति पर जोर दिया गया है शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, कुटीर उद्योग, पशु पालन संचार साधनों आदि के विकास का प्रयत्न किया

गया है वहीं लोगों के विचारों, इच्छाओं तथा अभिरूचियों में परिवर्तन लाने तथा सहयोग की भावना उत्तरदायित्व को सम्भालने की इच्छा जागृत करने का प्रयास भी किया गया है। यह एक ऐसे समन्वित सांस्कृतिक परिवर्तन का प्रयास है जिसका उद्देश्य ग्रामों के सामाजिक आर्थिक स्तर में परिवर्तन लाना है।

## 13.3 सामुदायिक विकास योजना की पृष्ठ भूमि एवं सूत्रपात

सामुदायिक विकास योजना का उदभव निम्नलिखित पूर्व घटित परीक्षणों का परिणाम है। यद्यपि सामुदायिक योजना की भारत में शुरूआत अमेरिका की सहायता से किया गया किन्तु भारत में इसके पूर्व भी गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा इस क्षेत्र में कार्य होते रहे हैं।

1. 1947 में एस. के. डे जो एक अभियन्ता के पद पर काम कर रहे थे और बाद में वे सामुदायिक विकास योजना के मन्त्री बने। उन्हीं संरक्षण में हरियाणा के करनाल जिले में नीलखेरी योजना शुरू की गयी। जहां 6000 विस्थापितों को बसाकर उन्हें खेती तथा अन्य लघु उद्योग धन्धों को करने के लिए प्रोत्साहित किया गया जिसमें अप्रत्याशित सफलता हासिल हुई।

2. इटावा योजना जो आलवर्ट मेयर के संरक्षण में प्रारम्भ हुई इस योजना को क्रियान्वित करने में अमेरिकन तथा भारतीय विशेषज्ञों की भी मदद ली गयी। इससे भारतीय ग्रामों के विकास के लिए सामुदायिक विकास योजना का प्रारूप बनाने में विशेष मदद मिली। इस योजना के अन्तर्गत इटावा जिले के 97 ग्राम शामिल किये गये। इसका प्रमुख उद्देश्य ग्रामवासियों के लिए ऐसे बहुउद्देशीय कार्यक्रमों को संचालित करना था जिससे कि उनमें आत्म निर्भरता आ सके और उनकी स्थिति में सुधार हो सके। सर्वप्रथम ग्राम सेवकों की नियुक्ति की शुरूआत यहीं से की गयी।

3. इस प्रकार एक अन्य प्रोजेक्ट फरीदाबाद में श्री घोष के संरक्षण में शुरू हुआ। जिसमें 30 हजार विस्थापितों को बसाकर इसे एक औद्योगिक कस्बे में परिवर्तित कर दिया गया। यहां के लोगों के लिए सरकार ने कुछ कर्ज भी दिया जिसकी अदायगी 20 वर्ष में करने की छूट थी। अब यहां के निवासी अपनी आवश्यकता की अधिकांश वस्तुएं स्वयं बनाते हैं ।

4. फिरका विकास योजना जिसे मद्रास जिले में अब ग्रामीण कल्याण योजना के नाम से जाना जाता है, को शुरू किया गया। महात्मा गांधी के विचारों को इस प्रोजेक्ट में शामिल किया गया ताकि यहां के निवासियों का सर्वांगीण विकास का अवसर उपलब्ध हो सके। इस विकास योजना के दो मुख्य उद्देश्य थे —पहला ग्रामीण व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास करें। सामुदायिक विकास योजना की उत्पत्ति इसलिए भी हुई कि सरकारी विभाग द्वारा चलायी जा रही अनेक योजनाओं यथा कृषि, पशुपालन, सहकारिता, स्वास्थ्य शिक्षा, तथा नाना प्रकार की अन्य योजनाओं को एक सूत्र में बांधा जा सके। दूसरा इसके अतिरिक्त इस आन्दोलन के प्रवर्तकों के अनुसार इस योजना को इसलिए भी आरम्भ किया गया ताकि ग्राम पुनर्निमाण की दार्शनिक आधारशिला में परिवर्तन आ सके। दूसरी बहुत सी संस्थाएं ग्राम पुनर्निमाण के कार्य में हाथ बटाने को आगे बढ़ी लेकिन यह सब काम उन्होनें

उदारभावापन्न होकर ही किया। सामुदायिक विकास आन्दोलन ग्रामवासियों में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन लाना चाहता है। इसका उद्देश्य ग्रामवासियों में नई आकांक्षाओं, नई अनुप्रेरणाओं नई तकनीकों तथा नवीन साहस का संचार करना है ताकि अपरिमेय जन साधनों को देश के नवीन आर्थिक विकास के काम में लगाया जा सके।

## सामुदायिक योजना का सूत्रपात

सामुदायिक विकास योजना का उदघाटन 2 अक्टूबर 1952 में हुआ जिसमें 55 सामुदायिक योजनाएं शुरू की गयी। प्रत्येक योजना के अन्तर्गत 3000 ग्राम चयन किये गये जो कि 450 से 500 वर्ग मील में परिव्याप्त थे। इसमें 2 लाख जनसंख्या निवास करती थी। एक योजना क्षेत्र 100 गांवों के तीन विकास खण्डों में विभक्त था और प्रत्येक समूह के अन्तर्गत पांच गांव थे गांवों का प्रत्येक समूह एक ग्राम सेवक की देख रेख में रखा गया । पांच गांवों मे से एक गांव को ग्राम सेवक का प्रधान कार्यालय बनाया गया।

1952 में उद्घाटित इस कार्यक्रम को प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त में और भी विस्तृत क्षेत्रों में विस्तार कर दिया गया। 603 राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड, और 553 सामुदायिक विकास खण्ड 1,57,000 गांवों को परिव्याप्त किये हुए थे। लगभग प्रत्येक तीन गांवों में से एक गांव इस योजना के अन्तर्गत था। इस प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इसके अन्तर्गत प्रत्येक गांवों को शामिल करने की योजना बनायी गयी।

## 13.4 सामुदायिक विकास कार्यक्रम की आधारभूत मान्यताएं

भारत में नियोजित परिवर्तन एक अनिवार्य आवश्यकता है क्योंकि नगरों की तुलना में ग्रामों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति काफी दयनीय है। यथा स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव, निरक्षरता विकास हेतु आधारभूत संरचना का अभाव, रोजगार की अनुपलब्धता आदि ऐसे तथ्य हैं जिन्हें ध्यान में रखकर सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में सामुदायिक विकास कार्यक्रम को विशेष स्थान दिया।

डा. दुबे ने सामुदायिक विकास कार्यक्रमों से सम्बन्धित चार मौलिक मान्यताओं का उल्लेख निम्नानुसार किया है—

1. ग्रामवासियों को इस कार्यक्रम में उसी समय भागीदार बनने के लिए प्रेरित किया जा सकता है जब इसके द्वारा उनकी अत्यंत आवश्यक आवश्यकताओं की तुरंत पूर्ति पर ध्यान दिया जाय।

**अत: ग्रामीण योजनाएं स्थानीय आवश्यकताओं पर आधारित होनी चाहिए।**

2. सत्तावादी बाध्यता के तरीकों से प्राप्त परिणाम काफी अस्थायी होते हैं जबकि सहानुभूतपूर्ण और शिक्षाप्रद तरीकों से प्राप्त परिणाम अधिक स्थायी होते हैं। अत: सामुदायिक विकास प्रशासन को "प्राविधि तथा परिणाम प्रदर्शन" की धीमी परन्तु निश्चित पद्धति को काम में लेना है न कि कार्यक्रम से सम्बन्धित बातों को जबरन स्वीकार करने के लिए तैयार करना है। ग्रामीण विकास दर्शन का मूल मंत्र **विनयपूर्वक लोगों को कार्यक्रम**

**से सम्बन्धित बातों को स्वीकार करने के लिए तैयार करना है न कि बल प्रयोग के द्वारा।**

3. परम्परागत नौकरशाही संगठन ओर तौर तरीकों के आधार पर कार्यक्रम क्रियान्वयन में बाधा उत्पन्न होने की संभावना अधिक है। **अतः सामुदायिक विकास कार्यकर्ताओं के चयन अभिमुखन तथा प्रशिक्षण पर विशेष जोर देने की आवश्यकता है।**

4. बाहरी सहायता का कोई भी कार्यक्रम अनिश्चित समय तक के लिए नहीं चल सकता। अतः ग्रामीण समुदायों में आत्म विश्वास पैदा करने और स्वयं को प्रयत्नों द्वारा विकास कार्यक्रम को चलाने के लिए **संगठनात्मक आधार निर्मित कर प्रत्येक गतिविधि में नियोजन से कार्यान्वयन तक ग्राम के लोगों को सम्मिलित करना आवश्यक है।**

उपर्युक्त धारणा के आधार पर हम कह सकते हैं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम इस मान्यता पर आधारित है कि स्थानीय मानव शक्ति भौतिक साधनों तथा उपलब्ध सामग्री का सर्वोत्तम तरीके से उपयोग किया जाय और जहां तक संभव हो बाहरी सहायता पर निर्भरता कम हो। इस योजना के तहत यह महसूस हुआ कि स्वयं आगे बढ़कर दायित्व संभालने की प्रवृत्ति का विकास लोगों के भीतर से होना चाहिए। कार्यक्रम के दौरान समय समय पर मूल्यांकन भी करते रहना चाहिए ताकि सम्भावित त्रुटियों से बचा जा सके।

## 13.5 सामुदायिक विकास योजना का प्रशासनिक संगठन

सामुदायिक विकास की योजनाएं अपने उद्देश्यों को तभी प्राप्त कर सकती है जब उनका संगठन सक्रिय एवं जागरूक हो। इस उद्देश्य को लेकर केन्द्र से गांव स्तर तक प्रभाव कारी ढंग से प्रशासनिक ढांचे को संगठित किया गया है जो सामुदायिक योजना प्रशासन के नाम से सर्वविदित है प्रारम्भ में यह योजना आयोग के आधीन था। अब यह नव निर्मित सामुदायिक विकास मंत्रालय के अधीन है।

1. **केन्द्रीय स्तर पर** - राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन, सामुदायिक तथा सहकारिता मंत्रालय उसकी देख रेख करता है। यहीं से सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम निर्धारित होते हैं मंत्रालय की सुविधा के लिए एक केन्द्रीय की स्थापना की गयी। जिसमें योजना आयोग के सदस्य, खाद्य कृषि सामुदायिक विकास तथा सहकारी मंत्री सम्मिलित होंगे। भारत में प्रधानमंत्री इस कमेटी के अध्यक्ष हैं। इस कमेटी का काम नीति निर्धारित करना तथा हो रहे कार्यों का निरीक्षण करना है। आर्थिक विकास के लिए भी कार्यक्रम इस कमेटी द्वारा निर्धारित किया जाता है। अन्य मंत्रालयों के साथ संबंध विशिष्ट कमेटी के द्वारा स्थापित किया जाता है।

2. **राज्य स्तर पर** - सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। प्रत्येक राज्य में एक राज्य विकास कमेटी होता है। इस कमेटी में विभिन्न विकास विभागों के मंत्री सदस्य होते हैं और मुख्यमंत्री कमेटी का अध्यक्ष होता है।

विकास आयुक्त इस कमेटी के सेक्रेटरी होते हैं राज्य में विकास के कार्यक्रमों को कार्य रूप में परिणित करने की जिम्मेदारी विकास आयुक्त की होती है। जिसकी सहायता के लिए विशेषज्ञों की एक सुझाव समिति होती है। विकास आयुक्त के तीन प्रमुख कार्य हैं प्रथम केन्द्र द्वारा निर्धारित नीतियों को प्राप्त करना और राज्य में हुई प्रगति एवं आवश्यक संशोधनों को केन्द्र सरकार को भेजना। द्वितीय - राज्य में विकास कार्यक्रमों को करने के लिए विभिन्न टेकनिकल विभागों में समन्वय स्थापित करना तथा यह देखना कि सामुदायिक योजनाओं के प्रशिक्षण केन्द्र तथा विकास खण्ड ठीक प्रकार से कार्य करे। तथा उनकी प्रत्येक आवश्यकता पूरी हो। तृतीय विकास आयुक्त जिला स्तर पर हो रहे विकास कार्यक्रमों की जानकारी जिलाधीश तथा जिला परिषद के अध्यक्ष से प्राप्त करता है। इस प्रकार वह प्रत्येक विकास खण्ड मे हो रहे विकास कार्यों के बारे में पूरी जानकारी रखता है प्रत्येक खण्ड तथा पंचायत समिति में कितने कितने विशेषज्ञ नियुक्त किये जायं इसका निर्णय भी विकास आयुक्त करता है।

3. **जिला स्तर पर** - जिला स्तर पर जिलाधीश तथा कुछ स्थानों पर नियोजन अधिकारी प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी होता है। जो विकास कार्यक्रमों का संचालन करता है। जिला परिषद का अध्यक्ष तथा उसके सदस्य नियोजन कार्यक्रमों को देखते हैं खण्ड अधिकारी भी इस स्तर पर हो रहे विकास कार्यक्रमों के लिए विभिन्न प्रकार सुझाव पेश करते हैं जिला परिषद में सभी खण्ड पंचायतों व समितियों के अध्यक्ष सम्मिलित होते हैं। जिले के सांसद एवं विधायक भी इसके सदस्य होते हैं।

4. **खण्ड स्तर पर** - खण्ड पंचायत समिति विकास के कार्यों की देखभाल करती है। इस समिति में निर्वाचित सरपंच पिछड़े तथा अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि होते हैं। खण्ड विकास अधिकारी कृषि सहकारिता पशुपालन आदि के विशेषज्ञ तथा विस्तार अधिकारी खण्ड पंचायत समिति के स्तर पर कार्यक्रमों का संचालन करते हैं। प्रत्येक प्रोजेक्ट के लिए एक एक प्रोजेक्ट सलाहकार समिति होती है जिसमें सरकारी तथा गैर सरकार दोनों तरह के सदस्य होते हैं ग्राम सेवक तथा सेविकाएं विकास अधिकारी की मदद करते हैं। एक विकास अधिकारी के साथ आठ विस्तार अधिकारी होते हैं जो विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ होते हैं साधारणतया कृषि, शिक्षा, चिकित्सा, समाज कल्याण, पशु चिकित्सा, सहकारिता, समाज शिक्षा तथा सिंचाई आदि के विशेषज्ञ होते हैं।

5. **ग्राम स्तर पर** - ग्राम पंचायत के सभापति की अध्यक्षता में ग्राम स्तर पर विकास के सभी कार्यक्रम सम्पादित किये जाते हैं। बहुउद्देशीय विकास कार्यकर्ता के रूप में यहां ग्राम सेवक का कार्य विशेष उल्लेखनीय है इसके अधीन 5 से 10 गाँव होते हैं ग्राम सेवक ही इन विकास कार्यक्रमों को वास्तविक दिशा में कार्यरूप देता है। इन्हें विभिन्न प्रकार के ग्रामीण कार्यों का ज्ञान होता है ग्रामीण सेवकों तथा सेविकाओं केा विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रकार इन विभिन्न स्तर पर विकास कार्य ग्राम स्तर से लेकर केन्द्र स्तर तक के दायरे में प्रत्यक्ष रूप से आ जाता है। जैसे ग्राम स्तर पर सरपंच एवं ग्राम सेवक द्वारा पंचायत समिति तथा विकास अधिकारी को अपनी आवश्यकताए बतायी जाती हैं। विकास अधिकारी उसे जिलाधीश को बताता है जिलाधीध विकास आयुक्त को और फिर वह राज्य सरकार को

बताता है जिसे अन्तिम रूप से केन्द्र सरकार के सामुदायिक तथा सहकारिता मंत्रालय के पास पहुंचाया जाता है। जिसके अनुसार नीतियों का निर्धारण एवं विकास योजनाओं का प्रारूप तैयार किया जाता है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में ग्राम पंचायतें सहकारी समितियों तथा ग्राम पाठशालाओं विशेष सहयोग मिलता है। ये तीनों संस्थाएं ग्रामीण जनता से सीधे तौर पर जूड़ी हुई है। निर्वाचित पंचायत के कर्मचारी अपने क्षेत्र के सभी विकास कार्यक्रमों की देख रेख करते हैं। सहकारी समितियां आर्थिक क्षेत्र में योगदान देती हैं। गांव की पाठशालाओं ग्रामीण शिक्षा संस्कृति के विकास तथा मनोरंजन के साधनों को उपलब्ध कराने में मदद देती है। वस्तुतः पंचायतों के द्वारा राज्य शक्ति का विकेन्द्रीकरण किया गया है। पंचायती राज्य में तीन टायर व्यवस्था को लागू किया गया है – गांव पंचायतें, पंचायत समितियों तथा जिला परिषद। इन्हीं तीनों स्तर पर विकास के कार्यक्रम जनपद स्तरपर चलाये जाते हैं।

**ग्राम सेवक का कार्य** – गांव स्तर पर गांव की प्रमुख संस्थाओं जैसे – फूल, सहकारी संगठन तथा पंचायतों को इन सामुदायिक कार्यक्रमों की ओर आकर्षित करते तथा जनता को प्रेरित करने का काम ग्राम सेवक करता है। इस प्रकार यह बहुउद्देशीय व्यक्ति होता है। यह निम्नलिखित तरीके अपनाता है ताकि सामुदायिक कार्यक्रम जनता का कार्यक्रम बन सके।

1. ग्रामीण लोगों के साथ अनौपचारिक सम्बन्ध स्थापित करना ताकि परस्पर विश्वास कायम हो सके।

2. ग्रामीण लोगों की समस्याओं को सुलझाना एवं अच्छे जीवन शैली के प्रति उनमें रूचि उत्पन्न करने का काम ग्रामसेवक करता है। ताकि उपलब्ध साधनों के प्रति ग्रामीण जागरूक होकर अपना जीवन स्तर ऊपर उठा सके।

3. ग्रामीण लोगों को सहायता पहुंचाना ताकि वे अपने विकास के लिए कार्यक्रम बना सकें।

4. गांव के लोगों में नेतृत्व की भावना का विकास करना। ग्रामीण नेताओं का पता लगाकर सामुदायिक विकास कार्यक्रमों से उन्हें अवगत कराना क्योंकि सामुदायिक कार्यक्रम को स्वयं सहायता आन्दोलन तभी बनाया जा सकता है जब स्थानीय नेतृत्व कर्ता जनता की जुबान में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के बारे में उन्हें अवगत कराये।

इस प्रकार यदि ग्राम सेवक उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों के अनुसार कार्य करता है तो निश्चित ही सामुदायिक विकास योजना को सफल बनाने में मदद मिलेगी।

## 13.6 सामुदायिक विकास योजना का कार्य क्षेत्र

सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के लक्ष्य को हासिल करने के लिए सरकार जनता को बाध्य नहीं करेगी। बल्कि एक मार्गदर्शक के रूप में उन्हें केवल प्रेरित करेगी। गांवों में मानवशक्ति बेकार पड़ी है जिसे उपयोगी बनाने के लिए सहकारिता की भावना का विकास करना आवश्यक है। विकास कार्यक्रम की नीतियां जनता स्वयं तैयार करे। ऊपर उठने के लिए उन्हें जिस चीज की पहले आवश्यकता है प्राथमिक रूप से उसी को सामुदायिक विकास योजना

का लक्ष्य बनाया जाय। गांवों की हालत सुधारने के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

1. **कृषि सम्बन्धी कार्य** - इसमें नयी तथा बंजर भूमि को कृषि के योग्य बनाना, खेतों की सिंचाई के लिए साधनों की व्यवस्था यथा नहरं, नलकूप, कुएं , तालाब, द्वारा पानी की व्यवस्था करना। इसके अतिरिक्त अच्छे बीजों का प्रबंध, विकसित खेती की प्राविधियों का प्रयोग, रासायनिक खाद का प्रबंधन अत्यादि। बुनियादी सुविधाओं की अवस्थापना करना शामिल हैं।

2. **यातायात एवं संचार व्यवस्था** - इसमें सड़कों का निर्माण कराना यन्त्रों से चलने वाले यातायात साधनों का विकास करना एवं पशुओं से चलाये जाने वाले यातायात साधनों का विकास करना शामिल है।

3. **स्वास्थ्य एवं सफाई** - प्रत्येक विकास खण्ड में एक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना तथा सम्पूर्ण योजना क्षेत्र के लिए एक चिकित्सालय और एक गतिशील औषधालय की व्यवस्था की गयी है। इसके अतिरिक्त सफाई की व्यवस्था, मलेरिया तथा अन्य रोगों के रोकथाम हेतु उपाय, पीने के पानी की व्यवस्था एवं स्वास्थ्य शिक्षा के प्रचार पर ध्यान दिया जाता है।

4. **शिक्षा** - इसमें अनिवार्य नि:शुल्क बेसिक शिक्षा, मिडिल तथा हाई स्कूलों का प्रबन्ध एवं प्रौढ़ शिक्षा तथा पुस्तकालयों का कार्य शामिल है।

5. **सहायक रोजगार का विस्तार** - कुटीर उद्योग धन्धों के प्रति प्रोत्साहित कर रोजगार के अवसरों को बढ़ाने पर बल दिया जाता है। इसके लिए ईंट बनाने वाले भट्टों का निर्माण आरा मशीन करघा चलाने, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन जैसे ग्रामीण परिवेश में सुलभ व्यवसायों के लिए प्रशिक्षण एवं धन का प्रबन्ध उपलब्ध कराया जाता है।

6. **प्रशिक्षण** - विभिन्न प्रकार के कारीगरों को प्रशिक्षण देकर उनकी कुशलता में संवर्धन करना, कृषकों को प्रशिक्षण देकर उन्हें व्यावसायिक खेती की ओर उन्मुख करना एवं अन्य व्यवसायों के प्रति जानकारी देने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी है।

7. **आवास व्यवस्था** - ग्रामीण मकानों को नये प्रकार से बनाने की प्राविधियों का प्रदर्शन एवं मकान बनाने के लिए ऋण मुहैया कराकर सभी को मकान सुलभ कराना सामुदायिक विकास योजना का कार्य है।

8. **समाज कल्याण** - इसके अन्तर्गत सामुदायिक मनोरंजन केन्द्रों की स्थापना जिनमें ग्रामोफोन, रेडियो व चल-चित्र की व्यवस्था सहकारी भण्डारों की स्थापना तथा मेलों का आयोजन आदि कार्यक्रम शामिल हैं।

9. **ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम** - इसके तहत कृषि मजदूरों और प्रमुखत: भूमिहीन मजदूरों को उन दिनों रोजगार प्रदान करने की व्यवस्था की जाती है जब उन्हें समान्यत: बेकार रहना पड़ता है।

10. **कुंआँ निर्माण कार्य** - इसके अन्तर्गत उन क्षेत्रों में कुआँ खुदवाया जाता है जहां पीने का पानी की कमी है।

11. **व्यावहारिक पोषण कार्यक्रम** - ग्रामीण जनता के स्तर को ऊँचा उठाने के उद्देश्य से उन्हें संतुलित भोजन के सम्बन्ध में प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है।

इस प्रकार इन उपरोक्त वर्णित कार्यक्रमों को सामुदायित विकास योजना द्वारा क्रियान्वित कर गांवों के लोगों की दशा में अपेक्षित सुधार लाया जा सकता है। इस समस्त प्रक्रिया में विकास खण्ड के कर्मचारियों का इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि वे जनता के सेवक की भांति कार्य करें ताकि सामुदायिक कार्यक्रम वास्तविकत रूप से जनता का कार्य बन सके। इसके लिए विकास अधिकारी एवं कर्मचारियों को स्थानीय समुदाय के अनुरूप भाषा, रीति रिवाज, रहन सहन से पूरी तरह परिचित होना आवश्यक है। कार्यक्रमों की सफलता तथा सामुदायिक विकास योजना के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि जनता तथा कर्मचारियों के बीच आत्मीयता हो।

## 13.7 ग्रामीण विकास में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का योगदान

भारत की बाहुल्य आबादी गांवों में निवास करती है। गांवों की दशा बहुत दयनीय है। इसमें सुधार लाने एवं विकास की प्रक्रिया को तेज करने के लिए सामुदायिक विकास योजना काम कर रही है। यद्यपि गांवों की अधिकांश सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियां परम्परागत हैं एवं यातायात तथा संचार आदि के क्षेत्र में अनंक समस्याएं हैं फिरभी समुदायिक विकास कार्यक्रम के परिणामस्वरूप अधिकांश क्षेत्रों का योजना बद्ध विकास हुआ है। वास्तव में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जनसंख्याओं के माध्यम से ग्राम वासियों को विकास का महत्व समझाने और उनका योगदना प्राप्त करने में महत्वपूर्ण सफलता मिली है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने ग्रामों की सामाजिक आर्थिक समस्याओं को सुलझाने में निम्नलिखित योगदान दिया है।

1. इस योजना के परिणाम स्वरूप लोगों का ध्यान ग्रामों के विकास की ओर आकृष्ट हुआ है। इस कार्यक्रम की पांच अवस्थाओं —ग्रामीण क्षेत्रों की उन्नति में विश्वास, जनतंत्र में विश्वास, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रति विश्वास ग्रामीण जनता की क्षमताओं में विश्वास तथा सामाजिक न्याय में विश्वास के प्रति लोगों ने अपनी स्वीकृति व्यक्त की है, जैसे जैसे इन आस्थाओं के प्रति लोगों का लगाव बढ़ेगा वैसे वैसे ग्रामों में विकास कार्य अधिक तेजी के साथ बढ़ते जायेंगे।

2. सामुदायिक विकास कार्यक्रम में इच्छित जन सहयोग प्राप्त करने एवं कार्यक्रम के अन्तर्गत उत्पन्न समस्याओं को हल करने हेतु लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया विकसित की गयी है। वर्तमान में पंचायती राज संस्थाएं ग्राम पंचायतें, पंचायत समितियां और जिला परिषद इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। इन संस्थाओं ने सामुदायिक विकास योजनाओं को सफल बनाने में स्थानीय जनता की सहभागिता को बढ़ाया है।

3. इस कार्यक्रम की महत्ता इस बात से भी स्पष्ट होती है कि इसने ग्रामीण जीवन के विभिन्न पक्षों के विकास हेतु समन्वित प्रयास को बढ़ावा दिया है। पूर्व में ग्रामीण समस्याओं के हल के लिए कृत पृथक-पृथक प्रयास खर्चीले एवं अप्रभावी रहे हैं। अत: सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत समन्वित कार्यक्रम को ग्रामीण विकास की श्रेष्ठतम पद्धति माना गया है। इसके अन्तर्गत ग्रामीण जीवन के सभी पहलुओं यथा सामाजिक आर्थिक राजनेतिक एवं सांस्कृतिक विषयों को समावेशित किया गया है।

4. इस योजना के माध्यम से प्रशासन की प्रकृति में भी परिवर्तन संभव हुआ। दफ्तरों की चारदीवारी एवं फाइलों के ढेर में बन्द रहने के बजाय सरकारी कर्मचारी एवं विकास अधिकारी को ग्रामीणों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आने एवं उनका विश्वास अर्जित करने का अवसर मिला। इस प्रकार पंचायती राज संस्थाओं ने सरकार और जनता के बीच प्रशासनिक दूरी को कम करने में सफलता हासिल किया।

5. सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के द्वारा कृषि, बागबानी, पशुपालन आदि कार्यों में वैज्ञानिक प्रविधियों का प्रयोग करके परम्परागत विचारों में परिवर्तन लाया गया है। अब कृषक समुदाय भाग्य आधारित न होकर कृत्रिम साधनों से भी खेती करने लगा है। सिंचाई खाद, कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से फसल की सुरक्षा का दायित्व स्वयं निर्वाह करने लगा है। सरकार स्वयं इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण व्यक्तियों को उत्तम बीज रसायनिक खाद, खेती के यान्त्रिक उपकरण तथा उत्तम पशुओं को उचित मूल्यों पर देती है। इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में वृद्धि हुआ और हरित क्रान्ति जैसे परिवर्तन का प्रार्दुभाव हुआ। गहन कृषि जिला कार्य्रक्रम(आई. ए. डी. पी.) के मूल्यांकन से सम्बन्धित विशेषज्ञ कमेटी के अनुसार ''इस कार्यक्रम ने यह प्रमाणित कर दिया है कि भारतीय कृषक अशिक्षा और निर्धनता के बावजूद भी कम बुद्धिमान या अनावश्यक रूप से परम्पराओं से चिपके रहने वाला नहीं है जैसे ही उसे यह पता होता है कि यह विशिष्ट प्रयोग उसके लिए हितकर है वह उसे अपनाने के लिए तत्पर हो जाता है बशर्ते कि वह उसके समर्थय के भीतर हो।

6. इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामोद्योग तथा कुटीर उद्योग धन्धों का विकास किया जा रहा है ताकि ग्रामीण बेरोजगारी को दूर किया जा सके। इसके लिए प्रशिक्षण केन्द्रों की व्यवस्था की गयी है तथा कुटीर उद्योगों को लगाने के लिए विचित्र प्रोत्साहन भी दिया जाता है। लेकिन इस दिशा में किया गया प्रयास अधिक सफल नहीं हुआ। बलवंत राय मेहता अध्ययन दल के अनुसार इस कार्यक्रम से केवल 2.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवार ही लाभान्वित हो सके।

7. सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने ग्रामीण स्वास्थ्य एवं स्वच्छता सम्बन्धी परिस्थितियों को सुधारने में योगदान दिया है। इसके निमित्त अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। गंदी नालियों का सुधार पीने के पानी का उचित प्रबन्ध, नये-नये कुओं का निर्माण, एवं अन्यान्य संक्रामक बीमारियों से बचने हेतु विशेष प्रबंध किये गये हैं।

8. इस कार्यक्रम का सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान की है एन. पटनायक ने अपने अध्ययन में बताया है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम का एक महान योगदान निर्धन लोगों को आत्म संघर्ष और असमानुभूति शक्तियों से छुटकारा दिलाना है। अब गरीबों में धनी लोगों के विरूद्ध संघर्ष छेड़ने के बजाय अपने स्वयं के प्रयासों से अपने भाग्य को बदलने की इच्छा बलवती हुई है। पटनायक ने उड़ीसा में इस योजना के प्रभाव के अध्ययन के दौरान पाया कि ''वहाँ भूमिहीन हरिजन तथा छोटे-छोटे भूस्वामी किसानों में काफी मात्रा में प्रगतिशील दृष्टिकोण पाया जाता है। संतोष तथा निम्न जीवन स्तर और भाग्य को यथावत स्वीकार करने की परम्परागत प्रवृत्ति का स्थान अब संग्रहशीलता और नवीन आर्थिक अवसरों की खोज की प्रवृत्ति लेती जा रही है।

## 13.8 सामुदायिक विकास योजना की उपलब्धियों का मूल्यांकन

सामुदायिक विकास योजना की उपलब्धियों पर समाजशास्त्रियों का मत भिन्न रहा है । **प्रो० टैलर** तथा बहुत से और विद्वान यह अनुभव करते हैं कि सरकारी तन्त्र यद्वपि बुद्धिमान, मेहनती तथा अन्त: परायण लोगों से परिपूर्ण है तथापि वे सारे कार्यक्रम के मुख्य आशय को नहीं समझ पाये हैं सामुदायिक विकास योजना एक प्रशासकीय नियोजन की भांति चलती है। प्रो० टैलर के मतानुसार ''इस कार्यक्रम की व्यवस्था मुख्यत: सरकारी सहायता पर आश्रित है। आम लोगों का नेतृत्व अभल तक प्राप्त नहीं हो सका है। सरकारी तन्त्र प्रचार तथा आश्चर्य जनक परिणामों पर ज्यादा विश्वास करती है न कि समूह के कार्यों और ऐच्छिक रचनात्मक योगदान पर।''

प्रो० एस० सी० दुबे भी इन्हीं परिणामों पर पहुंचते हैं। ''योजना का श्रोत ऊपर से नीचे की तरफ है योजना की वर्तमान दशा और नतीजों को समझने की जरूरत है। योजना के स्वातन्त्रय पर अनूठा नियंत्रण होने के कारण पदाधिकारी अगुआ बनने में हिचकिचाते हैं। इससे भी अधिक जो खराब बात हुई है वह यह कि प्रशासन के स्तर पर इसके पदाधिकारीगण ऊपर से आये आदेश को मानने लगे हैं जबकि इनको अपने क्षेत्र में काफी अधिकार प्राप्त है। इस दृष्टिकोण के कारण पदाधिकारीगण ग्रामवासियों के प्रति उदासीन रहने लगे हैं और अपना सारा सयम तथा शक्ति अपने ऊपर के प्रशासकों को प्रसन्न करने में लगाने लगे हैं।'' इसके अलावा प्रो० दुबे के अनुसार, ''योजना संचालित बहुत से कार्य परम्परागत रूप में अन्य सरकारी कार्यों के रूप में सम्पन्न किये जाते हैं। न कि विकास कार्य के प्रयोग सिद्ध प्रमाणित नियमों के आधार पर। इन दबावों ओर अनुप्रेरणा से उत्पन्न दृश्यमान उपलब्धियों तथा भौतिक लक्षणें की पूर्ति ज्यादा जोर दिया जाता है और इस बात पर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है कि वास्तव में इस आंदोलन ने ग्राम समाज में कितनी जड़े पकड़ी हैं।

सामुदायिक विकास योजना कार्यक्रमों तथा उपलब्धियों के मूल्यांकन के लिए योजना आयोग द्वारा स्थापित एक कमेटी है जिसे कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के आधार पर निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है।

1. **आत्म निर्भरता का अभाव** - अब भी कार्यक्रम को जनता का पूरा सर्मथन प्राप्त नहीं हो सका है सरकारी सहायता के ऊपर अब भी ये कार्यक्रम आधारित है। स्वयं सहायता के आधार पर निर्मित इस विचार की अपहेलना की जा रही है।

2. **विस्तृत क्षेत्र** - खण्डों का क्षेत्र अधिक बड़ा हो गया है। अत: कार्यक्रमों को ठीक प्रकार से कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। इसको ध्यान में रखते हुये यह सुझाव दिया गया कि अधिक जनसंख्या वाले खण्डों को तोड़कर उन्हें दूसरे कम जनसंख्या वाले खण्डों में मिला देना चाहिए।

3. **प्रशिक्षित कार्यकताओं की कमी** - सम्पूर्ण देश को विभिन्न विकास खण्डों में बाँट दिया गया है लेकिन उन क्षेत्रों में काम करने के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की कमी है। संयुक्त राष्ट्र मूल्यांकन दल ने भी प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी पर प्रकाश डाला है।

4 **समन्वय की कमी** - विभिन्न विकास के विशषज्ञों तथा कर्मचारियों में समन्वय की कमी है। यही कारण है कि ग्रामीण समुदाय का संतुलित विकास नहीं हो पा रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि राज्य सरकारों के विभिन्न विकास विभागों में परस्पर सहयोग स्थापित हो।

5. **उचित नियोजन का अभाव** - सामुदायिक विकास कार्यक्रम की मंद गति का एक कारण यहभी है कि आवश्यकता के अनुरूप उचित कार्यक्रम समय से नहीं तय हो पाता। विभिन्न आवश्यक उपकरण समय से नहीं प्राप्त किये जा सकते। इसके फलस्वरूप विकास कार्यों में बाधा उत्पन्न होती है।

6. **ग्रामसेवक का विस्तृत कार्य क्षेत्र**

समानुपातिक विकास कार्यक्रमों में मुख्य भूमिका ग्रामसेवक की है जिसे बहुउद्देशीय व्यक्ति कहा जाता है ग्राम सेवकों को 5 से 10 गांव दिये जाते हैं। इस विस्तृत कार्यक्षेत्र के कारण वे अपने काम को ठीक ढंग से नहीं कर पाते। इसके अतिरिक्त कुछ ग्राम सेवक सही ढंग से प्रशिक्षित भी नहीं हैं जिससे कि उनकी योग्यता योजना कार्य के अनुरूप सटीक नहीं होती। इससे विकास कार्यों में व्यवधान उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

7. **दस्तकारी तथा लघु उद्योग धन्धों का विकास** -क्षेत्र में आशातीत सफलता नहीं मिल पाती है। इसके लिए समुचित प्रशिक्षण एवं विपणन व्यवस्था का अभाव ऐसे कारक हैं जिससे ग्रामीण क्षेत्रों से बेरोजगारी दूर करने में सफलता नहीं मिली।

8. **लाभों का असमान वितरण** -सामान्यत: प्रभावशाली तथा मध्यमवर्ग के कृषक इन कार्यक्रमों से अधिक लाभ उठाते हैं जबकि निम्न स्तर का कृषक अछूता रह जाता है। प्रयत्न इस बात का होना चाहिए कि सभी वर्गों के लोगों को इसका समान लाभ मिल सके।

## 13.9 सारांश

सामुदायिक विकास योजना ग्रामवासियों द्वारा आयोजित तथा कार्यान्वित किया हुआ अनुदान प्राप्त आत्म निर्भर कार्यक्रम है। सरकार इसमें केवल प्रौद्योगिक मार्गदर्शन तथा आर्थिक सहायता प्रदान करती है। इसका प्रमुख उद्देश्य ग्राम के प्रत्येक व्यक्ति में आत्म विश्वास तथा आगे-आगे चलने की भावना का विकास करना है। इसके लिए पंचायत, सहकारी समितियों विकास मण्डल एवं अन्य जन संस्थाओं द्वारा ग्राम के विकास के लिए सामूहिक चिन्तन तथा मिल जुल कर काम करने प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित किया जाता है। इस योजना का सूत्रपात अक्टूबर 1952 में किया गया जिसमें 55 सामुदायिक योजनाएं सम्मिलित थीं। इसकी आधारभूत मान्यता है कि ग्रामीण योजनाएं स्थानीय आवश्यकताओं पर आधारित होनी चाहिए। तथा यह भी आवश्यक है कि ग्रामीण जन अपनी आवश्यकता को अनुरूप योजना के कार्यान्वयन में सहभागी बनें। इस योजना में अनेक प्रकरण सम्मिलित हैं जो प्रमुख रूप से कृषि, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशिक्षण, समाज कल्याण, रोजगार एवं मकान जैसे प्रमुख विषयों से सम्बन्ध हैं। अपने अनेक विसंगतियों के बावजूद सामुदायिक विकास योजना को असफल प्रयास नहीं माना जा सकता है बल्कि इसने ग्रामीण पुर्ननिर्माण में अनेक प्रकार से

योगदान दिया है। इसके बावजूद भी अपने सत्तावादी विसंगतियों के चलते सामुदायिक विकास योजना ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त सामाजिक आर्थिक विषमता को समाप्त करने में आशातीत सफलता नहीं प्राप्त कर सका।

## 13.10 संदर्भ ग्रन्थ/ उपयोगी पुस्तकें


1. भारत - सूचना एवं जनसंपर्क विभाग मानव संसाधन विकास मंत्रालय
2. जनरल आफ रूरल डेवलपमेन्ट- वाल. 10 एन.आई.आर.डी.
3. मनोरमा - इयर बुक 2005


## 13.11 बोध प्रश्न

### लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामुदायिक योजना की पृष्ठभूमि बताइये।
2. नील खेती एवं इटावा योजना क्या है?
3. प्रशासनिक संगठन की केंद्रीय कमेटी में कौन कौन शामिल होते हैं?
4. सामुदायिक योजना का मूल्यांकन कीजिए।

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र0 1 सामुदायिक विकास योजना का कार्यक्षेत्र क्या है?

प्र0 2 सामुदायिक योजना के प्रशासनिक संगठन के स्वरूप की विवेचना कीजिए।

प्र0 3 सामुदायिक विकास योजना की समीक्षा कीजिए।

प्र0 4 समुदायिक विकास योजना की अवधारणा की व्याख्या कीजिए।

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सामुदायिक विकास योजना का सूत्रपात कब किया गया?

   अ) 2 अक्टूबर 1952 (ब) 15 अगस्त 1956

   स) 10 दिसम्बर 1952 (द) 26 जनवरी 1952

2. सामुदायिक विकास योजना का लक्ष्य है -

   (अ) शहरी समुदाय में परिवर्तन लाना (ब) ग्रामीण समुदाय में परिवर्तन लाना

   (स) दोनों (द) कोई नहीं।

3. एक ग्राम सेवक के अधीन कितने ग्राम होते हैं ?

   (अ) 10 - 20 (ब) 5 - 10 (स) 10 -15 (द) 1 - 4

4. सामुदायिक विकास योजना का सूत्रपात किस देश के सहयोग से हुआ था?

   (अ) ब्रिटेन (ब) अमेरिका (स) रूस (द) चीन

**उत्तर** - 1. अ 2. ब 3. ब 4. ब

# इकाई 14- समन्वित ग्रामीण विकास योजना

## इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की संरचना

14.3 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का स्वरूप

14.4 समन्वित ग्रामीण विकास योजना का प्रशासनिक क्रियान्वयन

14.5 समुचित ग्रामीण विकास कार्यक्रम: लक्ष्य एवं उपलब्धि

14.6 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की आलोचनात्मक समीक्षा

14.7 सारांश

14.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पुस्तकें

14.9 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

14.10 उत्तर

## 14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप:

* समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम व उसके ढाँचे पर टिप्पणी कर सकेंगे।
* इसके अन्तर्गत लक्षित समूहों की उपलब्धियों पर चर्चा कर सकेंगे।

## 14.1 प्रस्तावना

आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया 1951 से आरम्भ हुई। नियोजन के शुरूआत से ही ग्रामीण विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। नियोजकों ने शुरू से ही इस तथ्य पर बल दिया है कि ग्रामीण विकास के द्वारा ही व्यापक स्तर पर गरीबी व बेरोजगारी उन्मूलन संभव है। यद्यपि नियोजन के शुरूआत से अनेक विकास कार्यक्रमों के द्वारा गरीबी व बेरोजगारी को समाप्त करने का प्रयास किया गया परन्तु पांचवी योजना तक कोई सकारात्मक परिणाम सामने नहीं आया। इस परिस्थिति के उपचार के लिए यह जरूरी था कि ग्रामीण निर्धनता को कम करने के लिए ऐसे प्रोग्राम चलाए जायं जो गरीबों को उत्पादक परिसम्पदों (Productive assets) से या कौशल (Skills) से सम्पन्न कर सकें ताकि वे इसका प्रयोग लाभदायक ढंग से अधिक आय कमाने के लिए कर सकें और परिणामत: वे निर्धनता रेखा को पार कर सकें। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए छठी योजना में समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम की कल्पना की गयी। 2 अक्टूबर 1980 से इस कार्यक्रम को पूरे देश में लागू किया गया।

## 14.2 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की संरचना

ग्रामीण गरीबी समाप्त करने व रोजगार उपलब्ध कराने का कार्य बहुत सी एजेन्सियां करती रही हैं। इनमें शामिल हैं रोजगार गारंटी योजना, रोजगार के लिए खाद्य कार्यक्रम, छोटे किसानों के विकास की एजेन्सी, सीमान्त किसान और कृषि मजदूर कार्यक्रम, सूखाप्रवृत क्षेत्र प्रोग्राम (Drought Prone Area Programme), रेगिस्तान विकास कार्यक्रम (Desert Development Programme) कमान क्षेत्र प्रोग्राम (Command Area Programme) आदि। छठी योजना ने यह सुझाव दिया, "इस प्रकार बहुत से प्रोग्राम जो ग्रामीण निर्धनों के लिए बहु-विध एजेन्सियों द्वारा चलाये जाते हैं समाप्त करने चाहिए और उनका प्रतिस्थापन समग्र देश के लिए एक समन्वित प्रोग्राम द्वारा किया जाना चाहिए।" इस योजना के सुझावों के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Programme - I.R.D.P.) की स्थापना की गयी।

छठी योजना में दो महत्वपूर्ण कार्यक्रमों की परिकल्पना की गयी है- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (I.R.D.P.) और राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम (N.R.E.P.)। समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम द्वारा मूल रूप में गरीब परिवारों में स्व-रोजगार (Self Employment) को प्रोन्नत करने के विधि अपनाई गई ताकि उत्पादक परिसम्पदों के विकास से वे इतनी आय कमा सकें कि निर्धनता रेखा को पार कर लें। राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम का उद्देश्य मौसमी तथा अल्परोगजार के काल दौरान भृति रोजगार. (Wage employment) उपलब्ध कराना है। इसका उद्देश्य यह भी था कि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि भिन्न व्यवसायों में श्रम नियोजन क्षमता (Absorptive capacity) बढ़ाई जाय ताकि अध:संरचनाओं सामाजिक एवं आर्थिक के निर्माण द्वारा अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता को बढ़ाया जा सके।

एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत लाभार्थियों को श्रेणी के अनुसार निम्नवत अनुदान अनुमन्य है-

| क्रम सं0 | विवरण | कुल परियोजना लागत का अनुमन्य प्रतिशत अनुदान | अनुदान की राशि की अधिकतम अनुमन्य है। |
|---|---|---|---|
| 1 | लघु कृषक | 25% | सामान्य क्षेत्रों में रू0 4000/- प्रति परिवार तथा सूखोन्मुख क्षेत्रों में रू0 5000/- प्रति परिवार |
| 2 | सीमान्त कृषक, कृषि श्रमिक, अकृषि तथा ग्रामीण शिल्पकार | 33.33% | तदैव |
| 3. | उपयुक्त में से अनु. जाति/ अनु. | 50% | समस्त स्रोतों में रू0 6000/ प्रति परिवार |
| 4. | गरीबी की रेखा के नीचे वाले परिवार के 8वीं कक्षा तक (उत्तीर्ण या अनुतीर्ण) शिक्षित बेरोजगार ग्रामीण युवा | 30% | समस्त स्रोतों में रू0 7000/- प्रति परिवार |

लाभार्थियों को कार्यक्रम के अन्तर्गत वित्त पोषण के पूर्व ट्राइसेम के अन्तर्गत विशेष में प्रशिक्षित किया जाता है।

## 14.3 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का स्वरूप

1. कार्यक्रम के लाभार्थियों का चयन यद्यपि सिद्धान्तत: निर्धनों में निर्धनतम के आधार पर ही किया जाता है तथापि लाभार्थी की क्षमता, गतिशीलता एवं उत्प्रेरणा को ध्यान में रखते हुए उसके लिए स्वरोजगार योजना के चयन के महत्व की दृष्टि से ऐसे परिवार के चयन पर विचार किया जा सकता है जिसकी वार्षिक पारिवारिक आय रू0 11000/- से कम हो। ज्ञातब्य है कि भारत सरकार द्वारा गरीबी की सीमा रेखा 11,000 रू0 वार्षिक आय पर निर्धारित की गयी है।

2. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लक्ष्य वर्ग में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लघु कृषक, कृषि श्रमिक, गैर कृषि श्रमिक, ग्रामीण दस्तकार एवं अनु. जाति। जनजाति एवं विकलांग व्यक्ति तथा गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के शिक्षित बेरोजगार, ग्रामीण युवा जिन्होंने कक्षा 8 तक पढ़ाई की है चाहे वह उत्तीर्ण हो या अनुर्तीर्ण सम्मिलित होंगे।

3. इस कार्यक्रम के अन्तर्गत चयनित 50ब परिवार अनुसूचित जाति एवं जनजातियों से लिए जाते हैं। कुल प्रदान की जाने वाली सहायता व ऋण राशि का कम से कम 50ब अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लाभार्थियों के लिए आरक्षित है।

4. इस कार्यक्रम में उन ग्रामीण व्यक्तियों को भी सहायता की जाती है जो कृषि सम्बन्धी काम काज समाप्त हो जाने पर बेरोजगार हो जाते हैं उन्हें कामकाजी बनाने का लक्ष्य है।

5. ग्रामीण विकास के रोजगार परक इस कार्यक्रम में मुक्त बंधुआ मजदूरों को प्राथमिकता प्रदान किया जाना विधिक रूप से अनिवार्य है। जनपद के सम्बन्धित प्राधिकारी से प्राप्त मुक्त बंधुआ मजदूरी की सूची में सम्मिलित व्यक्तियों को उनकी इच्छा के अनुरूप निवास के स्थान से सम्बन्धित जनपद के जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा इन वर्गों के व्यक्तियों को अधिभावी प्राथमिकता दी जायेगी।

6. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत अल्पसंख्यक समुदायों के आच्छालन का प्रावधान है। इसमें मुसलमान, सिक्ख, नवबौद्ध, क्रिश्चिन एवं पारसी वर्ग के पात्र परिवारों का चयन करके उनके विकास पर बल दिया जाता है। अल्पसंख्यकों के पारम्परिक क्रियाकलापों को सामूहिक क्रियाकलाप के रूप में लिये जाने पर विशेष बल दिया जाता है।

7. इस योजना में ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों की अधिकाधिक उत्पादन इकाइयों की स्थापना पर विशेष बल दिया जाता है। लाभार्थियों द्वारा अपनाये जाने वाले क्रियाकलापों के अनुसार कार्य विभाजन व क्रियाकलाप लक्ष्य इंगित किये जाते हैं। समस्त निर्धारित लक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में क्रियाकलाप, सेक्टर व विभाग के अनुरूप, वित्तीय आवश्यकताओं का आकलन किया जाता है। योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु तैयार की जाने वाली कार्ययोजना में ग्रामीण

जनों की क्षमताओं एवं अपेक्षाओं का भी ध्यान रखा जाता है।

8. समन्वित ग्रामीण विकास योजना में चयनित लाभार्थियों को अधिकतम पूँजी निवेश (अनुदान+बैंक ऋण) उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाता है किन्तु प्रत्येक दशा में प्रति परिवार पूँजी निवेश न्यूनतम रू0 19000/- होता है।

9. इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों को परिसम्पत्ति के क्रय में पूरी स्वतंत्रता होती है। जिससे वहस्वेच्छा से मानक कम्पनियों के उत्पाद उचित मूल्य पर प्राप्त कर सके। साथ ही यह सुनिश्चित किया जाता है कि उत्पाद अनिवार्य रूप से आई. एस. आई. मार्क के हों तथा जिस संस्था से लाभार्थी परिसम्पत्ति क्रय कर रहा है वह व्यापार कर अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत हो।

10. इस योजना में लाभार्थियों को समूह में लाभान्वित करने का प्रयास किया जाता है जिससे उसके कार्यों में काम आने वाले कच्चे माल तथा विपणन की व्यवस्था हो सके तथा वह अपनी परियोजनाओं को सफलतापूर्वक संचालित कर सके। इक्के दुक्के लोगों को लाभान्वित करने से योजनाओं में सफलता प्राप्त नहीं हो पाती हैं, वहीं दूसरी ओर कार्यक्रम के क्रियान्वयन में भी असुविधा होती है। दुग्ध विकास ग्रामोद्योग हथकरघा, रेशम विकास आदि से सम्बन्धित परियोजनायें समूहमें कार्य करने वाले लाभार्थियों को उपलब्ध करायी जाती है। इन लाभार्थियों को सामान्य सुविधा केन्द्र तथा जिला आपूर्ति विपणन संघ जैसी संस्थाओं के माध्यम से लाभार्थियों को सम्बद्ध कर अनुगामी एवं अग्रगामी सुविधायें उपलब्ध करायी जाती हैं।

11. इस योजना द्वारा ग्रामीण समाज की परम्परागत एवं रूढ़िगत मानसिकता में बदलाव लाना है जिससे वे समयानुसार कृषि समाज में परिवर्तन ला सके। इसलिए उन्हें प्रगतिशील और आधुनिक बनाने का प्रयास किया जाता है।

## 14.4 समन्वित ग्रामीण विकास योजना का प्रशासनिक क्रियान्वयन

किसी भी योजना की सफलता में प्रशासनिक ढाँचे का महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्राय: यह देखा जाता है कि प्रशासनिक कर्मियों की असावधानियों के कारण ही क्रियान्वित योजनायें असफल हो जाती हैं। विभिन्न विभागों के कार्यक्रमों को आई. आर. डी. पी. में एकीकृत किये जाने के कारण उनके बीच उचित सामंजस्य होना अति आवश्यक है तथा इसके लिए एक प्रभावशाली प्रशासनिक ढाँचा भी होना चाहिए।

राज्य स्तर पर सामुदायिक विकास विभाग में आई. आर. डी. पी. को सम्मिलित किया गया है विकास आयुक्त इस योजना के क्रियान्वयन का उत्तरदायी होता है, राज्य सरकार द्वारा विकास आयुक्त की सहायताके लिए ही संयुक्त विकास आयुक्त (ग्रामीण विकास) की नियुक्ति की गयी है। तथा विभाग में सांख्यिकीय अधिकारी, कृषि अधिकारी, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री आदि परामर्श के लिए उपलब्ध होते हैं।

जनपद स्तर पर यह योजना ग्राम्य विकास अभिकरण (डी. आर. डी. पी.) के अधीन होती है तथा जिलाधिकारी आई. आर. डी. पी. के क्रियान्वयन एवं योजना की प्रगति का उत्तरदायी

होता है। जिलाधिकारी के अधीन अतिरिक्त अधिकारी, जिला कृषि अधिकारी, जिला पशु चिकित्सा अधिकारी, मुख्य विकास अधिकारी, जिला पंचायत राज अधिकारी, सचिव सहकारी समितियां आदि प्रशासनिक अधिकारी सहायता के लिए होते हैं जो प्रत्येक वर्ष आई. आर. डी. पी. के क्रियाकलापों की समीक्षा करने में सहायक होते हैं। डी. आर. डी. ए. की कार्यकारिणी के अन्तर्गत निम्नलिखित सदस्य होते हैं-

| | |
|---|---|
| जिलाधिकारी | सभापति |
| राज्य सरकार का कोई प्रतिनिधि | सदस्य |
| सहकारी बैंक का कोई एक प्रतिनिधि | सदस्य |
| भूमि विकास बैंक का एक प्रतिनिधि | सदस्य |
| जिला परिषद का सभापति / प्रतिनिधि | सदस्य |
| जनपद के अग्रणी बैंक का वरिष्ठ अधिकारी | सदस्य |
| डी. आर. सी. का महाप्रबन्धक | सदस्य |
| निर्बल वर्ग के दो प्रतिनिधि | सदस्य |
| (एक अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग) | |
| ग्रामीण महिला वर्ग की एक सदस्य | सदस्य |
| जनपद के सभी सांसद तथा विधायक | सदस्य |
| परियोजना निदेशक | सचिव |

विकास खण्ड स्तर पर खण्ड विकास अधिकारी (बी. डी. ओ.) तथा पंचायत अधिकारी के अधीन इस योजना का संचालन होता है। योजना के उचित क्रियान्वयन के लिए कृषि इन्स्पेक्टर एवं सहकारिता इंस्पेक्टर विकास खण्ड मुख्यालय पर नियुक्त किये जाते हैं तथा प्रत्येक चुने हुए ग्रामों में एक उप कृषि इन्स्पेक्टर एक उपसहकारिता इंस्पेक्टर, दो ग्राम्य स्तरीय कार्यकता कार्यरत होते हैं जो कि आई. आर. डी. पी. को ग्राम्य स्तर पर क्रियान्वित करते हैं।

ग्राम स्तरपर निर्धन परिवार में अत्यधिक निर्धन परिवारों की सूची ग्राम विकास अधिकारी (बी. डी. ए.) द्वारा तैयार की जाती है तत्पश्चात यह सूची ग्राम सभा की बैठक में स्वीकृति के लिए प्रस्तुत की जाती है। यह बैठक खण्ड विकास अधिकारी द्वारा बुलायी जाती है। ग्रा सभा की इस बैठक में स्थानीय व्यक्ति गैर सरकारी व्यक्ति, बी. डी. ओ. तथा बैंक अधिका भाग लेते हैं। इस ग्राम सभा में अन्तिम रूप से चुने गये लाभार्थी परिवारों की सूची ग्राम पंचायत तथा विकास खण्ड कार्यालय में अन्तिम संस्तुति के लिए भेज दी जाती है। उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि जनपद एवं विकास खण्ड स्तर पर प्रशासन की प्रभावी भागीदारी होती है।

## 14.5 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम -लक्ष्य एवं उपलब्धि

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, देश के 5011 ब्लाकों में 2 अक्टूबर 1980 को चालू किया गया। 5 वर्षों (1980-85) के दौरान प्रत्येक ब्लाक में 600 गरीब परिवारों की

सहायता करने का निश्चय किया गया। इस प्रकार150 लाख परिवारों जिनमे 750 लाख व्यक्ति निर्धनता रेखा के नीचे थे, को लाभ पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया। प्रत्येक ब्लाक में 35 लाख रूपये की समरूप राशि इस कार्य के लिए व्यय करने का निर्णय किया गया जिसे 50: 50 के आधार पर केन्द्र और राज्यों के बीच बांटा जाना था। इस योजना में कुल परिव्यय के लगभग 20 प्रतिशत का प्रयोग प्रशासनिक एवं अध: संरचना सम्बन्धी व्यवस्था पर खर्च किया जाना था और शेष 80ब लाभ प्राप्तकर्ताओं को परिसम्पद ग्रहण करने के लिए साहारय के रूप में दिया जाता था।

छठी योजना (1980-81 से 1984-85) के दौरान 1661 करोड़ रूपये साहाय्य (Subsidy) के रूप में उपलब्ध कराए गये और 3102 करोड़ रूपये सावधि ऋण के रूप में। इस प्रकार कुल मिलाकर 4762 करोड़ रूपये का विनियोग किया गया। इसके परिणाम स्वरूप 165.6 लाख लाभ प्राप्त कर्ताओं को जिनमें 39 प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं जनजातियों से थे सहायता प्राप्त हुई। कार्यक्रमों का सराहनीय पक्ष यह रहा है कि प्रति परिवार विनियोग जो 1980-81 में 1642 रूपये था, बढ़कर 1984-85 में 3339 रूपये हो गया।

सातवीं योजना में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन 200 लाख परिवारों को सहायता प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया। जिसमें 182 लाख परिवारों को सहायता प्राप्त हुई और कुल 8688 करोड़ रूपये के विनियोग की व्यवस्था की गयी। इनमें 45 प्रतिशत परिवार अनुसूचित एवं जनजातियों से थे। प्रति लाभ प्राप्तकर्ता पर 4780 रूपये का विनियोग किया गया, जिसमें से 38 प्रतिशत सहायता (Subsidy) और 62ब सावधि ऋण था।

1990-91 और1991-92 के दो वर्षों दौरान इस प्रोग्राम पर 3920 करोड़ का विनियोग किया गया और 54 लाख परिवारों को लाभ पहुँचाया गया। प्रति परिवार विनियोग में तीव्र वृद्धि हुई और 1991-92 में यह बढ़कर 7568 रूपये हो गया।

आठवीं योजना (1992-93 से 1996-97) के दौरान इस प्रोग्राम के अधीन 11541 करोड़ रूपये के विनियोग द्वारा 108.2 लाख परिवारों को सहायता दी गयी। इस प्रकार प्रति परिवार विनियोग 10666 रूपये हुआ। प्रोग्राम द्वारा कुल रूप में 108 लाख परिवारों को सहायता दी गयी, जिसमें से 50 प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं जनजाति से सम्बन्धित थी और इस प्रकार योजना द्वारा निर्धारित लक्ष्य पूरा किया गया। परन्तु लाभ प्राप्त करने वाली स्त्रियों की मात्रा केवल 34 प्रतिशत थी, जो कि 40 प्रतिशत के निश्चित लक्ष्य से नीचे थी। सरकार ने प्रति परिवार 12000 रूपये का विनियोग स्तर प्राप्त करने का लक्ष्य रखा था, जिसे 1997 में 15036 रूपये प्रति परिवार का विनियोग प्राप्त करके पार कर लिया गया। 1 अप्रैल 1999 से इस योजना का विलय स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत कर दिया गया है।

## 14.6 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की आलोचनात्मक समीक्षा

प्रोग्राम के मूल्यांकन सम्बन्धी बहुत से अध्ययनों से पता चलता है कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को एक व्यापक गरीबी उन्मूलन के रूप में प्रस्तुत किया परन्तु वास्तविक धरातल पर

यह विफल रही है। यह कार्यक्रम में अग्रलिखित कमियों के कारण सफल नहीं हो पाया।

1. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत गरीबों के रूप में चिन्हित एक बड़ा वर्ग वास्तव में गरीब वर्ग से नहीं था प्रोफेसर इन्दिरा हरावे के गुजरात के चार गांवों के अध्ययन, प्रोफेसर नीलकण्ठ रथ के नाबार्ड सर्वेक्षण (NABARD Survey) तथा श्री ए0 सी0 कुट्टी कृष्णन के केरल के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष दर्शाते हैं कि निर्धनता मूल्यांकन का कार्य सही ढंग से नहीं हुआ, जिसके नतीजे के तौर पर लाभ उदार रूप में सम्पन्न समूह को पहुंचते चले जाते हैं।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को लागू करने वाले तीन अंगों अर्थात विकास प्रशासन, ऋण संस्थाओं एवं पंचायती राज संस्थानो की कार्यपद्धति में कमजोरियों के कारण गैर निर्धन (Non-poor) इन ऋणों एवं साहाय्यों को हथियाने में सफल हो गये। गैर निर्धनों द्वारा ऋणों को हथियाने के लिए बहुत से अवैध तरीकों का प्रयोग किया गया। इनमें मुख्य थे — परिवार के एक सदस्य को कागज पर किसान और बाकी सभी सदस्यों को भूमिहीन मजदूर के रूप में दिखाना, (2) छोटे और सीमान्त किसान के रूप में वर्गीकृत होने के लिए भूमि को परिवार के सभी सदस्यों में विभक्त करना, और (3) किसी वास्तविक निर्धन व्यक्ति के नाम में परिसम्पत् खरीद लेना और फिर गरीब व्यक्ति को कुछ धनराशि देकर इन परिसम्पदों को हथिया लेना। नाबार्ड के अधीन किए गये जयपुर अध्ययन ने यह रहस्योद्घाटन किया है कि ऋण प्राप्त कर्ताओं में से केवल 46 प्रतिशत के पास दो वर्षों के बाद परिसम्पत बच पाये वे अन्य व्यक्तियों ने या तो इन्हें बेच दिया था या पशु मर गया था। कृषि श्रम परिवारों का बहुत ही छोटा अनुपात अर्थात 34 प्रतिशत ही ऐसा था जिसके पास पशु बच पाये थे।

2. इस योजना में बड़े पैमाने पर दलाली की पद्धति और भ्रष्टाचार उत्पन्न हो गया है। ग्राम समाज के प्रभावशाली सदस्य नौकरशाही एवं सहकारी विभाग के अफसरों एवं उधार संस्थाओं के साथ मिलकर गरीब देहातियों को सहाय्य एवं उधार की स्वीकृति प्रदान करने के लिए दलाली वसूल करते हैं। बहुत सी परिस्थितियों में एक ही पशु को विभिन्न लाभ प्राप्त कर्ताओं में घुमाने जाता है और इनमें 'शुद्ध लाभ' सहाय्य ही है। ग्राम समाज के ढांचे में जहाँ गरीब ऋणों एवं सहाय्यों की स्वीकृति के लिए गैर निर्धनों पर बहुत हद तक निर्भर हो गये हैं गैर निर्धन इन विकास कार्यक्रमों के लाभों को हथियाने में नाकामयाब हो गये हैं इसके परिणाम स्वरूप गरीबों में लाभों की पहुँच की अुनपलब्धता और निर्धनों की गैर सहभागिता के कारण समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का उद्देश्य असफल हो जाता है।

3. इस योजना में गरीबों को जिस मद के लिए ऋण दिया गया था, उस मद (या पशुपालन, लघु उद्योग, कुटीर उद्योग आदि) के लिए अधिकांश जगहों पर आधारभूत संरचना का प्रभाव था। यथा राजस्थान के कई गांवों में बकरी और भैंस के लिए ऋण दिये गये जबकि उन क्षेत्रों में चाले का अभाव था। इसी तरह कई गांवों में प्रचुर मात्रा में दुग्ध उत्पादन हुआ लेकिन उत्पादक वस्तु के विपणन की सुविधा नहीं थी।

4. नौकरशाही की जटिल संरचना और कार्यपद्धति भी इस योजना की असफलता का एक महत्वपूर्ण कारण है नौकरशाही का जाल इतना जटिल और भ्रमित है कि उचित समय पर न तो यह कार्यक्रम कार्यान्वित हो पाता है और न जरूरतमन्द ग्रमीणों को उसका लाभ

प्राप्त हो पाता है। सरकारी तंत्र से जुड़े कर्मचारी व अधिकारी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में अधिक रूचि नहीं लेते हैं। अधिकारी अधिक से अधिक समय तक नगरों में रहते हैं खाना पूर्ति के लिए कभी कभार गांव का दौरा लगा लेते हैं। विकास कार्य को फर्जी आंकड़ों के द्वारा सरकार व बड़े अधिकारियों को भेजा जाता है। सामान्यत: बड़े अधिकारी आकड़ों के आधार पर ही सम्पूर्ण कार्यक्रम का मूल्यांकन करते हैं इससे इन्हें वास्तविक प्रगति की जानकारी नहीं हो पाती है। ये मातहत अधिकारियों पर ही निर्भर रहते हैं जैसा वे इन्हें समझा देते हैं वैसे ही ये समझ लेते हैं।

5. ग्रामीण समाज का विकास व उन्नति इस बात पर बहुत कुछ निर्भर है कि वहां सोच व कार्यपद्धति किस प्रकार की है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अध्ययनों से यह बात सामने आयी है कि इस योजना के अधिकांश लाभार्थी योजना के साहाय्य के कारण योजना से जुड़े। उनमें इस भावना का अभाव पाया गया कि वे इस योजना द्वारा आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सक्ते हैं अपने इसी सोच के कारण कुछ प्रतिशत लाभार्थियों ने जिस मद के लिए धन आवंटित किया गया उसमें खर्च न कर अपने घरेलू आवश्यकता हेतु उस धन को खर्च कर दिया।

## 14.7 सारांश

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (I.R.D.P.) ग्रामीण स्तर पर गरीबों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने का कार्यक्रम है। इसके तरह सरकार विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंकों के माध्यम से आसान शर्तों पर और कम ब्याज दर पर गरीब ग्रामीणों को ऋण सुलभ कराती हैं। सरकारी व्यवस्था के अन्तर्गत सामुदायिक खण्डों (Blocks) के माध्यम से गाँवों के अत्याधिक गरीब लोगों को भैंस, गाय, बैल, भेड़, बकरी, सुअर आदि दिया जाता है ताकि वे अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सके। यद्यपि राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण गरीबी उन्मूलन का यह एक व्यापक कार्यक्रम था परन्तु भ्रष्टाचार नौकरशाही और अन्य कई कारणों से यह योजना अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकी।

## 14.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पुस्तकें

1. एस. सी.दुबे - विकास का समाजशास्त्र

2. एस. सी. दुबे - इण्डियाज चेंजिंग विलेजेज

## 14.9 प्रश्नोत्तर

**लघु उत्तरीय प्रश्न**

1. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

2. समन्वित विकास कार्यक्रमों में विभिन्न वर्गों के अनुदान की संरचना क्या है?

3. उन योजनाओं का उल्लेख करें जिनके समन्वय से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम शुरू किया गया है।

4. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की उपलब्धियों का मूल्यांकन करें।

**दीर्घ उत्तरीय प्रश्न**

1. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की विशेषताओं का उल्लेख करें ।

2. समन्वित ग्रामीण विकास की लक्ष्य एवं उपलब्धियों का वर्णन करें ।

3. समन्वित ग्रामीण विकास पर प्रकाश डालिए तथा उन कमियों का उल्लेख करें जिसके कारण यह अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सका।

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न**

1. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम कब शुरू हुआ?

   1. 2 अक्टूबर 1980 2. 14 नवम्बर 1980 3. 22 दिसम्बर 1980

   4. इनमें से कोई नहीं ।

2. गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लघु कृषकों को कुल ऋण का कितने प्रतिशत अनुदान दिया जाता है?

   1) 10 प्रतिशत 2) 15 प्रतिशत 3) 20 प्रतिशत 4) 25 प्रतिशत

3. राज्य स्तर पर इस योजना के क्रियान्वयन के लिए कौन उत्तरदायी होता है-

   1) गृह सचिव 2) विकास आयुक्त 3) मुख्यमंत्री 4) इनमें से कोई नहीं

4. ग्रम स्तर पर निर्धनों की सूची किसके द्वारा तैयार की जाती है?

   1) खण्ड विकास अधिकारी 2) ग्राम विकास अधिकारी

   3) ग्राम प्रधान 4) इनमें से कोई नहीं

उत्तर : 1. 2 2. 4 3. 2 4. 2

# इकाई 15- स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

## इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 स्वर्णजयन्ती रोजगार योजना - कार्य प्रणाली

15.2.1 स्वयं सहायता समूह

15.2.2 स्वयं सहायता समूह का गठन

15.2.3 वित्तीय सहायता

15.3 स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना की विशेषता

15.4 बैंक ऋण एवं अनुदान

15.4.1 चिन्हीकरण एवं चयन की प्रक्रिया

15.4.2 अनुदान

15.5 कार्यान्वयन

15.5.1 ब्लॉक स्तरीय समिति

15.6 सारांश

15.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पुस्तकें

15.8 प्रश्नोत्तर

## 15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

* एस. जी. एस. वाई. योजना की कार्यनीति पर टिप्पणी कर सकेंगे।
* इस योजना की विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे।

## 15.1 प्रस्तावना

भारत में ग्रामीण क्षेत्रों के उत्थान के लिए अनेक कल्याणकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता रहा है। विशेषत: ग्रामीण गरीबी कम करने के लिए इन योजनाओं में विशेष जोर दिया गया है। कार्यक्रम क्रियान्वयन के दौरान प्राप्त नये अनुभवों के आधार पर इनकी समीक्षा की गयी है तथा और प्रभावशाली बनाया गया है। इसके फलस्वरूप विगत में चलायी जा रही विभिन्न गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम (समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम, ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम तथा गंगा कल्याण योजना जैसे

कार्यक्रमों का विलय कर 1 अप्रैल 99 से स्वर्ण जयंती रोजगार योजना बनाई गयी, जिसमें स्वयं सहायता समूहों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इस इकाई में हम सर्वप्रथम स्वर्ण जयंती रोजगार योजना की अवधारणा एवं स्वयं समूह के स्वरूप पर ध्यान केन्द्रित करेंगे। इसके उपरांत एस. जी. एस. वाई. की विभिन्न विशेषताओं की विवेचना की जायेगी। फिर इस योजना में निर्धारित नीति के अनुसार ऋण एवं अनुदान की व्यवस्था एवं पात्रता सम्बन्धी तथ्यों का वर्णन किया जायेगा। अन्त में एस. जी. एस. वाई. के उचित क्रियान्वयन के लिए निर्धारित विभिन्न उपायों का उल्लेख होगा।

## 15.2 स्वर्ण जयन्ती रोजगार योजना- कार्य प्रणाली

केन्द्र तथा राजय सरकार द्वारा संचालित एस. जी. एस. वाई. गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की आर्थिक स्थिति जीवन स्तर को सुधारने के लिए स्वयं सहायता समूहके माध्यम से निर्धनता से सम्पन्नता की ओर ले जाने का मार्ग है इसे नये रोजगार कार्यक्रम के रूप में दिनांक 1.4. 99 को शुरू किया गया। एस. जी. एस. वाई. की कार्यनीति अन्य की पूर्व कार्यक्रमों से भिन्न है तथा इसमें स्वरोजगार के सभी पहलुओं अर्थात ग्रामीण गरीबों के स्व-सहायता समूहों का गठन तथा उनकी कार्य क्षमता बढ़ाना, समूहगत गतिविधियों की योजना बनाना, बुनियादी ढांचे तथा प्रौद्योगिकी और विपणन सहायता को शामिल करके स्वरोजगार के व्यापक कार्यक्रम के रूप में परिकल्पना की गयी है।

ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवार एस. जी. एस. आई. के तहत लक्ष्य समूह है। इनमें अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिए 50 प्रतिशत महिलाओं के लिए 40 प्रतिशत तथा विकलांग व्यक्तियों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण के जरिए इन कमजोर वर्गों के लिए विशेष सुरक्षात्मक उपाय किये गये हैं।

प्रतिशत की दृष्टि से भारत में गरीबी नि:सन्देह घटी है। 1973-74 में देश की जनसंख्या 56.44ब आबादी गरीब थी जो 1993-94 में घटकर 37.27ब रह गयी। तथापि चिन्ता इस बात को लेकर है कि अभी भी भारत में लगभग 25 करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हैं।

**15.2.1 स्वयं सहायता समूह** - इसको समझे बिना हम स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना को पूर्ण रूप से नहीं जान सकते हैं। एस. जी. एस. वाई. की गरीबी उन्मूलन की अवधारणा इस तथ्य पर आधारित है कि "सामाजिक गतिशीलता गरीब तबके को उनके अपने संगठन (Self Help Group) के लिए सामर्थ्य प्रदान करती है जिसमें वे पूर्णतया और प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हुए गरीबी उन्मूलन से संबंधित सभी मुद्दों पर निर्णय लेते हैं। वास्तव में स्वयं सहायता समूह के साथ मिलकर एक निर्बल व्यक्ति अपने विकास हेतु आवश्यक संसाधनों एवं क्षमता वृद्धि का अवसर प्राप्त करता है विशेषत: गरीब वर्ग का व्यक्ति जिसका भौतिक संसाधनों पर स्वामित्व सीमित होता है के लिए जीवन स्तर में सुधार करना अत्यंत ही दुष्कर कार्य होता है। ऐसी परिस्थिति में समस्या से निपटने के लिए 'स्वयं' सहायता समूहों की प्रासंगिकता स्वमेव सिद्ध है। इससे गरीबी रेखा से ऊपर आने में मदद मिलती है क्योंकि स्वयं सहायता समूह के उद्देश्य स्थानीय परिस्थितियों आवश्यकताओं

तथा सदस्यों की विभिन्न अपेक्षाओं को लेकर बनते हैं जिसमें समूह के सदस्यगण भली भांति विचार विमर्श करते एवं सामूहिक गतिविधियों में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं।

15.2.2 **स्वयं सहायता समूह का गठन** : समूह गठन एक सामूहिक सहमति का प्रतिफल हैं जिसके सदस्यगण नियमित रूप से लघु बचत करने एवं अपनी बचतों को सम्मिलित निधि में परिवर्तित करने के लिए सहमत हैं। समूह गठन में निम्नलिखित मार्ग निर्देशों को ध्यान में रखा जाता है।

1. इस योजनान्तर्गत एक स्वयं सहायता समूह में न्युनतम 5 से लेकर अधिकतम 20 व्यक्ति हो सकते हैं।

2. समूह के समस्त सदस्य गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों के होना चाहिए। समूह में उसी परिवार से एक से अधिक सदस्य नहीं होना चाहिए और न ही एक व्यक्ति को एक से अधिक समूह का सदस्य नहीं होना चाहिए।

3. समूह को अपने को नियंत्रित करने हेतु एक आचार संहिता बनाना चाहिए। यह नियमित साप्ताहिक पाक्षिक, मासिक बैठकों के रूप में लोकतांत्रिक तरीके के प्रयोग आदि के रूप में होना चाहिए।

4. सदस्यों को नियमि बचतों के माध्यम से अपना कोष बनाना चाहिए। जो सदस्यगण की आम सहमति से निर्धारित हो।

5. समूह की बैठकों में सदस्यों को सहभागी रूप निर्णय लेने की प्रक्रिया के तहत ऋण वितरण सम्बन्धी निर्णय लेना चाहिए एवं समूह को एक सामूहिक खाता खोलना अनिवार्य होता है जिसमें अवशेष धनराशि को जमा किया जा सके ।

6. स्वयं सहायता समूह एक अनौपचारिक समूह होगा फिर भी समूह सोसाइटी पंजीकरण एक्ट राज्य सहकारिता एक्ट के तहत पंजीकृत कराने के अधिकारी हैं ।

7. सदस्यों की आयु 20 से 60 वर्ष के बीच होनी चाहिए।

8. समूह कोष फण्ड का उपयोग सदस्यों को ऋण देने के लिए किया जाना चाहिए। समूह को ऋण स्वीकृति प्रक्रिया वसूली प्रक्रिया एवं ब्याज दरों को शामिल करते हुए वित्तीय प्रबन्धन नार्म को विकसित करना चाहिए।

9. समूह को प्राथमिकता के आधार पर ऋण प्रार्थना पत्रों ऋण वसूली किश्तों को निर्धारित करने देय ऋण कीउचित ब्याज दर निर्धारित करने तथा ऋण की किश्तों की वसूली के गहन अनुश्रवण करने के योग्य होना चाहिए।

10. प्रत्येक विकास खण्ड में गठित समूह का 50 प्रतिशत महिलाओं के लिए सीमित होना चाहिए। विकलांग व्यक्तियों के मामले में गठित समूहों को यथा सम्भव विकलांगता विशिष्टटयों के आधार पर बनाना चाहिए, जिसमें विभिन्न श्रेणी के विकलांगों को शामिल किया जा सकता है।

11. समूह गठन की प्रक्रिया को बढ़ावा देने में केवल सरकारी कर्मचारी ही नहीं बल्कि गैरसरकारी संस्थाओं का महत्वपूर्ण मदद मिल सकती है क्योंकि ये संस्थाएं केवल सुविधा

दाताओं की उपलब्धता ही नहीं करवाते बल्कि उनकी क्षमता निर्माण में सहायता भी करते हैं।

**15.2.3 वित्तीय सहायता** - वैयक्तिक स्वरोजगार या स्व सहायता समूहों के लिए एस. जी. एस. वाई. के अंतर्गत सहायता सरकार द्वारा सब्सिडी तथा बैंक द्वारा ऋण के रूप में दी जाती है सामान्यत: सब्सिडी परियोजना लागत का 30 प्रतिशत दी जाती है बशर्ते कि अधिकतम सीमा 7500 रूपया हो/ अ0 जा/ अ0ज0जा0 के लिए सब्सिडी 10,000 की परियोजना लागत पर 50ब तक है स्वरोजगारियों के समूहों के लिए भी सब्सिडी 50 प्रतिशत है बशर्ते कि परियोजना लागत 1.25 लाख हो। उल्लेखनीय है कि यह योजना खर्च केन्द्र और राज्यों के बीच 75 : 25 के अनुपात में वहन किया जाता है।

इसका क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओ, बैंकों, संबंधित विभागों तथा गैर सरकारी संगठनों की सक्रिय भागीदारी से डी. आर. डी. ए. द्वारा क्रियान्वित किया जा रहा है।

## 15.3 स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की विशेषता

एस. जी. एस. वाई. की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं -

इस योजना की प्रमुख विशेषता ग्रामीण गरीबों को सामर्थ्य प्रदान करने के निमित्त बड़ी संख्या में छोटे उद्यमों की स्थापना करना है ताकि वे मूल्यवान वस्तुओं के उत्पादक बन सकें।

इसके अंतर्गत समूहगत दृष्टिकोण पर विशेष बल दिया जाता है। इसके लिए प्रत्येक ब्लाक के अंतर्गत 4-5 प्रमुख गतिविधियों की पहचान की जाती है।

एस. जी. एस. वाई. प्रत्येक प्रमुख गतिविधि के लिए एक परियोजना पद्धति का अनुसरण करता है। चिन्हित क्रियाकलापों हेतु परियोजना रिपोर्ट तैयार की जाती है। इसकी तैयारी में बैंक तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं को निकट एवं सक्रिय रूप से सहभागी बनाया जाता है जिससे की ऋण स्वीकृति में किसी प्रकार का विलम्ब न हो।

इस कार्यक्रम के माध्यम से आगामी 5 वर्षों में प्रत्येक विकास खण्ड में 30 प्रतिशत गरीबों को आच्छादित करने की योजना है इसके अलावा कार्यक्रम की गुणवत्ता को नष्ट किये बिना अधिकतम संख्या में पंचायतों का आच्छादन सुनिश्चित किया जाता है।

एस. जी. एस. वाई. समूह अवधारणा पर ध्यान केन्द्रित करेगी इसके अंतर्गत गरीबों को स्वयं सहायता समूहों में संगठित किया जाता है तथा यह प्रयास किया जाता है कि स्व सहायता समूहमें महिलाओं की सहभागिता भी सुनिश्चित हो। कम से कम विकास खण्ड स्तर पर आधे समूह सम्पूर्ण रूप से महिला समूह होंगे।

गरीबी की रेखा के नीचे के परिवारों के सर्वेक्षण में अभिज्ञापित परिवारों की सूची को ग्राम सभा द्वारा प्रमाणित किया जायेगा।

एस. जी. एस. वाई. एक ऋण और सब्सिडी कार्यक्रम है तथापि इसके तहत ऋण एक महत्वपूर्ण घटक है जबकि सब्सिडी एक लघु तथा सामर्थ्य प्रदान करने वाला घटक है इसमें बैंकों की वृहद भागीदारी की कल्पना की गयी है। उन्हें परियोजनाओं की आयोजना तैयारी गतिविधि समूह का चयन, आधारभूत संरचना की योजना तथा क्षमता निर्माण तथा स्व-

सहायता समूहों की गतिविधियों के चयन, व्यक्तिगत स्वरोजगारियों के चयन ऋण पूर्व की गतिविधियों तथा ऋण देने के बाद की मानीटरिंग जिसमें धन वसूली भी शामिल है में सक्रिय रूप से शामिल किया जाता है।

एस. जी.एस.वाई. द्वारा भली भांति प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के द्वारा कौशल विकास पर बल दिया जाता है। जिन व्यक्तियों को ऋण दिया जाता है उनका आकलन कर प्रशिक्षण दिया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत आवंटित धनराशि का 10ब राशि ''एस. जी. एस. वाई. प्रशिक्षण निधि'' में जमा की जायेगी।

इस योजना के तहत पहचान की गयी सामूहिक गतिविधि के लिए तकनीकी उन्नयन सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है। तकनीकी हस्तक्षेप द्वारा स्थानीय संसाधनों को सुदृढ़ करना होता है जिसमें स्थानीय तथा गैर स्थानीय बाजारों के लिए प्राकृतिक तथा अन्य श्रोतों से प्राप्त स्थानीय सामग्री को संसोधित करना सम्मिलित है।

इस योजना का क्रियान्वयन डी. आर. डी. ए. द्वारा पंचायत समितियों के माध्यम से किया जाता है। योजना बनाने, कार्यान्वयन, निगरानी की प्रक्रिया में जिले के बैंक तथा अन्य वित्तीय संस्थाएं, पंचायती राज संस्थाएं, गैर सरकारी संगठन तथा तकनीकी संस्थाएं शामिल होती हैं।

एस. जी. एस.वाई. के अंतर्गत 15 प्रतिशत निधियां राष्ट्रीय स्तर पर अन्य विभागों अथवा सरकारी/अर्न्तराष्ट्रीय संगठनों के सहयोग से ''विशेष परियोजनाओं'' जिनमें अलग -अलग जिलों में शुरू की जाने वाली पहल भी शामिल है के जरिए ग्रामीण गरीबों के लिए स्वरोजगार हेतु नई पहल शुरू करने के लिए निर्धारित की जाती है।

स्वरोजगारियों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के विपणन को प्रोत्साहित करने के लिए एस. जी. एस. वाई. में प्रावधान किया गया है इसके अन्तर्गत बाजार सूचना बाजारों का विकास परामर्श व सेवाएं तथा निर्यात को सम्मिलित करते हुए उत्पादों की बिक्री की संस्थागत व्यवस्था सम्मिलित है।

ग्रामीण गरीबों के अति संवेदनशील समूहों पर एस. जी. एस.वाई. द्वारा विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाता है इसके लिए स्व-रोजगारियों में से न्यूनतम 50ब अनुसूचित जाति/ जनजाति के, 40ब महिलाएं तथा 3 प्रतिशत विकलांग व्यक्ति होते हैं।

इसके अन्तर्गत केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों में निधियों के वहन का अनुपात 75:25 का होता है।

पंचायत समितियों के माध्यम से जिला ग्राम विकास अभिकरण द्वारा एस. जी. एस. वाई. का क्रियान्वयन किया जायेगा। नियोजन, क्रियान्वयन तथा अनुश्रवण की प्रक्रिया में बैंक पंचायती, वित्तीय एवं अन्य गैर सरकारी संगठनों को सामूहिक रूप से सहभागी बनाया जायेगा।

प्रदेशों के लिए मात्राकृत केन्द्रीय परिव्यय का विभाजन राज्यों में गरीबी के स्तर के अनुसार किया जायेगा। इसके अतिरिक्त मानकों जैसे उपभोग की क्षमता तथा विशेष आवश्यक का भी ध्यान रखा जायेगा ।

## 15.4 बैंक ऋण एवं अनुदान

स्वरोजगारियों के लिए वित्तीय सहायता दो घटकों से उपलब्ध होती है। यथा ऋण एवं अनुदान एस. जी. एस. वाई. ऋण से सम्बन्धित योजना है और इसीलिए ऋण महत्वपूर्ण घटक है

जबकि अनुदान सहायक मात्र है। अनुदान का उद्देश्य परियोजना को उपयोगी बनाने के लिए है। यह ऋण व्यावसायिक बैंकों, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के माध्यम से दिया जाता है।

स्वयं सहायता समूह जब अपने क्रिया कलापों द्वारा यह प्रदर्शित करने में सक्षम हो जाते हैं कि वे आर्थिक गतिविधियों के लिए सहायता प्राप्त करने के योग्य हैं तो उन्हें यह सहायता दो तरह से मिल सकती है।

1. **समूह के सदस्यों को ऋण सह अनुदाना** - समूह में व्यक्तियों को स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना की आर्थिक सहायता सहित ऋण इस शर्त के साथ दिया जाता है कि समूह में भावी स्वरोजगारी कथित मदों के अन्तर्गत आय वृद्धि क्रिया कलापों को लिए जाने के इच्छुक व समर्थवान है। यद्यपि ऋण सह अनुदान के अन्तर्गत कुछ व्यक्तिगत लाभार्थी चिन्हित किये जाते हैं तथापि यह आवश्यक है कि बैंकों के ऋण के शीघ्र भुगतान के लिए समूह गारण्टी के लिए तैयार है। यही नहीं समूहसदस्य के आय संवर्धन और सम्पत्ति प्रबन्धन के गहन अनुश्रवण का उत्तरदायित्व भी लेता है। समूह से यह अपेक्षा की जाती है कि वे सम्बन्धित लाइन डिपार्टमेन्ट की सेवायें ले जिससे कि सदस्य अपनी क्रिया कलाप से वांछित आय अर्जित कर सके। समूह को यह भी अधिकार है कि वह स्वरोजगारी को उपलब्धहोने वाली अनुदान राशि का एक अंश उसके व्यक्तिगत योगदान के रूप में समूह निधि में ले सकता है। यहां तक कि बैंक की सभी ऋण किस्तों के भुगतान तक समूह अनुदान की धनराशि को स्वयं अपने खाते में रख सकता है। अर्थात किसी मामले में यदि कोई विवाद होता है तो समूह के निर्णय पर छोड़ दिया जाना चाहिए।

2. **समूह क्रियाकलापों के लिए सब्सिडी सह ऋण** - एस. जी. एस. वाई. प्राथमिक रूप से समूह पद्धति के अनुश्रवण पर बल देती है क्योंकि सामूहिक क्रियाकलापों को सफलता का अवसर अधिक मिलता है। समूह की गतिविधियों के लिए बैंक अप सहायता और बाजार लिंकेज उपलब्ध कराना आसान है इस योजना के तहत समूह 1.25 लाख रूपये तक ऋण ले सकता है। जिसमें 50 प्रतिशत सब्सीडी अधिकृत है। जिला ग्राम्य विकास अभिकरणों को समूहों के सदस्यों के लिए प्रशिक्षपण कार्यक्रमों का आयोजन करवाना चाहिए। ताकि वे सशक्त एवं आत्म निर्भर समूह के रूप में विकसित हो सकें।

### 3.4.1 चिन्हीकरण एवं चयन की प्रक्रिया -

1. प्रत्येक वर्ष एक बार गांव की सूची को विकास खण्ड एस. जी. एस. वाई. समिति द्वारा अन्तिम रूप देकर सम्बन्धित सरपंचों को सूचित किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत स्वरोजगारी ग्राम सभा में चयनित किये जायेंगे। गरीबों की अधिकतर भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए वी. डी.ओ. या उनके प्रतिनिधि बैंकर ओर सरपंच की तीन सदस्यी टीम को प्रकाशित सूची के अनुसार पंचायत में प्रत्येक आबादी का निरीक्षण करना चाहिए। ताकि इस योजना के अभिलक्षित उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके।

2. इस योजना में चयन प्रक्रिया को पारदर्शी बनाने पर जोर दिया गया है ताकि गरीबों में आत्मविश्वास जागृत हो सके। जब उपलब्ध योजना की तुलना में क्षमतावान

स्वरोजगारियों की संख्या अधिक हो तो चयन की प्रक्रिय में क्षमतावान उद्यमियों को पहले चयन करना चाहिए क्योंकि एस. जी. एस. वाई. कार्यक्रम का लक्ष्य मात्र निर्धनतम ही नहीं बल्कि योग्यता का मानक भी महत्वपूर्ण है।

3. ऋण स्वीकृति के दौरान क्षमतावान स्वरोजगारियों की पर्याप्त संख्या के विषय में सुनिश्चित न होने पर अन्तिम चयन बैंक छोड़ने के लिए समिति स्वतंत्र है।

4. चयनोपरांत बी. डी. ओ. चयनित व्यक्तियों द्वारा प्रार्थनापत्र भरवाने की व्यवस्था सुनिश्चित करेगा।

5. बैंक को एक बार प्रार्थना पत्र प्राप्त किये जाने के पश्चात उन्हें सामान्यत: 15 दिन के भीतर स्वीकृत कर देना चाहिये। तथा किसी भी कीमत पर एक महीने से अधिक समय नहीं लगना चाहिए। प्रत्येक वर्ष बैंकों द्वारा स्वीकृति की प्रक्रिया जुलाई तक पूरी हो जानी चाहिए।

6. अन्तिम रूप से चयनित स्वरोजगारियों की सूची (वार्षिक) बी. डी. ओ. द्वारा मुद्रित करानी चाहिए तथा अगली ग्राम सभा के समक्ष रनखे के लिए इसकी प्रतियां ग्राम पंचायत ग्राम्य विकास अभिकरण, अन्य ब्लाक कर्मचारियों, बैंक कर्मियों तथा समस्त अन्य सम्बन्धित एजेन्सियों को भी उपलब्ध करायी जायेगी।

15.4.2 **अनुदान** - योजना को सफल बनाने के लिए एस. जी.एस. वाई. के अन्तर्गत अनुदान की समान दरें निर्धारित की गयी हैं। परियोजना लागत का 30 प्रतिशत अधिकतम रूपये 7500 एवं अनुसूचित जाति/ जनजाति की स्थिति में यह अनुदान 50 प्रतिशत जिसकी अधिकतम धनराशि 10,000/ होगी। स्वयं सहायता समूहों के लिए परियोजना लागत अधिकतम 1.25 लाख होगी जिसमें अनुदान 50ब होगा।

दूसरा अनुदान की राशि अलग से अनुदान आरक्षित कोष में रखा जायेगा जिस पर ब्याज नहीं देय होगा। 5 वर्ष बाद इस धनराशि को निकालकर स्वर्ण जयंती रोजगार योजना के स्वरोजगारियों के नकद ऋण खाते में जमा कर दी जाती है। ऋण वापसी की सारणी इस प्रकार से बनायी जाती है ताकि आरक्षित कोष में जमा अनुदान की राशि कुछ किश्तों में समायोजित हो जाय। किश्तों की अवधि का निर्धारण योजनावार नाबार्ड द्वारा किया जायेगा।

बैंक स्वरोजगारियों के लिए एक ऋण पास बुक जारी करते हैं जिसमें विस्तृत विवरण यथा ऋण स्वीकृति की तिथि, किश्तवार तिथियों एवं अनुदान राशि एवं ब्याज राशि का उल्लेख समय-समय पर शाखा प्रबंधक द्वारा किया जाता है।

## 15.5 कार्यान्वयन

एस.जी.एस.वाई. के उचित कार्यान्वयन के लिए किये गये विभिन्न उपाय निम्नलिखित हैं-

1. कार्यक्रम के कार्यान्वयन की निगरानी के लिए राज्य जिला तथा ब्लाक स्तरों पर सतर्कता एवं निगरानी समितियां बनायी गयी हैं। स्थानीय संसद सदस्य, विधायक एवं ब्लाक स्तरीय समितियों के लोग इसके सदस्य होते हैं।

2. प्रत्येक राज्य संघ राज्य में कार्यक्रम के बारे में राज्य एवं डी.आर.डी.ए. स्तरीय

कार्यकर्ता और बैंक कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है देन तथा जागरूक बनाने के कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं।

3. ऋण सुविधाओं के बारे में भारतीय रिजर्व बैंक नाबार्ड तथा अन्य वाणिज्यिक बैंकों के साथ नियमित रूप से सलाह मशविरा किया जाता है क्योंकि एस. जी.एस.वाई. में मुख्य क्रियाकलापों, क्लस्टर एवं सहायता, समूह के चिन्हांकन तथा अन्यादि स्तरों पर बैंकों की निकट सहभागिता जरूरी है।

4. विभिन्न राज्यों/ संघ राज्यों के स्वरोजगारी एस. जी.एस. वाई. के उत्पादों के विपणन को बढ़ावा देने तथा उनके लिए बाजार तलाश करने के लिए राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेलों दोनों में भाग लेते हैं।

5. स्वयं सहायता समूहों के विकास, समूह बनाने, उनकी क्षमता बढ़ाने, प्रशिक्षण देने तथा बैंक ऋण प्राप्त करने आदि कार्यों में गैर सरकारी संगठनों का महत्वपूर्ण योगदान होगा।

6. राज्य स्तर/केन्द्र स्तर पर मासिक, छमाही तथा वार्षिक प्रगति रिपोर्टों के आधार पर कार्यक्रम की नियमित निगरानी की जाती है।

7. जनपद में तकनीकी संस्थाओं के रूप में उपलब्ध तकनीकी श्रोतों की सहभागिता सुनिश्चित किये जाने का ध्यान रखना चाहिए। इन तकनीकी संस्थाओं के पास समस्याओं का तैार हल प्रत्येक समय होना आवश्यक नहीं है। परन्तु यदि इनका उचित रूप से देख-रेख किया जाय तो यह विभिन्न समस्याओं का हल प्रस्तुत करने में सक्षम होगी।

8. कार्यक्रम की सफलता के लिए एस. जी. एस. वाई. के कार्यान्वयन हेतु उत्तरदायी विभिन्न कार्यवाई संस्थाओं के मध्य घनिष्ट समन्वय के लिए समय-समय पर संयुक्त कार्यवाही होनी चाहिए।

**15.5.1 ब्लाक स्तरीय समिति** - एस. जी. एस. वाई. के अन्तर्गत प्रत्येक विकास खण्ड में ब्लाक स्तरीय समिति बनाई जाती है। इसका गठन निम्नवत होता है-

| | | |
|---|---|---|
| 1. | परियोजना निदेशक, जिला ग्राम्य विकास अभिकरण - | अध्यक्ष |
| 2. | विकास खण्ड के समस्त बैंक शाखाओं के शाखाप्रबंधक | सदस्य |
| 3. | परियोजना अधिकारी (स्वरोजगार) | सदस्य |
| 4. | सम्बन्धित सहयोगी विभागों के विकास खण्ड/तहसील स्तरीय अधिकारी | सदस्य |
| 5. | खण्ड विकास अधिकारी | आयोजक |
| 6. | स्वयं सेवी संस्था का प्रतिनिधि (एक) | सदस्य |

उपरोक्त रूप में ब्लाक स्तरीय कार्यान्वयन समिति का गठन किया जाता है। इनकी नियमित बैठकों का आयोजन खण्ड विकास अधिकारी करता है। लीड बैंक अधिकारी, डी. डी. एम. नाबार्ड और रिजर्व बैंक आफ इण्डिया विशिष्ट अतिथि के रूप में सभा में भाग ले सकते हैं।

ब्लाक स्तरीय स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना समिति के मुख्य कार्य निम्नवत है-

1. कार्यक्रम के प्रारम्भ में मुख्य क्रिया कलापों का चयन।
2. ग्रामों का चयन और प्रतिवर्ष लाभन्वित किये जाने वाले स्वरोजगारियों का निर्धारण

3. बैंक शाखाओं के मध्य कार्य विभाजन

4. विभिन्न कार्यदायी संस्थाओं की प्रगति का अनुश्रवण

5. स्वरोजगारियों द्वारा अर्जित की गयी आय की समीक्षा

6. ऋण वसूली प्रगति की समीक्षा वसूली शिविरों की तिथि निर्धारण

7. गरीबी रेखा पार करने में स्वरोजगारीज के प्रगति का अनुश्रवण

8. मासिक प्रगति रिपोर्ट का बनाया जाना बैंक द्वारा उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर खण्ड विकास अधिकारी द्वारा यह रिपोर्ट तैयार की जाती है।

**उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा एस. सी. एस वाई. अन्तर्गत कार्यदायी विभागों के द्वारा समूहों के लिए निर्धारित कार्यक्रम।**

| क्र.सं. | विभाग का नाम | विकास विभागों के अन्तर्गत संचालित कार्यक्रम |
|---|---|---|
| 1 | खादी एवं ग्रामोद्योग | न्यू माडल चरण, कच्चे माल पर आधारित उत्पादन विभिन्न विभाग ग्रामोद्योग इकाईयां आदि। |
| 2 | रेशम विभाग | रेशम कीट पालन, ककून उत्पादन व रेशम धागा का निर्माण |
| 3 | कृषि विभाग | उन्नतशील बीज का उत्पादन, पैकेजिंग एवं विपणन, व मृदा परीक्षण, वायो कम्पोष्ट खाद आदि कार्य |
| 4 | दुग्ध विकास | डेयरी उद्योग, दुग्ध उत्पाद पर आधारित उपउत्पादों का निर्माण |
| 5 | पशुपालन विभाग | कुक्कुट, बकरी, सूकर पालन, काफ रेपरिंग, हरा धारा विकास एवं उन्नतशील पशु विकास हेतु प्रजनन कार्यक्रम |
| 6 | मत्स्य विभाग | पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार कर सामूहिक रूप से मत्स्य पालन आदि। |
| 7. | पंचायती राज | पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से स्थापित पंचायती उद्योगों को बढ़ावा देना एवं ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न उद्यम मरम्मत, सेवा क्षेत्र आदि। |
| 8. | भूमि एवं जल संसाधन | भूमि को खेती योग्य बनाना, जल प्रबंधन आदि |
| 9. | उद्यान विभाग | संकर प्रजाति सब्जी उत्पादन एवं सघन फलोधानीकरण, फूलों की खेती तथा शाकभाजी का उन्नतशील उत्पादन |
| 10 | सहकारिता विभाग | समितियों का गठन कर ग्रामीण क्षेत्र के लिए आवश्यक वस्तुओं का संग्रह एवं विपणन वितरण आदि |
| 11 | वन विभाग | पर्यावरण संरक्षण के साथ ही साथ ईधन व फलों वाले पेड़ों के लिए नर्सरी की स्थापना एवं वितरण/ विपणन की व्यवस्था आदि |
| 12 | हथकरघा एवं वस्त्र उद्योग | करघों की स्थापना एवं वस्त्र उद्योग का विकास |

| | | |
|---|---|---|
| 13 | महिला कल्याण एवं बाल विकास विभाग | पुष्टाहार एवं खाद्य सामग्री का निर्माण तथा महिलाओं के अनुकूल रोजगार का सृजन |
| 14 | अल्पसंख्यक कल्याण विभाग | उद्योग, व्यवसाय एवं सेवा क्षेत्र के कार्य आदि |
| 15 | विकलांग कल्याण विभाग | उद्योग व्यवसाय एवं सेवा क्षेत्र के विभिन्न कार्य |
| 16 | पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग | उद्योग व्यवसाय एवं सेवा क्षेत्र में विभिन्न कार्य |
| 17 | समाज कल्याण विभाग | अ जा/जजा परिवार के लोगों के लिए परिसम्पत्तियों का सृजन कर रोजगार का सृजन |
| 18 | युवा कल्याण विभाग | युवक मंगल दल/ युवती मंगल दल को समूहों में गठित कर व्यापक संख्या में विभिन्न उद्यमों के माध्यम से स्वरोजगार के अवसरों का सृजन। |

**समूह द्वारा स्थापित किये जा सकने वाले कुछ व्यावसायिक कार्यकलाप ( उदाहरण हेतु )**

| क्र.सं. | उत्पाद/इकाई का विवरण | मशीन एवं उपकरणों की लागत | प्रमुख मशीनरी व उपकरण | प्रमुख कच्चा माल |
|---|---|---|---|---|
| 1 | चमड़ें के पर्स तथा हैंड बैग | 50,000/ - (1 हार्स पावर) मशीन एवं हस्त औजार आदि | फ्लैट बेड सिलाई मशीन स्टेम्पिंग | चमड़ा, धागा, बटन, जिप आदि |
| 2 | बिस्किट बनाने की इकाई | 1,00,000/- (5 हा. पा.) | दो मिक्सर बेकिंग ओवन बैकिंग पैन्स इण्डिया | आटा, शक्कर, घी, दूध, तरल ग्लूकोज, स्टार्च |
| 3 | बेसन निर्माण | 41,000/- (7.5 हा.पा.) | पल्वराईजर तथा अन्य सहायक उपकरण | बेकिंग सामग्री |
| 4 | पापड़ निर्माण | 80,000/- (2 हा.पा.) | पापड़ बेलने की मशीन आटा गुंथने की मशीन आदि | उड़द, आटा, मूंग आटा, पापड़ खारा नमक, तेल आदि |
| 5 | मक्के से पापर्कान बनाना | 35000/- (2 हा. पा.) | पापिंग मशीन, सीलिंग मशीन आदि | मकई नमक, खाद्य तेल मसाला |
| 6. | पशु आहार निर्माण की इकाई | 1,00,000/- | ग्राइन्डर, हारि- जेंटल मिक्सर तराजू | मूंगफली की खली, गेहूँ का भूसा, धान का भूसा मक्का , कपास के बीज, |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| | | | | शीरा नमक आदि |
| 7 | नूडल्स बनाने की इकाई | 75000/- | मिक्सर, नूडल्स मशीन अन्य उपकरण | मैदा, कस्टर्ड पाउडर रिफाइंड तेल, रंग व नमक |
| 8 | रेवड़ी, चिरौंजी गजक बनाने की इकाई | 40,000/- | मशीन केरोसीन डीजल भट्टी, बर्तन आदि | शक्कर, ग्लूकोज, रंग तिल घी |
| 9 | फिनायल बनाने की इकाई | 45000/- (500 ली0, (2 हा.पा.) | एम.एस. टैक का तेल, कास्टिक एम.एस.मिक्सिंग टैंक विद स्टिरर प्लेनेटरी, मिक्सर भट्टी आदि | काला रोजीन, अरंडी लाई, फ्रोजोट आयल तारपीन का तेल कांच की बोतलें आदि। |
| 10 | सिलाई धागे की रीले | 50,000/- ( 2 हा.पा.) | हैंक टू कोन वाइन्डर (6 स्पि.) मशीन के लिए टेबल/स्टैंड व अन्य | सूती सफेद धागे की लच्छियां पेपर ट्यूब्स सैलीफोन पेपर आदि |
| 11 | धुलाई साबुन निर्माण की इकाई | 50,000/- | कढ़ाई, सांचे, स्लेब कटर्स, स्टिटर स्टंपिंग मशीन भट्टी आदि | विभिन्न खाद्यान्न तेल सिलीकेट सोप स्टोन कास्टिक सोडा नमक आदि |
| 12 | साड़ी फाल्स का निर्माण | 20,000/- (0.5 हा.पा.) | पीको एम्ब्राइडरी सिलाई मशीन, इलैस्टिक प्रेस कैंची टेबल शो केश आदि। | केमरिक कपड़ा सिल्क धागा रील स्टीफनर कार्ड पालीथीन थैलियां |

## 15.6 सारांश

इस इकाई में स्वर्ण जयंती ग्राम स्व रोजगार योजना के बारे में उसके प्रमुख अंशों की विवेचना की गयी है। इसके अनुसार एस.जी.एस.वाई. पूर्व की रोजगार योजनाओं से एक भिन्न योजना है जो गरीबी उन्मूलन के लिए स्वयं सहायता समूहों के गठन के माध्यम से गरीबों को आत्म निर्भर बनाने का एक प्रयत्न है। इसे जानने के लिए हमने स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के स्वरूप को स्पष्ट किया है फिर स्वयं सहायता समूहों के गठन एवं उनकी भुमिका के बारे में समझाया गया है। ऋण एवं अनुदान की व्यवस्था के बारे में चर्चा की गयी जिससे की इस योजना द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता का ज्ञान हो सके। अन्त में इस योजना को सफल बनाने के लिए उस प्रशासनिक ढांचा का उल्लेख किया गया है। जो योजना के कार्यान्वयन में एक सुदृढ़ निगरानी तंत्र की आवश्यकता पर बल देता है इसके लिए ब्लाक स्तर से लेकर

राज्य एवं केन्द्र स्तर तक समितियों का गठन किया गया है जिनकी नियमित बैठकों का प्रावधान किया गया है।

## 15.7 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पुस्तकें


1. भारत - सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत
2. जनरल आफ रूरल डेवलपमेन्ट- एन आई आर डी
3. मनोरमा इयर बुक


## 15.8 प्रश्नोत्तर

### लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. एस.जी.एस.वाई. के अर्न्तगत चयनित अभ्यर्थियों को अधिकतम और न्यूनतम कितना ऋण एवं अनुदान की व्यवस्था है?
2. ब्लाक स्तरीय समिति में कौन-कौन सदस्य एवं अध्यक्ष होता है?
3. समूह के सदस्यों को ऋण अनुदान की व्यवस्था किन शर्तों पर की जाती है?
4. ब्लाक स्तरीय एस.जी.एस.वाई. कमेटी के कार्य क्या हैं?

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 स्वयं सहायता समूहक्या है? इनका गठन कैसे किया जाता है?
2. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना की विशेषता बताइये।
3. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार का क्रियान्वयन किस तरह किया जाता है?
4. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्व रोजगार योजना की समीक्षात्मक विवेचना कीजिए।

### वस्तु निष्ठ प्रश्न

1. ब्लाक स्तरी कमेटी का अध्यक्ष कौन होता है?
   (अ) परियोजना निदेशक (ब) विकास खण्ड अधिकारी
   (स) परगना मजिस्ट्रेट (द) सुपरवाइजर
2. एक व्यक्ति कितने समूहों का सदस्य हो सकता है?
   (अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) कोई नहीं
3. स्वयं सहायता समूह की अधिकतम संख्या कितनी हो सकती है ?
   (अ) 10 (ब) 15 (स) 20 (द) 25
4. समूह सदस्यों की न्यूनतम आयु कितनी निर्धारित की गयी ?
   (अ) 18 (ब) 20 (स) 25 (द) 30
5. इस योजना के अन्तर्गत आवंटित धनराशि में केन्द्र राज्यों का अनुपात क्या है?
   (अ) 50 : 50 (ब) 30 : 70 (स) 75 : 25 (द) 60 : 40
6. समूह क्रिया कलापों के लिए अधिकतम कितना ऋण दिया जाता है?
   (अ) एक लाख (ब) सवा लाख (स) दो लाख (द) तीन लाख

उत्तर : 1. अ 2. अ 3. स 4. ब 5. स 6. द

# इकाई 16- सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना

## इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की विस्तृत रूपरेखा

16.2.1 स्थिति

16.2.2 लक्ष्य समूह

16.2.3 कार्यक्रम की कार्य नीति

16.2.4 समाज के कमजोर वर्गों और महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान

16.3 सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत खाद्यान्न

16.4 संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत मजदूरी

16.5 संसाधनों का मानदंड आवंटन तथा उपयोग

16.6 आयोजना, कार्य और निष्पादन

16.7 निगरानी एवं मूल्यांकन

16.8 सारांश

16.9 उपयोगी पुस्तकें/ संदर्भ ग्रन्थ सूची

16.10 बोध प्रश्न

16.11 उत्तर

## 16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. सरकार द्वारा ग्रामीण विकास के लिए किए जा रहे नवीन प्रयत्नों का उल्लेख कर सकेंगे।
3. सरकार द्वारा ढांचागत विकास, सामाजिक और आर्थिक परिसम्पत्तियों के सृजन के प्रयत्नों पर टिप्पणी कर सकेंगे।

## 16.1 प्रस्तावना

खाद्य सुरक्षा के साथ साथ रोजगार के अवसर उपलब्ध करानां भारत में विकास संबंधी आयोजना का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। जनसंख्या तथा मजदूरों की संख्या में अपेक्षाकृत वृद्धि होने से पंचवर्षीय योजनाओं के बावजूद बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार मे वृद्धि हुई है। सरकार मजदूरी और स्वरोजगार के जरिये बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराते हुए

बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार को न्यूनतम स्तर पर लाना चाहती है और भूख की समस्या से निपटने के लिए खाद्य सुरक्षा मुहैया करना चाहती है ऐसा मानना है कि गरीबी उन्मूलन, असमानताओं को कम करने, पोषण स्तर को सुधारने औरआर्थिक वृद्धि को उच्च स्तर तक कायम रखने के लिए मौजूदा मानव और अन्य संसाधनों का और बड़े पैमाने पर तथा प्रभावी ढंग से उपयोग करना ही सर्वाधिक प्रभावी जरिया है। इस दृष्टि से सरकार ने सुनिश्चित रोजगार योजना व जवाहर ग्राम समृद्धि योजना को मिलाकर 25 सितम्बर 2001 से संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एस. जी. आर. वाई.) नामक एक नई योजना शुरू की है।

## 16.2 सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की विस्तृत रूपरेखा

यह कार्यक्रम केन्द्र आयोजित योजनाके रूप में कार्यान्वित किया जायेगा तथा केन्द्र और राज्य 75:25 के अनुपात में कार्यक्रम के नगद घटक का खर्च वहन करेंगे। संघ राज्य क्षेत्र के मामले में योजना के अंतर्गत समस्य निधियां (100ब) केन्द्र द्वारा उपलब्ध कराई जायेंगी। राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों को खाद्यान्न मुफ्त उपलब्ध कराया जायेगा।

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना उन सभी ग्रामीण गरीबों के लिए होगी जिन्हें मजदूरी रोजगार की जरूरत है और जो अपने गांव/बस्ती के आस-पास शारीरिक एवं बिना कौशल वाले कार्य करना चाहते हैं। यह कार्यक्रम स्वलक्षित हैं।

मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराते समय, कृषि, मजदूरों, गैर कृषि अकुशल मजदूरों, सीमांत किसानों, महिलाओं, अनु0 जाति/ अनु0 जनजाति के सदस्यों और जोखिम भरे पेशों से निकाले गये बाल मजदूर के माता पिता अपंग बच्चों के माता-पिता या अपंग माता-पिता के व्यस्क बच्चे जो मजदूरी रोजगार के लिए काम करने को इच्छुक हैं को वरीयता दी जायेगी।

### 16.2.1 कार्यक्रम की कार्य नीति -

1. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत निधियों एवं खाद्यान्न का 5ब मंत्रालय के पास रहेगा, ताकि प्राकृतिक आपदाओं की वजह से उत्पन्न गंभीर संकट में इसका उपयोग किया जा सके या बाढ़ अथवा सूखा से प्रभावित रहने वाले ग्रामीण क्षेत्रों में एहतियाती कार्रवाई शुरू की जा सके।

2. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत आवंटित खाद्यान्न का कुछ प्रतिशत विशेष घटक के लिए आरक्षित रखा जाएगा जिसे किसी प्राकृतिक आपदा से उत्पन्न आकस्मिकताओं से निपटने के लिए मजदूरी रोजगार वाली केन्द्रीय या राज्य सरकार की योजना में इस्तेमाल किया जायेगा।

3. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत शेष निधियां और खाद्यान्न ग्रामीण विकास विभाग से दो धाराओं में उपलब्ध होंगे;

**(क) पहली धारा** - पहली धारा एवं जिला एवं मध्यस्तरीय पंचायत स्तरों पर कार्यान्वित किया जायेगा पहले धारा के अन्तर्गत 50ब निधियां और खाद्यान्न उपलब्ध होंगे और इसे 40: 60 के अनुपात में जिला परिषद ओर मध्यस्तरीय पंचायतों के बीच वितरित किये जायेंगे।

**(ख) दूसरी धारा** - दूसरी धारा ग्राम पंचायत स्तर पर कार्यान्वित किया जायेगा और 50ब निधियां और खाद्यान्न ग्राम पंचायतों के लिए निर्धारित किये जायेंगे तथा जिला ग्रामीण विकास

एजेंसी (डीड आर. डी.ए.)/ जिला परिषदों द्वारा उनके बीच वितरित किए जायेंगे।

4. कार्यक्रम को पंचायती राज संस्थाओं के जरिए कार्यान्वित किया जायेगा।

### 16.2.2 समाज के कमजोर वर्गों और महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान

1. जिला तथा ब्लाक दोनों स्तर पर एस. जी. आर. वाई. के प्रथम धारा के अन्तर्गत वार्षिक आवंटन (खाद्यान्नो सहित) का 22.5ब गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अनु0 जाति/ जनजाति के परिवारों की वैयक्तिक लाभार्थी योजना के लिए निर्धारित किया जायेगा।

2. ग्राम पंचायत के आवंटन (खाद्यान्नों सहित) का न्यूनतम 50ब एस. जी. आर. वाई. के दूसरी धारा के अन्तर्गत अनु0 जाति/ अनु0 जनजाति की बस्तियों/ वार्डों में आवश्यकता आधारित ग्रामीण ढांचा के सृजन के लिए निर्धारित किया जायेगा।

3. रोजगार अवसरें का 30ब महिलाओं के लिए आरक्षित किया जाना चाहिए।

## 16.3 संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत खाद्यान्न

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार (प्रथम और द्वितीय धारा) के अंतर्गत मजदूरी के हिस्से के रूप में खाद्यान्नों का वितरण ग्रामीण गरीबों के परिवारों के पोषण स्तर में सुधार लाने के साथ साथ मजदूरों की वास्तविकता मजदूरी की सुरक्षा के सिद्धान्त पर आधारित है।

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत मजदूरी के हिस्से के रूप में प्रति श्रम दिवस 5 किग्रा0 की दर से खाद्यान्न देने का प्रावधान है यदि कोई राज्यसरकार प्रति श्रम दिवस 5 क्रिग्रा0 से अधिक खाद्यान्न देना चाहती है तो वह मौजूदा राज्य आवंटन में से ऐसा कर सकती है (बशर्ते मजदूरी के कम से कम 25ब का भुगतान नगद किया जाए (राज्य सरकारें और संघ राज्य क्षेत्र मजदूरी के हिस्से के रूप में दिए गये खाद्यान्न की लागत की गणना एक समान दर पर करने के लिए स्वतंत्र होंगे। मजदूरों को मजदूरी के शेष खण्ड का भुगतान नगद कियाजाएगा। ताकि उन्हें अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी मिल सके।

कार्यक्रम के अंतर्गत मजदूरों को खाद्यान्नों का वितरण सार्वजनिक वितरणप्रणाली (पी डी एस) याग्राम पंचायत या राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किसी अन्य एजेन्सी द्वारा किया जाएगा। मजदूरों को खाद्यान्नों का वितरण विशेष रूप से कार्यस्थल पर ही किया जाएगा। एक ही बस्ती के मजदूरों के मामले में और यदि वे अपनी बस्ती में ही खाद्यान्न प्राप्त करना चाहते हैं तो ऐसा किया जा सकता है हालांकि राज्य सरकार के पास पी डी एस का काम में लाने का अवसर होगा, वितरण संबंधी गड़बड़ी न हो, इसके लिए प्रभावी उपाय लेना आवश्यक है डी आर डी ए / जिला परिषदें संबंधित एजेन्सियों के बीच खाद्यान्नों के वितरण की आवश्यक व्यवस्था करेंगी।

## 16.4 संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत मजदूरी

कार्यक्रम के अन्तर्गत मजदूरी का एक अंश खाद्यान्न के रूप में और एक अंश नगद रूप में दिया जायेगा। मजदूरी का भुगतान सप्ताह के एक निश्चित दिन खासकर स्थानीय बाजार के दिन खासकर स्थानीय बाजार के दिन से एक दिन पहले, ग्राम प्रधान/सरपंच या पंचों की उपस्थिति

में किया जाएगा। यदि कार्यान्वयन एजेन्सियां न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत रोजगार की संबद्ध अनुसूची के लिए अधिसूचित दर से मजदूरी का भुगतान नहीं करती हैं, तो जिला परिषद / पंचायत समिति ऐसी कार्यान्वयन एजेंसी के लिए निधियों की आगे की रिलजी को रोक देगी और इस बारे में संबंधित अधिकारी को सूचित करेगी ताकि दोषी अधिकारी के खिलाफ न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अंतर्गत उचित कार्यवाही की जा सके ओर केन्द्र सरकार को भी इसकी सूचना दी जायगी। जहां केन्द्र सरकार ऐसा लगता है कि उपर्युक्त प्रावधानों का अनुपालन नहीं हो रहा है तो वह संबंधित जिले के लिए कार्यक्रम के तहत विधियों की रिलीज को रोक सकती है।

## 16.5 संसाधनों का मानदंड, आवंटन तथा उपयोग

**प्रथम धारा**

### 16.5.1 केन्द्र से राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों तथा जिलों को निधियों/खाद्यान्नों का आवंटन

1. योजना के अंतर्गत राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों की निधियां तथा खाद्यान्न देश में कुल ग्रामीण गरीबों की तुलना में एक राज्य में ग्रामीण गरीबों के अनुपात अथवा केन्द्र सरकार द्वारा समय समय पर लिए गये निर्णयों के अनुसार ऐसे अन्य मानदंडों के आधार पर आवंटित किए जायेंगे।

2. जिला स्तर पर निधियों और खाद्यान्नों का आवंटन, राज्य में अनुसूचित जाति/ जनजाति की कुल ग्रामीण जनसंख्या की तुलना में एक जिले में अनूसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण जनसंख्या के अनुपात तथा उस जिले में कृषि मजदूरों के प्रति व्यक्ति उत्पादन के प्रतिकूल आधार पर तैयार की मई पिछड़ेपन की सूची के आधार पर किया जायेगा। राशि तथा खाद्यान्न के जिलेवार आवंटन के लिए दोनों मापदंडों को समान महत्व दिया जायेगा।

### 16.5.2 जिला परिषदों/डी.आर.डी.ए. तथा पंचायत समितियों के बीच निधियों का वितरण

1. जिला परिषदें/डी.आर.डी.ए. - प्रथम धारा के अंतर्गत निर्धारित निधियों तथा खाद्यान्नों का 40ब जिला स्तर पर आरक्षित रखा जायगा तथा जिला परिपदों /डी.आर.डी.ए. द्वारा अनुमोदित वार्षिक कार्य योजना के अनुसार इसे जिला परिषदों/ डी.आर.डी.ए. द्वारा वरीयता स्थानीय श्रम निष्क्रमण/विपदाग्रस्त क्षेत्रों में इस्तेमाल किया जायेगा।

2. पंचायत समिति - प्रथम धारा के अंतर्गत निर्धारित निधियों तथा खाद्यान्नों का 60ब पंचायत समितियों (मध्यवर्ती पंचायतों) के बीच आवंटित किया जायेगा। निधियों तथा खाद्यान्नों का आवंटन करते समय अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या तथा जिलों के संबंधित पंचायत समिति क्षेत्रों की ग्रामीण जनसंख्या के अनुपात को समान तरजीह दी जायेगी। कार्यों को पंचायत समितियों द्वारा अनुमोदित अपनी स्वयं की वार्षिक योजना के अनुसार किया जायगा। तथापि, शुरू किए जाने वाले कार्यों का चयन करते समय पिछड़े आपदाग्रस्त अथवा मजदूरों के पलायन वाले क्षेत्रों को वरीयता दी जायेगी।

16.5.3 एस.जी.आर.वाई. की दूसरी धारा संपूरक मजदूरी रोजगार के सृजन और मांग आधारित सामुदायिक ग्रामीण आधारभूत ढांचे के सृजन के लिए ग्राम स्तर पंचायत स्तर पर कार्यान्वित किया जाएगा जिसमें ग्रामीण गरीबों को रोजगार के अवसर को बढ़ाने में सक्षम बनाने के लिए टिकाऊ परिसम्पत्तियां शामिल है।

एस.जी.आर.वाई. के अंतर्गत निर्धारित कुल संसाधनों में से 50ब निधियां एस.जी.आर.वाई. के दूसरी धारा के लिए निर्धारित है दूसरी धारा के अन्तर्गत रिलीज किए गये समस्त संसाधन डी. आर.डी.ए./ जिला परिषद द्वारा सीधे ग्राम पंचायतों के बीच वितरित किए जायेगें।

एस.जी.आर.वाई. के दूसरी धारा के अन्तर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए कुल संसाधनों का 50ब निर्धारित किया गया है जबकि प्रथम धारा के अन्तर्गत 22.5ब अनुसूचित जाति/ जनजाति के लिए आरक्षित है।

डी.आर.डी.ए./ जिला परिषदों को केन्द्र या राज्य सरकारों से निधियां प्राप्त करने के 15 दिनों के भीरत ही ग्राम पंचायतों को संसाधन वितरित करने होंगे।

## 16.6 आयोजना, कार्य और निष्पादन

### 16.6.1 वार्षिक कार्य योजना -

1. प्रत्येक जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी, मध्यस्तरीय और ग्राम पंचायत पिछले वर्ष में आंवंटित की गयी निधियों के अपने अंश के लगभग 125 प्रतिशत के बराबर के मूल्य की एक वार्षिक योजना, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के शुरू होने से पहले, अलग-अलग तैयार करेंगी और इसे मंजूर करेंगी। कोई कार्य तब तक शुरू नहीं किया जा सकता जब तक कि यह वार्षिक कार्य योजना का हिस्सा नहीं बन जाता। वार्षिक कार्य योजना के अनुमोदन का कार्य पिछले वित्तीय वर्ष के फरवरी माह के अंत तक पूरा कर लिया जाना चाहिए।

2. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत संसाधनों का परिणामदायक उपयोग सुनिश्चित करने के लिए, ग्राम पंचायत के वार्डों तथा पंचायत के समिति और जिला परिषद के निर्वाचन क्षेत्रों के बीच संसाधनों का दस्तूरी रूप (Routine division) वितरण करना मना है। वार्षिक कार्य योजना में शामिल किए गये कार्यों को आवश्यकता और प्राथमिकता के क्रम में होना चाहिए। कार्यों की प्राथमिकताओं और संसाधनों की उपलब्धता को देखते हुए मात्र उन्हीं कार्यों को शुरू किया जाना चाहिये जिन्हें एक वर्ष में और अपवादस्वरूप अधिकतम दो वर्षों के अन्दर पूरा किया जा सकता हो।

3. वार्षिक कार्य योजना को तैयार करते समय, नए कार्यों को शुरू करने से पहले सुनिश्चित रोजगार योजना/ जवाहर ग्राम समृद्धि योजना के अधूरे कार्यों सहित समस्त अधूरे कार्यों को पूरा करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

4. जैसे ही वार्षिक योजना को अन्तिम रूप दे दिया जाता है, जिला परिषदें/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी तथा मध्यस्तरीय पंचायतें अपने क्षेत्रों के लिए चुने गये कार्य के बारे में

संबंधित ग्राम पंचायतों को सुचित करेंगें।

5. जिला परिषदों/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी तथा मध्यस्तरीय पंचायतों द्वारा शुरू किये जाने वाले कार्य श्रम प्रधान होने चाहिए। जिन कार्यों के लिए सीमेंन्ट, लोहा आदि जैसी सामग्रियों की बहुत अधिक में आवश्यकता हो, ऐसे कार्यों को तब तक मंजूर नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि सामग्री घटक की अधिक लागत के लिए अन्य क्षेत्रीय कार्यक्रम की निधियों से प्रावधान नहीं कर दिया जाता।

6. ग्राम पंचायत द्वारा तैयार की गयी वार्षिक कार्य योजना पर ग्राम सभा की बैठक में विस्तृत चर्चा की जानी चाहिए। इसी तरह से जिला परिषदों/ जिला ग्रामीण विकास एंजेसियों तथा मध्यस्तरीय पंचायतों द्वारा तैयार की गयी वार्षिक कार्य योजना पर उनके द्वारा तैयार की गयी वार्षिक कार्य योजना पर उनके संबंधित साधारण निकायों में विस्तृत चर्चा की जानी चाहिए। ग्राम पंचायतों के संबंध में ग्राम सभा तथा जिला परिषदों/ जिला ग्रामीण विकास एजेसियों और मध्यस्तरीय पंचायतों के संबंध में साधारण निकाय वार्षिक कार्य योजना को अनुमोदित करेंगे। अनुमोदित वार्षिक कार्य योजना की जानकारी पंचायत समिति तथा जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एंजेसी को दी जायेगी।

7. राज्य और या अन्य योजनाओं के समस्त कार्यों को, जिन्हें सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की मदद से किया गया है, वार्षिक कार्य योजना में शामिल किया जाना चाहिए। ऐसे मामले में नगद घटक को पूर्णत: ऐसी योजनाओं से और इसके आवश्यक अनाज घटक को सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना से पूरा किया जाना चाहिए।

### 16.6.2 एस. जी. आर. वाई. की प्रथम धारा के अन्तर्गत शुरू किए जाने वाले कार्य

वार्षिक कार्य योजना तैयार करने में और कार्यों को लेते समय, जिला परिषदें/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसियां तथा पंचायत समितियां भू तथा नयी संरक्षण लघु सिंचाई पेयजल स्रोतों के पुनरूद्धार एवं भूजल की वृद्धि, परम्परागत जल संग्रहण ढांचों, गांव के तालाबों/जौहरों में जमी मिट्टी निकालना आदि जैसे कार्यों और ऐसे एकल कार्य, जो वाटरशेड विकास के लिए आवश्यक हैं, को प्राथमिकता देगी। कार्य ऐसे होने चाहिए जिन्हें एक या दो वर्षों में पूरा किया जा सके और इसलिए लम्बी अवधि तक चलने वाली वाटरशेड विकास परियोजनाओं को शुरू नहीं किया जाएगा। अन्य प्राथमिकता वाले कार्यों में ग्रामीण सम्पर्क सड़कों का निर्माण, खेतों को जोड़ने वाली सड़कों का निर्माण, नालियों का निर्माण तथा वनारोपण हो सकते हैं। इन सबके अतिरिक्त, उन्हें ऐसे कार्य लेने चाहिए, जिनसे विद्यालयों, विद्यालयों हेतु रसोईघर के शेड, औषधालयों, सामुदायिक केन्द्रों, पंचायतघरों, बाजारों का विकास आदि जैसी स्थायी सामाजिक आर्थिक परिसम्पत्तियों का सृजन होता है।

कार्यक्रम के अन्तर्गत शुरू किए गये कार्य स्थायी प्रकृति के होने चाहिए और संबंधित कार्य / क्षेत्र के तकनीकी मानदंड ओर विनिर्देशों, यदि कोई हों को पूरा करना चाहिए। कार्यों की तकनीकी जांच पड़ताल को सुविधाजनक बनाने के लिए जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के प्राधिकारियों को ऐसे कार्यों के लिए जो सामान्य प्रकृति के हैं मानक डिजाइन तथा लागत अनुमान बनाना तथा अनुमोदन करना चाहिए।

जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को रिलीज किए गये संसाधनों में उनके अंश के लिए जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी कार्यान्वयन प्राधिकारी'' होंगी और मध्यस्तरीय पंचायतें, जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी द्वारा उन्हें रिलीज किए गये अंश के लिए कार्यान्वयन प्राधिकारी होगी। जिला परिषदें/ जिला ग्रामीण विकास एजेसियां और मध्यस्तरीय पंचायतें संसाधनों के अपने संबंधित अंश हेतु वार्षिक कार्य योजना के अनुमोदन और उसे कार्यपालिका एजेंसियों को सौंपे जाने के लिए जिम्मेदार होगी।

### 17.6.3 एस.जी.आर.वाई. की दूसरी धारा के अंतर्गत शुरू किए जाने वाले कार्य

ग्राम पंचायतों द्वारा उस पंचायत के क्षेत्र के लोगों की महसूस की जा रही आवश्यकताओं के अनुसार कार्यक्रम के अंतर्गत वे सभी कार्य शुरू किए जा सकते हैं जिससे स्थायी उत्पादक सामुदायिक परिसम्पतियों का सृजन होता है। प्राथमिकता निम्नलिखित क्रम में दी जायेगी।

(क) स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के लिए ढांचागत सहायता ।

(ख) ग्राम पंचायत में कृषि कार्यों में मदद करने के लिए अपेक्षित आधारभूत ढांचा।

(ग) शिक्षा (रसोई शेड सहित), स्वास्थ्य और आंतरिक तथा संपर्क सड़कों हेतु सामुदायिक आधारभूत ढांचा (मुख्य सड़क से गांवों को जोड़ने वाली सड़कें भले ही पंचायत क्षेत्र के बाहर जाती हो) का निर्माण करने की अनुमति है।

(घ) गांव के परम्परागत तालाबों/ जोहड़ों की गाद निकालना, इनका पुररूद्धार करना।

(ङ) अन्य सामाजिक, आर्थिक सामुदायिक आधारभूत ढांचा।

कार्यक्रम के अंतर्गत शुरू किए जाने वाले कार्यों की कोई लागत सीमा नहीं है तथापि केवल ऐसे ही कार्य सामान्य रूप से शुरू किए जाने चाहिए जिनका आकार और लागत तथा प्रकृति इस तरह की है कि ये स्थानीय स्तर पर कार्यान्वित हो सके और इनके लिए उच्च स्तर के तकनीकी कौशल आदि की जरूरत नहीं है। शुरू किए गये कार्यों को समग्र वार्षिक कार्य योजना के अंतर्गत रखना चाहिए।

ग्रामीण आधारभूत ढांचे का सृजन करते समय श्रम प्रधान कार्य पर बल देना चाहिए। केवल सामग्री उन्मुख कार्यों को शुरू न किया जाय। यह देखा जाना चाहिए कि कार्य स्थायी और किफायती हो और संबंधित कार्य क्षेत्र के तकनीकी मानदंड और विनिर्देशों, यदि कोई हो, को पूरा करती हो। ग्राम पंचायतें, यदि आवश्यक हो तो ब्लाक के कर्मचारियों अथवा प्रतिष्ठित गैर सरकारी संगठनों से तकनीकी परामर्श भी ले सकती हैं। कम लागत की स्थानीय प्रौद्योगिकी और स्थानीय सामान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

ग्राम पंचायत कार्य योजना की तकनीकी जांच पड़ताल को सुविधाजनक बनाने के लिए जिला ग्रामीण विकास एजेंसी। जिला परिषद के प्राधिकारी ग्राम सभा द्वारा आम तौर पर शुरू किए जाने वाले कार्यों की मदों की मानक डिजाइन और अनुमानित कर सकते हैं। इससे ग्राम पंचायतों को कार्य योजना शीघ्र तैयार करने में और उन्हें ग्राम सभाओं की शीघ्र अनुमोदन लेने में भी मदद मिलेगी।

दूसरी धारा के कार्यक्रम ग्राम पंचायतों के माध्यम से कार्यान्वित कराया जायेगा जो इसके लिए योजना बनाने तथा कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी होगी। इनके तकनीकी पर्यवेक्षण का

उत्तरदायित्व जिला ग्रामीण विकास एजेंसी/जिला परिषदों का होगा। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत गठित स्व-सहायता समूहों को कार्यों का कायान्वयन सौपा जा सकता है। पंचायतों को 1,00,000 रूपये तक के कार्यों को ग्राम सभा के अनुमोदन से कायान्वित करने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त किसी भी प्रशासनिक या तकनीकी अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है। 1,00,000 रूपये से अधिक की लागत वाले कार्यों/ येजनाओं के लिए ग्राम सभा का अनुमोदन लेकर ग्राम पंचायत उपयुक्त प्राधिकारियों से तकनीकी प्रशासनिक अनुमोदन लेगी।

## 16.7 निगरानी एवं मूल्यांकन

राज्य, जिला और पंचायत समिति स्तर पर गठित सतर्कता और निगरानी समितियां, सम्पूर्ण रोजगार योजना की प्रथम और द्वितीय धारा के तहत कार्यों के कार्यान्वयन की निगरानी के लिए भी जिम्मेदार होगी। राज्य, जिला और पंचायतों के जो अधिकारी संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का कार्य देख रहे हैँ, नियमित रूप से जिलों का दौरा करेंगे। और क्षेत्र दौरों के माध्यम से यह सुनिश्चित करेंगे कि कार्यक्रम का कार्यान्वयन संतोषजनक ढंग मे हो रहा है और कार्यों का निष्पादन निर्धारित प्रक्रिया तथा विनिर्देशों के अनुसार है। यदि कोई अधिकारी निरीक्षण अवधि के दौरान कोई अनियमितता पाता है तोउसे तत्काल इसे मुख्य कार्यकारी अधिकार, जिला परिषद और परियोजना निदेशक, जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के नोटिस में लाना चाहिए ताकि उचित कार्रवाई की जा सके।

केन्द्र सरकार मासिक तथा वार्षिक रिपोर्ट निर्धारित करेगी। यदि राज्य चाहे तो ऐसे प्रपत्र में अपने लिए कोई अतिरिक्त सूचना मांग सकता है जिला ग्रामीण विकास एजेंसी / जिला परिषदें यह सुनिश्चित करने के लिए भी राज्य सरकार के प्रति जवाबदेह होगी कि संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की दोनों धारा के तहत जिलों में निष्पादन के लिए शुरू किए गये कार्यों के विषय में विवरणियां/ रिपोर्ट समय समय पर राज्य सरकार को भेजी जाती हैं।

राज्य सरकार जिलों से प्राप्त इन रिर्पोटों और विवरणियों को समेकित करके केन्द्र सरकार को भेजेगी। इस रिपोर्ट से कार्यक्रम की प्रगति की निगरानी करने में, सृजित मजदूरी रोजगार और सृजित ढांचा की गुणवत्ता की निकट निगरानी करने में केन्द्र ओर राज्य/ संघ राज्य क्षेत्रों दोनों स्तरों के प्राधिकारियों को मदद मिलेगी। यह रिपोर्ट सरकार को मध्यावधि सुधार लाने में मदद करेगी।

संपूर्ण ग्रामीण विकास योजना के अन्तर्गत राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को समय समय पर कार्यक्रम के कार्यान्वयन के बारे में मूल्यांकन करने का प्रावधान है। विस्तृत अध्ययन की जरूरत वाले मुद्दों के लिए मूल्यांकन अध्ययन प्रतिष्ठित संस्थाओं और संगठनों को दिये जा सकते हैं ये अध्ययन केन्द्र के साथ-साथ राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा भी शुरू किए जा सकते हैं राज्य द्वारा आयोजित मूल्यांकन अध्ययन की प्रति केन्द्र सरकार को भेजनी होगी। इन मूल्यांकन अध्ययनों में की गयी टिप्पणियों के आधार पर राज्य/ संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा उपचारात्मक कार्यवाही की जाएगी। जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी भी समय समय पर अध्ययन आयोजित कर सकती है। जिला परिषद/ जिला ग्रामीण विकास एजेंसी भी समय-

समय पर अध्ययन आयोजित कर सकती है। जिला परिषद/जिला ग्रामीण विकास एजेंसी अध्ययनों के परिणाम की सूचना समय-समय पर राज्य सरकार और केन्द्र सरकार के देगी।

## 16.8 सारांश

संपूर्ण ग्रामीण विकास योजना ग्रामीण भारत की रोजगार आवश्यकता एवं खाद्यान्न उपलब्धता को जन जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से शुरू की गयी है। यह योजना जवाहर रोजगार योजना और उसके बाद शुरू की जवाहर ग्राम सृद्धि योजना की अगली कड़ी है ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी संख्या में अकुशल श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराने के संदर्भ में यह योजना एक अच्छी पहल है। ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक गरीबी को देखते हुए खाद्यान्न उपलब्ध कराने से कुपोषण दूर करने में मदद मिलेगी। यह योजना नयी योजना है। इसकी पूर्णरूपेण परीक्षा बाकी है लेकिन इसके जो कुछ परिणाम सामने आये हैं वह उत्साहजनक नहीं हैं।

## 16.9 उपयोगी पुस्तकें/संदर्भ ग्रन्थ सूची

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना ग्रामीण मंत्रालय, भारत सरकार, ग्रामीण विकास विभाग कृषि भवन, नई दिल्ली।

## 16.10 प्रश्नोत्तर

### लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की कार्यनीति का संक्षेप में वर्णन करें।

2. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में कमजोर वर्गों और महिलाओं के लिए किए गये विशेष प्रावधानों का उल्लेख करें।

3. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत संसाधनों के आवंटन तथा उपयोग की प्रक्रिया का वर्णन करें।

4. जिला परिषद/डी. आर. डी. ए. तथा पंचायत समितियों के बीच निधियों का वितरण किस प्रकार होता है?

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. संपूर्ण ग्रामीण विकास योजना का विशद वर्णन करें।

2. संपूर्ण ग्रामीण विकास योजना की सम्पूर्ण प्रक्रिया किस रूप में क्रियान्वित होती है? वर्णन करें।

### लघुउत्तरीय

1. सम्पूर्ण ग्रामीण विकास योजना कब शुरू की गयी है-

   (1) सन 2001 (2) सन 2002 (3) सन 2003 (4) सन 2004

2. केन्द्र राज्य के बीच विधियों का वितरक किस अनुपात में होता है।

(1) 50 : 50 (2) 60 : 40 (3) 75 : 25 (4) इनमें से कोई नहीं।

3. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की प्रथम धारा के अंतर्गत कुल निधियों का कितने प्रतिशत अनु. जाति/ जनजाति के लिए आरक्षित हैं?

(1) 10.25ब (2) 22.50ब (3) 52.50ब (4) 75.50ब

4. सम्पूर्ण ग्रामीण विकास योजना के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य अधिकतम कितने वर्ष में पूर्ण हो जाने चाहिए।

(1) 1 वर्ष (2) 2 वर्ष (3) 3 वर्ष (4) 4 वर्ष

उत्तर : 1. (1) 2. (3) 3. (2) 4. (2)

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय

MASY - 06
सामाजिक नियोजन एवं
विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य

खण्ड

# 5

## भारत में नीति नियोजन एवं विकास

इकाई 17

नीतिः अवधारणा, अर्थ एवं प्रकार

इकाई 18

भारत की आर्थिक नीतिः स्वतन्त्रता प्राप्ति से वर्तमान तक

इकाई 19

संस्कृति, नीति नियोजन एवं विकास

इकाई 20

सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## परामर्श समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो. केदार नाथ सिंह यादव,** कुलपति | अध्यक्ष |
| **डॉ. हरीश चन्द्र जायसवाल,** वरिष्ठ परामर्शदाता | कार्यक्रम संयोजक |
| **प्रो के.पी. सिंह,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. अर्जुन तिवारी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **प्रो. ए.एन. द्विवेदी,** वरिष्ठ परामर्शदाता | सदस्य |
| **डॉ. रत्नाकर शुक्ल,** कुलसचिव | सचिव |

## विशेषज्ञ समिति

| | |
|---|---|
| **प्रो० सी.एस. एस. ठाकुर**<br>आचार्य एवं अध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग<br>रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर | विषय विशेषज्ञ |
| **प्रो. जयकान्त तिवारी**<br>आचार्य समाजशास्त्र विभाग<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी | विषय विशेषज्ञ |
| **डॉ. मंजूलिका श्रीवास्तव**<br>रीडर, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली | दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञ |
| **प्रो. वी. के. पंत**<br>सेवा निवृत्त आचार्य एवं अध्यक्ष , समाज शास्त्र विभाग<br>(कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) लखनऊ | सम्पादक |

## MASY-06 : – *सामाजिक नियोजन एवं विकास : भारतीय परिप्रेक्ष्य*

*लेखक मण्डल :*

| | | |
|---|---|---|
| **खण्ड एक :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड दो :** | **प्रो. अखिलेश्वर लाल श्रीवास्तव,** बनारस हिन्दू विश्व., वाराणसी | 4 इकाई |
| **खण्ड तीन :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 4 इकाई |
| **खण्ड चार :** | **डॉ. अंशु केडिया,** ए.पी.सेन मेमो.पी.जी.कालेज, लखनऊ | 2 इकाई |
| **खण्ड पाँच :** | **डॉ. अंशु केडिया,** लखनऊ | 2 इकाई |
| | **डॉ. जे.पी. मिश्र** , लखनऊ | 2 इकाई |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुति अनुमन्य नहीं है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ. ए. के. सिंह, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जुलाई 2012
मुद्रक : नितिन प्रिन्टर्स, 1 पुराना कटरा, इलाहाबाद।

# खण्ड परिचय

## खण्ड 5 : भारत में नीति नियोजन एवं विकास

**खण्ड परिचय :** इस खण्ड में भारतीय नीति नियोजन एवं विकास पर प्रकाश डाला गया है। **पहली इकाई** का शीर्षक है 'नीति अवधारणा अर्थ और प्रकार'। इस इकाई में नीति के अर्थ को स्पष्ट किया गया है। सामाजिक नीति के निर्धारण व क्रियान्वयन पर प्रकाश डाला गया है। **दूसरी इकाई** का शीर्षक है 'भारत की आर्थिक नीति : स्वतन्त्रता प्राप्ति से वर्तमान तक'। आर्थिख नीति के अर्थ, उद्देश्य, उपकरण एवं विभिन्न आयामों की व्याख्या की गई है। नई आर्थिक नीति का विश्लेषण किया गया है। **तीसरी इकाई** का शीर्षक है 'संस्कृति, नीति नियोजन व विकास'। इसमें संस्कृति की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है। आर्थिक नीति के उद्देश्य एवं भारतीय अर्थ व्यवस्था और उसकी कार्य नीति पर प्रकाश डाला गया है। **चौथी इकाई** का शीर्षक है 'सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता'। इसमें सामाजिक नीति के अभिप्राय को स्पष्ट किया गया है। जीवन की गुणवत्ता एवं उससे जुड़ी विचारधाराओं और योजनाओं पर प्रकाश डाला गया है।

# इकाई 17- नीति : अवधारणा, अर्थ एवं प्रकार

## इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 नीति : अर्थ

17.3 सामाजिक नीति : अर्थ व परिभाषा

17.4 सामाजिक नीति की आवश्यकता

17.5 सामाजिक नीति : लक्ष्य व कार्य

17.6 सामाजिक नीति : उद्देश्य

17.7 सामाजिक नीति : विशेषतायें

17.8 सामाजिक नीति : क्षेत्र

17.9 सामाजिक नीति व आर्थिक विकास

17.10 सामाजिक नीति व सामाजिक विकास

17.11 सामाजिक नीति निर्धारण के प्रमुख तथ्य

17.12 सामाजिक नीति : सिद्धान्त

17.13 सामाजिक नीति व समाज कल्याण नीति में अंतर

17.14 सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने हेतु सुझाव

17.15 सारांश

17.16 संदर्भ ग्रन्थ सूची

17.17 प्रश्नोत्तर

## 17.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम नीति का अर्थ व अवधारणा से अवगत हो पाएंगे। नीति का एक प्रमुख प्रकार सामाजिक नीति है। अत: नीति से अवगत होने के पश्चात् हम सामाजिक नीति के अर्थ, अवधारणा व परिभाषा को जान सकेंगे। किसी भी देश के विकास में सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालने के साथ-साथ इस नीति के लक्ष्य, कार्यों व उद्देश्यों से भी अवगत हो सकेंगे।

नीतियों की अपनी विशेषतायें होती हैं अत: सामाजिक नीति से भली भाँति अवगत होने के लिये इसकी विशेषताओं का भी हम अध्ययन कर सकेंगे। सामाजिक नीति का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। किन-किन क्षेत्रों हेतु सामाजिक नीति का निर्धारण किया जा सकता है, प्रस्तुत इकाई में संक्षिप्त रूप से इसका भी विवेचन है।

इस इकाई के माध्यम से हम सामाजिक नीति का आर्थिक विकास और सामाजिक विकास से अन्तर्सम्बन्ध भी जान सकेंगे। सामाजिक नीति निर्धारण के क्या सिद्धान्त है? इसमें व समाज कल्याण नीति में क्या अन्तर हैं, व इसके निर्धारण में क्या सावधानियाँ रखनी चाहिये आदि विभिन्न तथ्यों को भी हम इस इकाई के माध्यम से जान सकेंगे।

अंत में हम सामाजिक नीति के निर्धारण व क्रियान्वयन से सम्बनिधत विभिन्न सुझावों से भी अवगत हो सकेंगे।

## 17.1 प्रस्तावना

प्रत्येक कल्याणकारी राज्य देश के नागरिकों को अधिकाधिक सुखी, सम्पन्न बनाने हेतु प्रयासरत रहता है। अत: प्रत्येक कार्य को मानव मात्र हेतु अधिकतम उपयोगी और सार्थक बनाने के लिये उससे सम्बन्धित नीति विषयक निर्णय लेना आवश्यक होता है। बिना नीति निर्धारित किये यदि कार्य संचालित किये जाते हैं तो उने परिणाम उपादेयता की दृष्टि से प्रभावहीन रह जाते हैं। उदाहरणतया हम सामुदायिक विकास कार्यक्रम को ले सकते हैं। उपयुक्त नीति निर्धारित न होने के कारण यह नीति सामान्य जनता को लाभान्वित नहीं कर सकी एवं असफल रही है।

किसी भी नीति के निर्धारण से पूर्व अपेक्षित सावधानियाँ रखनी अनिवार्य है। मात्र नीति निर्धारित करने से ही समस्याओं का समाधान नहीं किया जा सकता। अत: इसका उचित क्रियान्वयन भी अनिवार्य है। तथापि सामाजिक प्रशासन की दृष्टि से एक उपयुक्त नीति निर्धारित करना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में यह एक शक्तिशाली साधन है। किसी भी क्षेत्र में उपयुक्त नीति का अभाव भावी समस्या का ही सूचक होता है।

अत: प्रस्तुत इकाई नीति के अर्थ, उद्देश्यों, आवश्यकताओं, सिद्धान्तों, क्षेत्रों व ध्यान देने योग्य बातों को प्रस्तुत करने का प्रयास है।

## 17.2 नीति: अर्थ व अवधारणा

सामाजिक नीति से अवगत होने से पूर्व आवश्यक है कि हम नीति शब्द से भली-भाँति अवगत हों। नीति शब्द का तात्पर्य उन सिद्धान्तों से हैं जो साध्यों या उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये हमारे द्वारा किये गये कार्यों को निर्देशित करता है, नियंत्रित करता है। अत: किसी भी कार्यक्रम को शुरु करने से पूर्व उसके सफल क्रियान्वयन के लिये आवश्यक है कि उपयुक्त नीति व नियम बनाये जायें।

**बी० एम० कुलकर्णी के अनुसार**—"नीति एक ऐसा वक्तव्य है जो स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय विभिन्न स्तरों पर एक समुदाय की क्रियाओं के विशेष क्षेत्र के सम्बन्ध में संदर्भ-निर्धारित करता है। इस वक्तव्य में वे सभी आवश्यक तत्व होते हैं जो उस क्षेत्र में वांछित दिशा में कार्य हेतु पर्यापत निर्देशन दे सकें।"

इस प्रकार नीति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें निम्न चरण अपनाये जाते हैं।

(1) सर्वप्रथम यह अपने लक्ष्य निर्धारित करती है।

(2) इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये अपेक्षित घटनाओं की व्यवस्था की जाती है।

(3) आयोजित घटनाओं को मूर्त रूप देने की कार्यवाही की जाती है।

(4) सार्वजनिक रूप से नीति निर्माता नीति की उद्घोषणा करते हैं एवं यह बताते हैं कि इस नीति की आवश्यकता क्यों है एवं वे इसे कैसे मूर्तरूप देंगे।

(5) नीति निर्माता अपने पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को कार्य रूप देने का प्रयास करते हैं।

नीतियाँ मात्र सामाजिक ही नहीं होती वरन् आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक किसी भी क्षेत्र में हो सकती है।

## 17.3 सामाजिक नीति अर्थ व परिभाषा

सामाजिक नीति को परिभाषित करने का प्रयत्न किया जाता रहा है किन्तु अभी तक ऐसी परिभाषा विकसित नहीं की जा सकी है जो सर्वमान्य हो या जिसमें इसकी समस्त विशेषतायें समाहित हों। सामान्यतया सामाजिक नीति सामाजिक संरचना की कमियों को दूर करने व असंतुलन को रोकने का प्रयास करती है। जैसा कि **एम० डी० गोखले** का मानना है कि सामाजिक नीति एक साधन हैं जिसके माध्यम से आकांक्षाओं तथा प्रेरकों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि सभी के कल्याण की वृद्धि हो सके।'' इस प्रकार सामाजिक नीति द्वारा मानव एवं भौतिक दोनों प्रकार के संसाधनों में वृद्धि की जाती है जिससे पूर्ण सेवायोजन की स्थिति उत्पन्न होती है तथा निर्धनता दूर होती है।

विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से सामाजिक नीति की अपनी-अपनी परिभाषायें दी हैं। डॉ० एन० विश्वनाथन ने सामाजिक नीति की व्याख्या केक विभिन्न दृष्टिकोणों का उल्लेख किया हे—सामान्य, दार्शनिक, भेदमूलक, अभिकरणात्मक, प्रक्रियात्मक।

**पी० डी० कुलकर्णी के अनुसार**—''नीति कथन उस ओढ़ने के वस्त्र के ताने बाने के धागे हैं जिनको पिरो कर चोंगा तैयार होता है। यह सूक्ष्म ढांचा होता है जिसमें सूक्ष्म क्रियाओं को अर्थपूर्ण ढंग से समाहित किया जाता है।''

**जे० ए० पान्सियान के अनुसार**—''सामाजिक नीति को एक ऐसी नति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो समाज विशेष के व्यक्तियों तथा समूहों की कमियों को दूर करने के लिये समाज का सतत् सुधार करती है। निर्बल लोगों की सहायता करती है, कमजोरियों को रोकती है तथा अच्छी परिस्थितियों की रचना करती है या सुधारती है।

**आर० एम० टिटमस के अनुसार**—''सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक आवश्यकताओं की एक विविधता एवं मानव संगठन की कमी वाली परिस्थितियों में कार्य करने के अध्ययन से है जिसे परम्परागत रूप से इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये समाज सेवायें अथवा समाज कल्याण व्यवस्था कहा जाता है।

**जान० एल० एम0 आइडेन के अनुसार**—''सामाजिक नीति का सम्बन्ध उन परिस्थितियों की प्राप्ति से है जिनमें यह समझा जाता है कि नागरिक ''अच्छा जीवन'' प्राप्त कर सकते हैं।''

इस प्रकार सामाजिक नीति को ऐसी नीति के रूप में देखा जाता है जो मानव संसाधनों के समुचित विकास, उत्पादकता की अधिक से अधिक वृद्धि और व्यक्तियों के अधिक से अधिक कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिये लाभों के न्यायपूर्ण वितरण को ध्यान में रखती है।

### 1.4 सामाजिक नीति की आवश्यकता

देश में विभिन्न क्षेत्रों की अपनी-अपनी नीतियाँ हैं जैसे शिक्षा नीति, रक्षा नीति, विदेश नीति, खाद्य नीति, आयात निर्यात नीति, श्रम नीति आदि इसी प्रकार सामाजिक नीति की आवश्यकता की भी समय-समय पर मांग की जाती रही है। सामाजिक नीति की अपनी उपयोगिता है यह सामाजिक कार्यों एवं सेवाओं के लिये पथ प्रदर्शक का कार्य करती हैं। इस प्रकार यह समस्टिगत रूप रचना है जिसमें व्यष्टिगत कार्यवाहियाँ अर्थपूर्ण रूप से संचालित की जाती हैं।

सामाजिक नीति की आवश्यकता एवं उपयोगिता की दृष्टि से निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं:-

1. सामाजिक नीति होने पर पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कुशलता पूर्वक निर्देशन किया जा सकता है।

2. कार्यों का मूल्यांकन किया जा सकता है कि कार्य संतोषजनक है या नहीं।

3. सामाजिक समस्याओं, तनाव व भ्रम में बचा जा सकता है।

4. आर्थिक अभाव जनित सामाजिक समस्याओं जैसे अपराध, बेरोजगारी, गरीबी, भिक्षावृत्ति वेश्यावृत्ति, महाव्यवसन आदि के निवारणार्थ उपयुक्त सामाजिक नीति निर्धारित करना अत्यन्त आवश्यक है।

5. सामाजिक नीति के रूप में सामाजिक विकास के अल्पकालीन मध्यकालीन व दीर्घकालीन लक्ष्य निर्धारित कर लिये जाते हैं एवं उनको व्यवस्थित तरीके से कार्यान्वित किया जाता है।

6. यदि सामाजिक क्षेत्र की अवहेलना करके मात्र भौतिक प्रगति पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है तो भौतिक व सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र में (असंतुलन) उत्पन्न हो जाती है अत: भावपरक विलम्बना है कि संतुलित विकास के लिये उचित सामाजिक नीति क्रियान्वयन पर भी ध्यान दिया जाये।

## 17.5 सामाजिक नीति के लक्ष्य व कार्य

निम्नलिखित लक्ष्य व कार्य हैं—

1. जीवन स्तर में असमानताओं की कम करना

2. कानूनों को अधिक प्रभावी बनाकर सामाजिक निर्योग्यताओं को दूर करना।

3. सुधारात्मक व सुरक्षात्मक प्रयासों में वृद्धि करके मानव के दुखों को कम करना।

4. बाधितों को पुनर्स्थापित करना।

5. शिक्षा की उचित व्यवस्था द्वारा व्यक्तित्व के विकास के अवसरों को उपलब्ध कराना।
6. स्वास्थ्य व पोषण स्तर को ऊँचा उठाना।
7. निर्बल वर्ग के व्यक्तियों को संरक्षण नीति से लाभान्वित करना।
8. उचित कार्य की शर्तों व परिस्थितियों का आश्वासन दिलाना।
9. लाभों का समानता पूर्ण वितरण सुनिश्चित करना।

## 17.6 सामाजिक नीति के उद्देश्य

**तारलोक सिंह के अनुसार**—"सामाजिक नीति का मूल उद्देश्य ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना होना चाहिये जिनमें प्रत्येक क्षेत्र, नगरीय अथवा ग्रामीण, तथा अपनी विशिष्ट एवं पहचाने जाने योग्य समस्याओं सहित प्रत्येक समूह अपने को ऊपर उठाने अपनी सीमाओं को नियंत्रित करने तथा अपनी आवासीय स्थितियों एवं आर्थिक अवसरों को उन्नत बनाने, और इस प्रकार समाज सेवाओं के भौतिक अंग बनने में समर्थ हो सके।"

भारत सरकार ने सामाजिक नीति तथा नियोजित विकास के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया है।

1. नागरिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने वाली दशाओं का निर्माण करना।
2. सभी को समान रूप से विकास और सेवा के पूर्ण एवं समान अवसर उपलब्ध कराना।
3. आर्थिक आधार संरचना का विकास करने के साथ-साथ स्वास्थ्य, सफाई, आवास, शिक्षा व सामाजिक दशाओं में सुधार लाना।

## 17.7 सामाजिक नीति की विशेषतायें

सरकारें सामान्यतया सामाजिक नीतियों को प्रतिपादित करती है लेकिन गैर सरकारी संगठन भी अपनी क्रिया-कलापों हेतु निश्चित नीतियाँ बनाते हैं एवं सरकार को नीति निर्धारण में सहयोग भी देते हैं जैसे हमारे देश में उन जातियों अनुसूचित जातियों, स्त्रियों व अन्य पिछड़े वर्गों के लिये सरकार ने निश्चित नीतियाँ अपनायी हैं। सामाजिक नीतियों में निम्न विशेषतायें सामान्यतया पायी जाती हैं।

1. **सामाजिक नीतियाँ समाज के विकास के लिये होती हैं**—किसी भी सामाजिक नीति के निर्धारण से पूर्व समाज के विकास में आने वाली समस्याओं व उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु इच्छित परिवर्तनों को ध्यान में रखना अनिवार्य होता है। इन प्रश्नों को ध्यान में रखकर ही नीति निर्धारित की जाती है।

2. **नीति में एकाधिक विचारधारायें होती हैं**—नीतियाँ किसी न किसी विचारधारा पर आधारित होती हैं। कई बार एक ही समाज में कई विचारधारायें होती हैं, जब नीतियाँ बनायी जाती हैं तो उनमें एक या अनेक विचारधाराओं का समावेश होता है। जैसे पश्चिमी यूरोप व अमेरिका जैसे देशों में नीति निर्धारण के समय पूंजीवाद, प्रजातंत्र, औद्योगीकरण, धर्मनिरपेक्षीकरण आदि विचारधाराओं को एक साथ देखा जा सकता है। डॉ० एस० सी० दुबे

का मानना है कि राष्ट्रीय नीति निर्धारण में वैचारिकी का महत्व सबसे अधिक होता है एवं सामाजिक नीति राष्ट्रीय वैचारिकी की अभिव्यक्ति की जाती है।

3. **सामान्यतया नीतियाँ स्वतंत्र नहीं होती**—सैद्धान्तिक रूप से राष्ट्रीय व सामाजिक नीतियाँ स्वतंत्र मानी जाती हैं परन्तु व्यवहार में नीति निर्धारण केन्द्रीय सरकार के हाथ में होकर भी वाह्य दबाव से मुक्त नहीं रह पाता। दुनियाँ के देशों में बढ़ती परस्पर निर्भरता की झलक नीति निर्धारण में भी दिखायी पड़ती है। सामान्यतया दुनिया के प्रभावशाली राष्ट्र ही विभिन्न राष्ट्रों की नीतियों को प्रकार या प्रच्छन्न रूप से प्रभावित करते हैं।

4. **सामाजिक नीति राष्ट्रीय परिस्थितियों पर आधारित होती हैं**—समाज की जो भी आवश्यकतायें होती हैं उनको ध्यान मतें रखकर ही सामाजिक और राष्ट्रीय नीतियाँ बनायी जाती हैं। नीति निर्धारण से पहले राष्ट्रीय स्थिति का, उसकी दशाओं का सम्पूर्ण लेखा-जोखा होना आवश्यक है ताकि राष्ट्रीय समस्याओं को पहचान सुलभ हो सके। यह पहचान ही नीति निर्धारण में आधार का कार्य करती है।

5. **उपलब्ध सुविधाओं, स्त्रोतों व जनशक्ति का मूल्यांकन**—सामाजिक नीति निर्धारण करने से पूर्व आवश्यकताओं, परिस्थितियों को तो ध्यान में रखना आवश्यक है ही इसके साथ नीति से जुड़े उपलब्ध स्त्रोत मानवशक्ति, प्राकृतिक संसाधनों, आर्थिक संसाधनों का भी पूर्ण मूल्यांकन होना चाहिये।

6. **नीति के परिणामों का अंदाज होना चाहिये**—किसी भी नीति के निर्धारण से पूर्व वृहद चर्चा की जानी चाहिये, चर्चा के माध्यम से परिणामों का भी अंदाज लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिये यदि महिलाओं के आरक्षण पर नीति निर्धारित करनी है तो इसका पूर्व आंकलन करना चाहिये कि इस नीति का व्यावहारिक परिणाम क्या होगा?

7. **नीति निर्धारण की गुणवत्ता पर विकास की सफलता निश्चित होती है**—नीति सदैव लचीली होनी चाहिये। जिसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके। नीति निर्धारण की प्रक्रिया जटिल होती है साथ ही इसके क्रियान्वयन की भी। क्रियान्वित करते समय यदि इसकी उपादेयता पर संदेह होने लगे तो इतनी अवश्य क्षमता हो कि आवश्यकतानुसार परितर्वन किया जा सके।

## 17.8 सामाजिक नीति के क्षेत्र

सामाजिक नीति के प्रमुख क्षेत्र हैं इन क्षेत्रों के कार्यों को समुचित निर्देशन देना और इन्हें पूरा करना आवश्यक समझा जाता है—

1. **समाज के विभिन्न कार्यक्रम से सम्बन्धित कार्य**—

(अ) शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, परिवार नियोजन, आवास इत्यादि कार्यक्रमों तक लोगों की पहुँच सुलभ करना व इनमें वृद्धि करना।

(ब) समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण व उनके सामाजक, आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना।

(ग) समाज सुधार के लिये व सामाजिक सुरक्षा नीति प्रतिपादित करना।

(द) आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण पर रोक लगाने की नीति द्वारा जनता की आय तथा धन के असमान वितरण में कमी लाना।

**2. समुदाय के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित सामाजिक नीति—**

प्रत्येक समाज में दो वर्ग पाये जाते हैं एक सम्पत्ति शाली व दूसरा सम्पत्ति हीन। वर्तमान औद्योगीकरण व आधुनिकीकरण ने भी उद्योगपति, बड़े-बड़े व्यवसायी, प्रबन्धक तथा बड़े कृषकों व भूमिहीन सीमान्त कृषकों, मजदूरों, मलिन बस्तियों के निवासियों आदि के मध्य आर्थिक अनतर को अधिक गहरा कर दिया है। अत: इन असंगठित व मुख्य धारा से कटे लोगों के लिये विशेष सामाजिक नीति बनाने व क्रियान्वित की जाने की आवश्यकता रहती है।

**3. सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण परन्तु उपेक्षित वर्ग से सम्बन्धित सामाजिक नीति**—प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे महत्वपूर्ण वर्ग होते हैं जिनका कल्याण आवश्यक माना जाता है। उदाहरण के लिये बाधित, कम आयु के बच्चे, विद्यालय का लाभ न उठा पाने वाले बच्चे, अध्ययन को बीच में छोड़ने वाले बच्चों हेतु सामाजिक नीति की आवश्यकता।

## 17.9 सामाजिक नीति और आथ्रिक विकास

सामाजिक दृष्टि में कमजोर वर्ग, मानसिक व शारीरिक विकलांग, बेरोजगार, अपराधी, असंगठित क्षेत्र से सम्बद्ध सीमान्त व भूमिहीन कृषक, मजदूर आदि लोगों के जीवन स्तर को उच्च करने व समाज की मुख्य धारा में जोड़ने हेतु सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है, जो कि प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक तत्व से प्रभावित होती है। देश की आर्थिक स्थिति व साधन स्त्रोतों को देखकर ही यह तय किया जाता है कि किन सामाजिक लक्ष्यों को तुरन्त प्राप्त किया जाये तथा किन्हें बाद के लिये छोड़ा जाये। प्राथमिकताओं का निर्धारण भी धन उपलब्धता के आधार पर किया जाता है वैसे भी आर्थिक योजनाओं का लक्ष्य यह माना जाता है कि सभी स्तरों पर उत्पादन वृद्धि की जाये। अधिक उत्पादन का यह लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि सामाजिक पूर्व शर्तें उपलब्ध हों। वह सामाजिक नीति अच्छी नहीं मानी जाती तो आर्थिक विकास के अनुकूल न हों। इसी प्रकार वह आर्थिक नीति अच्छी नहीं मानी जाती जिसमें सामाजिक नीति के लक्ष्यों को साकार करने की क्षमता न हो। अत: विचारकों के अनुसार आर्थिक विकास का कार्यक्रम गरीबी व बेरोजगारी हटाने का होना चाहिये, इस हेतु जो आर्थिक नीति अपनायी जाए वह न्यायपूर्ण होनी चाहिये। यही कारण है कि वर्तमान में कुछ विचारक उदारीकरण व निजीकरण सम्बन्धित आर्थिक नीतियों की आलोचना करते हैं। इन विचारकों के अनुसार इन नीतियों के अनुसरण में प्राप्त आर्थिक विकास सामाजिक न्याय के नियमों की अवहेलना कर मात्र कुछ लोगों को अधिक आथ्रिक सम्पन्न बनायेगा।

## 17.10 सामाजिक नीति व सामाजिक विकास

स्वतंत्रता पश्चात् संविधान द्वारा भारत को लोकतंत्र आधारित समाजवादी समाज के रूप में स्थापित करने का प्रस्ताव पारित हुआ। इसमें धर्म, जाति, लिंग आदि किसी भी आधार पर भेदभाव न करने की नीति अपनायी गयी। इस हेतु अपनायी गयी सामाजिक नीति का लक्ष्य व्यक्ति और व्यक्ति, और समूह तथा समूह और समूह के बीच अधिक स्वस्थ सामाजिक

सम्बन्धों की स्थापना करने हेतु मनोवृत्ति में परिवर्तन करने का प्रयास किया जाना है अच्छा सामाजिक नीति तभी होगी जब वह मानव मात्र के कल्याण व हितों की रक्षा आधारित होती है एवं उसका सफल लक्ष्य होता है सामाजिक विकास।

## 17.11 सामाजिक नीति निर्धारण से सम्बन्धित प्रमुख तथ्य

सामाजिक नीति का निर्धारण करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

1. किसी भी समाज में सामाजिक विकास व प्रगति प्राप्ति हेतु आवश्यक है कि लक्ष्य पूर्व निर्धारित हों एवं इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु विकास की प्रक्रिया का दिशा निर्देश सही व इच्छित दिशा में हो।

2. विकास के सिद्धान्तों को समाज विशेष की परिस्थितियों को ध्यान में रखकर अपनाया जाना चाहिये। किसी भी विकसित या विकासशील देश को किसी अन्य देश की परिस्थितियों में सफल हुयी विकास की पद्धतियों एवं उपकरणों का आधुनिक नहीं करना चाहिये।

3. सामाजिक नीति के निर्धारण में व कार्यान्वयन में जन-सहभागिता आवश्यक होती है क्योंकि यदि जनता का लगाव व सहभागिता नहीं होती तो नीति की समतता संदिग्ध बनी रहती है। जनता का लगाव होने पर वे इसकी सफलता के लिये तन, मन और धन प्रत्येक प्रकार से अपना अधिक से अधिक योगदान देते हैं।

4. सामाजिक नीति के अन्तर्गत प्रत्येक कार्य के लिये उपयुक्त समय निर्धारण का ध्यान रखा जाना आवश्यक है। जहाँ तक सामाजिक नीति के उद्देश्यों का सम्बन्ध है ये भारतीय संविधान में उल्लिखित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों द्वारा पूर्व ही निर्धारित किये जा चुके हैं जो क्रमशः कई सोपानों में प्राप्त किये जायेंगे। अतः सकारात्मक व उपचारात्मक कार्यवाही हेतु आवश्यक है कि सामाजिक नीति में प्रत्येक कार्य के क्रियान्वयन का उचित समय निर्धारण हो।

## 17.12 सामाजिक नीति के सिद्धान्त

सन् 1969 में डॉ०(श्रीमती) इंगा थार्सन ने अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण परिषद के समक्ष अपने विचार व्यक्त करते हुये सामाजिक नीति के 10 प्रमुख सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया :—

1. समन्वित सामाजिक नीति का उद्देश्य आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करना होना चाहिये।

2. आर्थिक अभिवृद्धि हेतु सामाजिक कारकों, सामाजिक परिस्थितियों तथा आवश्यकताओं का क्रमबद्ध एवं विस्तृत विश्लेषण प्राथमिकता के आधार पर होना चाहिये।

3. ऐसे अवांछनीय सामाजिक कारकों जो सामाजिक आर्थिक विकास, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण उत्पन्न होते हैं, के आधार पर सामाजिक रीति के लक्ष्यों का निर्धारण किया जाना चाहिये।

4. सामाजिक नीति के उद्देश्यों को इनकी उपयुक्तता, वास्तविक स्थिति, समानता, स्थानीय

परिस्थितियों एवं अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों के आधार पर निश्चित किया जाना चाहिये।

5. सामाजिक नीति इस प्रकार की होनी चाहिये कि वह सामाजिक संरचनाओं, संस्थाओं, समितियों, सम्प्रेरकों व मनोवृत्तियों में पायी जानेवाली कमियों के निवारणार्थ कार्य करें।

6. सामाजिक नीति जनसंख्या सम्बन्धी गतिकी से सम्बन्धित होनी चाहिये ताकि मानव शक्ति का नियोजन सम्भव हो सके।

7. सेवाओं में परस्पर तार्किक सम्बन्ध होने चाहिये। उदाहरणार्थ, चिकित्सालय बनाने का तब तक कोई औचित्य नहीं है, जब तक कि प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं के आयोजन, स्वच्छ जल की व्यवस्था, कूड़ा-करकट के निराकरण तथा संक्रामक रोगों के नियंत्रण की व्यवस्था न की जा सके।

8. सेवाओं की सफलता उत्पादन में होने वाली वृद्धि के आधार पर नहीं आंकी जानी चाहिये। क्योंकि सभी सेवाओं की लागत समान नहीं होती है, कुछ सेवाओं के आयोजन में अधिक वित्तीय आवश्यकता होती है, कुछ में कम। कुछ समाज सेवायें ऐसी भी होती हैं जिनसे प्राप्त होने वाले प्रतिफल लागत की तुलना में कम होते हैं।

9. उन सेवाओं को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिये जिससे कार्य करने की क्षमता में वृद्धि की जा सके। विकासशील देशों में समाज कल्याण के लिये यह आवश्यक होता है कि पूंजी तथा श्रम दोनों में ही वृद्धि की जाये।

10. सामाजिक सेवाओं में जनता की स्वीकृति व सहभागिता होनी चाहिये। सेवाओं का मात्र प्रचार-प्रसार से लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव नहीं है। ये सेवायें तभी प्रभावपूर्ण होती हैं जब जनता इन्हें स्वीकार करें और उपयोगी मानते हुये इनका प्रयोग करें। अत: जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति में अधिक सहायक सेवाओं को अधिक प्राथकिता देनी चाहिये।

## 17.13 सामाजिक नीति एवं समाज कल्याण नीति में अन्तर

सामाजिक नीति व समाज कल्याण नीति दोनों ही भिन्न होते हैं। समाजिक नीति से अभिप्राय क्रिया में व्यक्त किये गये ऐसे मार्ग से है जो सामाजिक सेवाओं अर्थात् उन सेवाओं जो शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण आवास, मनोरंजन सम्बन्धी सेवाओं इत्यादि के रूप में लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आयोजित व अभियोजन को निर्देशित करता है।

जबकि इसके विपरीत समाज कल्याण नीति से अभिप्राय क्रिया के उस व्यक्त मार्ग से है जो समाज कल्याण सेवाओं अर्थात् उन सेवाओं जो समाज के कमजोर, शोषित, बाधित लोगों हेतु विशेष रूप से आयोजित व आयोजन को निर्देशित करता है।

## 17.14 सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के सुझाव

किसी भी समाज का चहुमुखी विकास उस देश की सामाजिक नीति पर निर्भर करता है। विशेषकर भारत जैसे देश में, जहाँ सदियों तक एक विशेष वर्ग दासता, निर्योग्यताओं का शिकार रहा हो उसे मुख्य धारा में लाने के लिये सामाजिक न्याय आधारित सामाजिक नीति का निर्धारण अपरिहार्य हो जाता है। सामाजिक नीति को लाभदायक व प्रभावपूर्ण बनाने के लिये

निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं।

1. सामाजिक नीति का निर्धारक व्यापक विचार-विमर्श के पश्चात् ही किया जाना चाहिये एवं इस विचार-विमर्श की प्रक्रिया में समस्त वर्गों के लोगों का विशेषकर नीति से प्रभावित वर्ग के लोगों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व होना चाहिये।

2. नीति तभी प्रभावी बन सकती है जब उपलब्ध स्त्रोतों-मानवीय संसाधनों, प्राकृतिक संसाधनों व आर्थिक स्त्रोतों का पर्याप्त पूर्व मूल्यांकन किया गया हो।

3. प्रभावशाली नीति हेतु आवाश्यक है कि नीति निर्धारण से पूर्व इसके परिणामों का भी आंकलन किया जाये।

4. संविधान में भारत को कल्याणकारी समाजवादी राज्य घोषित किया गया है अत: कल्याणकारी राज्य की नींत मजबूत करने तथा इस हेतु उपयुक्त मार्ग प्रशस्त करने के लिये राज्य को समाज सेवाओं, विशेष रूप से समाज कल्याण सेवाओं, के क्षेत्र में प्रमुख भूमिका निभानी होगी ताकि आवश्यक सुविधायें समाज के सभी वर्गों में विशेष रूप से निर्बल एवं शोषित वर्गों को प्राप्त हो सके और इनका दुरुपयोग न हो सके।

5. सामाजिक नीति के समुचित प्रतिपादन हेतु आवश्यक तथ्यों का संग्रह करने के लिये सामाजिक सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन को समुचित महत्व प्रदान करना होगा।

6. शिक्षा स्वास्थ्य, आवास, मनोरंजन जैसी समाज सेवाओं तथा निर्बल एवं शोषित वर्गों के लिये अपेक्षित सेवाओं के बीच आवश्यक संतुलन स्थापित करना होगा ताकि समाज का समुचित विकास सम्भव हो सके।

7. सामाजिक नीतियों का जन सामान्य के मध्य व्यापक प्रचार-प्रसार होना चाहिये। समय अन्तराल के साथ-साथ इन कार्यक्रमों का मूल्यांकन भी होते रहना चाहिये। यदि सुधार की आवश्यकता हो तो नीति में इतना लचीलापन रखना चाहिये कि आवश्यक सुधार किया जा सके।

8. राज्य को समाज सेवियों एवं समाज कार्यकर्ताओं के प्रति अपने वर्तमान सौतेले व्यवहार को बदलते हुये इन्हें इच्छित सामाजिक स्वीकृति प्रदान करनी चाहिये।

9. नीति निर्धारण सैद्धान्तिक कार्य है। वास्तव में इसकी उपादेयता तभी सिद्ध हो सकती है जब इसका क्रियान्वयन यथोचित हो एवं लक्षित समूह वास्तव में लाभान्वित हो।

10. राज्य को समाज कल्याण प्रशासन के क्षेत्र में समाज कार्यकताओं तथा अवैतनिक समाज सेवकों को उचित एवं सम्मान जनक स्थान देना होगा।

11. सामाजिक परिवर्तन की अनवरत प्रक्रिया के कारण सामाजिक परिस्थितियों में होने वाले निरन्तर परिवर्तन की पृष्ठ भूमि में सभी समाज सेवियों, समाज कार्यकताओं, अधिकारियों तथासंस्थाओं के कर्मचारियों के लिये समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिये।

12. सामाजिक दशाओं में वांछित परिवर्तन लाकर ही आर्थिक दशाओं में सुधार लाया जा सकता है अत: सामाजिक नीति निर्धारित के समय इस तथ्य पर भी ध्यान रखना आवश्यक है।

## 17.15 सारांश

प्रस्तुत इकाई नीति के अर्थ व अवधारणा को स्पष्ट करने के साथ-साथ सामाजिक नीति पर प्रकाश डालती है। इस इकाई में हमने सामाजिक नीति के अर्थ, परिभाषा, उद्देश्य, कार्य, आवश्यकता आदि के साथ-साथ इसकी विशेषताओं व क्षेत्र का भी संक्षिप्त अध्ययन किया।

इस इकाई के माध्यम से सामाजिक नीति के आर्थिक विकास व सामाजिक विकास के अर्न्तसम्बन्ध से अवगत होने का साथ-साथ इसकी समाज कल्याण नीति से भिन्नता भी हो जाना।

सामाजिक नीति निर्धारण के क्या प्रमुख तथ्य हैं व इसके क्या सिद्धान्त हैं को भी प्रस्तुत इकाई में अध्ययन सामग्री बनाया गया। इकाई के अंत में सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने हेतु सुझाव दिये गये।

## 17.16 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वी०एम० कुलकर्णी- एसेज इन सोशल एडमिनिस्ट्रेशन
2. एन० विश्वनाथन- स्कूल्स आफ सोशल वर्क एण्ड सोशल पालिसी, इण्डियन जर्नल आफ सोशल वर्क, वाल्यूम 25, 1964 पृष्ठ 233
3. डॉ० दयाकृष्ण मिश्र व ए० एस० राठौर - भारत में सामाजिक नीति अध्याय-6
4. प्रो० एस० एल० दोषी- सामाजिक नीति विशेषतायें पृ० 326
5. एस० डी० गोखले - ''इण्टीग्रेटेड सोशल पॉलिसी इन इण्डिया'', सम्पादित सोशल वेलफेयर : लीजेण्ड एण्ड लीजेसी, पापुलर प्रकाशन, बाम्बे 19875 पृ० 35
6. कुलकर्णी पी० डी०- ''सोशल पालिसी इन इण्डिया'' इण्डियन जर्नल आफ सोशल वर्क वाल्यूम 23, नं० 3, 1959 पृ० 2
7. पान्सियान, जे० ए०- सोशल वेलफेयर पॉलिसी माडरन एण्ड कम्पनी, हेग 1962 पृ० 18
8. टिटमस, अर० एम०- कमिटमेंट टू वेलफेयर, न्यूयार्क, 1968 पृ० 20
9. आइडेन, जॉन एल० एम० - सोशल पॉलिसी इन एक्शन, लन्दन 1969 पृ० 4
10. भारत में सामाजिक नीति नियोजन व विकास - डॉ० सुरेन्द्र सिंह व अन्य अध्याय 1

## 17.17 प्रश्नोत्तर

**लघुउत्तरीय प्रश्न-**

प्र० 1 नीति से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट करें।

प्र० 2 सामाजिक नीति को परिभाषित करें।

प्र० 3 सामाजिक नीति की आवश्यकता पर प्रकाश डाले।

प्र० 4 साामाजिक नीति निर्धारण के क्या क्षेत्र हो सकते हैं? विचार प्रकट करें।

**दीर्घउत्तरीय**

प्र० 1 सामाजिक नीति से क्या तात्पर्य है। इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

प्र० 2 सामाजिक नीति निर्धारण की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुये इसके उद्देश्य व कार्यों को स्पष्ट करें।

प्र० 3 सामाजिक नीति निर्धारण के सिद्धान्तों की विवेचना करें।

प्र० 4 एक सफल सामाजिक नीति निर्धारण हेतु क्या सावधानियाँ अपेक्षित है?

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न—**

प्र० 1 संविधान द्वारा भारत को निम्न में से क्या घोषित नहीं किया गया है?

(1) कल्याणकारी (2) गणतंत्रीय

(2) धर्मनिरपेक्षीय (4) पूंजीवादी

प्र० 2 ''नीतिकथन उस ओढ़ने के वस्त्र के ताने-बाने के धागे हैं जिनको पिरो कर चोंगा तैयार होता है। यह सूक्ष्म ढांचा होता है, जिसमें सूक्ष्म क्रियाओं को अर्थपूर्ण ढंग से समाहित किया जाता है।'' यह परिभाषा किसने दी हैं—

(1) जे० ए० पान्सियान (2) एस० डी० गोखले

(2) पी० डी० कुलकर्णी (4) बी० एम० कुकर्णी

प्र० 3 सामाजिक नीति का निम्न में क्या लख्य व कार्य नहीं है : —

(1) जीवन स्तर में असमानताओं को बढ़ाना

(2) बाधितों को पुनर्स्थापन करना।

(3) स्वास्थ्य व पोषण स्तर को ऊँचा उठाना

(4) उचित कार्य की शर्तों व परिस्थितियों का आश्वासन दिलाना।

प्र० 4 इंगा थार्सन द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण परिषद के समक्ष सामाजिक नीति के कितने सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया -

(1) 5 (2) 9 (3) 7 (4) 10

**उत्तर—**

1. (4) 2.(4) 4(1) 4.(4)

# इकाई 18- भारत की आर्थिक नीति : स्वतन्त्रता प्राप्ति से वर्तमान तक

## इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 आर्थिक नीति का अर्थ

18.3 आर्थिक नीति के उद्देश्य

18.4 आर्थिक नीति के उपकरण

18.5 आर्थिक नीति के आयाम

18.6 सन् 1991 के पूर्व आर्थिक नीति

18.7 नई आर्थिक नीति एवं इसकी विशेषतायें

18.8 नई आर्थिक नीति की समीक्षा

- 18.8.1 वर्तमान आर्थिक दशाओं से मेल खाती नीति
- 18.8.2 औद्योगिक संवृद्धि की ढिलाई पर रोक
- 18.8.3 व्यापार घाटे को पूरा करने में सहायक
- 18.8.3 सामाजिक नीति : सिद्धान्त
- 18.8.4 संसाधनों की कमी को दूर करने में सहायक

18.9 सारांश

18.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पुस्तकें

18.11 प्रश्नोत्तर

## 18.0 उद्देश्य

इस इकाई का वाचन करने के पश्चात् आप जान सकेंगे।

* आर्थिक नीति का आशय
* आर्थिक नीति के उद्देश्य
* आर्थिक नीति के उपकरण
* आर्थिक नीति के आयाम
* नई आर्थिक नीति की विशेषतायें
* नई आर्थिक नीति की सार्थकता

## 18.1 प्रस्तावना

भारत देश ने स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चातृ 1 अप्रैल, 1951 से आर्थिक नियोजन की नीति का अवलम्ब लिया और पाँच वर्षीय योजनाओं को प्रारम्भ किया गया। अब तक 9 पंचवर्षीय योजनायें और 4 एक वर्षीय योजनायें पूरी हो चुकी हैं। इन योजनाओं के लाभ और इनकी कमियाँ किसी से छिपे नहीं है। कुल मिलाकर इनसे देश का विकास हुआ। यहां आर्थिक नीति को दो वर्गों में विभक्त किया गया है। 1991 के पूर्व की आर्थिक नीति 1991 से प्रारमभ की गई नई आर्थिक नीति।

## 18.2 आर्थिक नीति का अर्थ

नई आर्थिक नीति पर कुछ कहने के पूर्व आर्थिक नीति का अर्थ स्पष्ट करना कुछ आवश्यक सा प्रतीत होता है। नीति उस रास्ते (कोर्स आवृ ऐक्शन) को कहते हैं जिसे कोई संगठन अपनाता है अथवा प्रस्तावित करता है। नीति में विचारों के समुच्चय अथवा किसी संगठन द्वारा जो कुछ किया जाना है। उसकी स्वीकारोक्ति सम्मिलित है। अत: नीति के अन्तर्गत किसी संगठन द्वारा अथवा देश द्वारा विकास पथ पर चलने के लिये कुछ विशेष गतिविधियों का सहारा लिया जाता है। जब इन गतिविधियों अथवा रास्तों का संबंध आर्थिक जगत से होता है इन्हें आर्थिक नीति कहा जाता है।

आर्थिक नीति सरकार द्वारा सुविचारित एक ऐसी नीति (कार्य योजना) है जो आर्थिक हितों का संर्वधन करने के लिये उन क्रियाओं को प्रोत्साहित करती है। जो अनुकूल है और जो प्रतिकूल है उन्हें निरुत्साहित करती है। इन प्रतिकूल क्रियाओं को निरुत्साहित करने के लिये एक नियमन एवं नियंत्रण की व्यवस्था होती है। अति संक्षेप में, आर्थिक नीति आर्थिक उद्देश्यों एवं हितों को पूरा करने के लिये अपनाई जाने वाली कार्यविधि अथवा कार्य योजना है। बात बहुत स्पष्ट है आर्थिक नीति से आर्थिक मामलों में किसी देश या सरकार के हस्तक्षेप का बोध होता है।

आर्थिक नीति उपायों और कार्यवाहियों का एक सम्मुचय (सेट) है जिसके सहारे पूरे निर्धारित विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रयास किया जाता है।

## 18.3 आर्थिक नीति के उद्देश्य

आर्थिक नीति के उद्देश्य तय करते समय दो बातों का ध्यान विशेष रूप से रखा जाता है :

1. तत्कालीन आवश्यकतायें और 2. दीर्घकालीन दृष्टिकोण।

भारतीय अर्थ व्यवस्था की आर्थिक नीति के अग्रलिखित उद्देश्य हो सकते हैं।

**रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना**—भारत के सन्दर्भ में यह बड़े दुख की बात है कि हमने रोजगार की दिशा में कोई ठोस योजना नहीं तैयार की है और रोजगार के अवसरों की उपलब्धता सभी को हो सके ऐसी कोई नीति भी हम नहीं बना सके हैं। अत: आर्थिक नीति ऐसी हो जो रोजगार के अवसर बढ़ाये तथा बेरोजगारी को दूर करने में सहायक हो।

**तीव्र आर्थिक विकास**—तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास की आर्थिक नीति की आवश्यकता है। आर्थिक नीति का यह भी उद्देश्य है कि देश में उपलब्ध साधनों का अनुकूलतम उपयोग हो। साधन सीमित होते हैं अत: प्राथमिकताओं का निर्धारण बहुत जरूरी होता है। देश के आर्थिक विकास के आधारभूत ढांचे को सुदृढ़ करके ही भावी विकास को गति दी जा सकती है। उच्च आर्थिक विकास के माध्यम से जनता के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है।

**आर्थिक स्थायित्व**—तेजी मन्दी अथवा मूल्यों के उतार-चढ़ाव को रोककर देश में, आर्थिक स्थिरता स्थापित करने का प्रयास भी आर्थिक नीति का एक उद्देश्य है। आर्थिक स्थाइत्व से आशय स्थाई एवं नियमित प्रगति से है उचित आर्थिक नीतियों के अभाव में आर्थिक उच्चावचन होते रहते हैं जो कीमत स्तर, मजदूरी की दर, ब्याज दर आय, उत्पादन की मात्रा आदि आर्थिक घटकों को प्रभावित करते रहते हैं। अत: आर्थिक नीति का उद्देश्य इन आर्थिक उच्चावचनों को नियंत्रित कर आर्थिक व्यवस्था को विकास की ओर बढ़ने देना है।

**अधिकतम सामाजिक कल्ल्याण**—'' अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण'' की नीति देश के विकास के लिये अपनाना बहुत ही अच्छा है। इसका सीधा अर्थ यह है कि आय और सम्पत्ति का वितरण गरीबों के पक्ष में हो। इस हेतु प्रगतिशील कर नीति को अपनाना होता है और गरीब वर्ग को आय उपलब्ध कराई जाती है। अधिकतम लोगों के अधिकतम कल्याण के लिये धन धनवानों के हाथ में जाने से रोकना चाहिये और धन का वितरण गरीबों में भी हो यह सुनिश्चित करना होगा।

**आर्थिक समानता एवं न्याय**—विकास के लाभों का न्यायोचित वितरण विकास से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है, न्यायोचित वितरण के माध्यम से समाज में सम्पत्ति, आय और अवसरों की समानता बढ़ जाती है। आर्थिक नीति ऐसी हो जो आर्थिक असमानता को रोकने वाली हो। समाज में सभी को रोजगार के समान अवसर, समान कार्य के लिये समान वेतन तथा न्यूनतम मजदूरी की सुविधायें सुनिश्चित होनी चाहिये।

**काम करने की स्वतन्त्रता**—मनचाहा व्यवसाय अपनाने की छूट, मनचाही जगह पर काम करने की छूट, देश के किसी भी भाग में काम करने के लिये आने-जाने की छूट देशवासियों को मिलती रहनी चाहिये, इस शर्त के साथ कि इससे दूसरों के हितों का हनन न हो पाये। कोई भी आदमी तभी तक स्वतंत्र रह सकता है जब तक उसकी स्वतन्त्रता दूसरे की स्वतन्त्रता के लिये बाधक न हो।

**उत्पादन में वृद्धि**—देश में उत्पादन में वृद्धि हो यह आर्थिक नीति का एक महत्वपूर्ण बिन्दु है। भारत कृशि प्रधान देश है। यदि किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य मिलता रहे तो कृष उत्पादन में वृद्धि होती रहेगी। उत्पादन वृद्धि में सहायक आर्थिक नीति एक अच्छी नीति मानी जाती है। औद्योगिक नीति ऐसी हो जिससे औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि को प्रोत्साहन मिले। उत्पादन बढ़ने से जनता का उपभोग की वस्तुओं की उपलब्धता में भी वृद्धि हो जाती है। वाणिज्यिक नीति ऐसी हो जिससे निर्यात बढ़े और आयात कम हो। राजकोषीय नीति उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव डालने वाली बननी चाहिये।

**नियोजित विकास का उत्साहवर्धन**—नियोजित विकास को उत्साहित कर संतुलित एवं उद्दिष्ट विकास की ओर निर्विध्न बढ़ा जा सकता है। उक्त विकास के माध्यम से हम देश को खुशहाली एवं समृद्धि की ओर ले जा सकते हैं।

**सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के मध्य समन्वय**—भारत की अर्थ व्यवस्था मिश्रित अर्थ व्यवस्था है। यहां सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की भूमिका को विकास के लिये महत्वपूर्ण माना गया है। यहाँ इसीलिये उदारीकरण एवं निजीकरण की नीति को अपनाने पर जोर है। निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने के लिये भारत सरकार ने औद्योगिक नीति, वाणिज्यिक नीति, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति में व्यापक परिवर्तन किये हैं।

## 18.4 आर्थिक नीति के उपकरण

**आर्थिक नीति के उपकरण**—आर्थिक नीति के कुशल क्रियान्वयन के लिये कुछ उपकरणों (साधनों) की आवश्यकता होती है। इन साधनों द्वारा आर्थिक नीति की सफलता निर्धारित होती है।

**मौद्रिक उपकरण**—इन उपकरणों का काम विनिमय दर की स्थिरता को बनाये रखना, मुद्रा एवं साख की मात्रा को नियंत्रित रखना, मूल्य स्तर में स्थाइत्व, पूर्ण रोजगार, बैंकिंग विकास, स्थाईत्व के साथ आर्थिक विकास, उचित ब्याज दर, पूंजी निर्माण एवं निवेश को प्रोत्साहन देना आदि हैं। मुख्य मौद्रिक उपकरण इस प्रकार गिनाये जा सकते हैं।

**(अ) साख नियंत्रण**—इसमें परिमाणात्मक और गुणात्मक रीतियों का समावेश है।

**(ब) विनिमय दर**—वह दर जिस पर एक एक देश की करेंसी दूसरे देश की करेंसी में बदली जाती है।

**(स) ब्याज दर**—इससे बचत, पूंजी निर्माण और निवेश प्रभावित होते हैं।

**(द) बैंकिंग विकास**—इनके माध्यम से सरकार अपनी योजनाओं को लागू करती है।

**(य) बचतों की प्रोत्साहन**—इनसे सरकार को विकास के लिये पर्याप्त धन मिलता है।

**राजकोषीय उपकरण**—इसमें चार तत्वों का समावेश है— सार्वजनिक आय, सार्वजनिक व्यय, सार्वजनिक ऋण एवं हीनार्थ प्रबन्धन।

**वाणिज्यिक उपकरण**—इसमें मुक्त एवं प्रतिबंधित व्यापार, देश के अनुसार प्राथमिकताएं एवं वस्तु के अनुसार प्राथमिकता को सम्मिलित किया जाता है।

**नियंत्रण**—आर्थिक नीति की सफलता के लिये नियंत्रण आवश्यक है ये नियंत्रण चार प्रकार के होते हैं—मूल्य नियंत्रण, निवेश पर नियंत्रण, लाइसेन्स प्रणाली और सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर नियंत्रण।

**आर्थिक सहायता**—साहायिकी (सब्सिडी) आथ्रिक नीति का एक प्रमुख उपकरण है। साहायिकी तीन तरह की होती है। कृषि क्षेत्र में दी जाने वाली आर्थिक साहायिकी, निर्यात आर्थिक साहायिकी, उपभोक्ता को दी जाने वाली साहायिकी।

**संस्थाओं की स्थापना**—आर्थिक नीति को सफल बनाने के लिये कुछ संस्थाओं की भी स्थापना करनी पड़ती है। इसमें सलाहकारी और नियामक संस्थायें होती हैं। उदारीकरण की नीति अपनाने के बाद भारत में सेबी (SEBI) बीमा नियामक प्राधिकरण, आई० डी० एफ० सी०, डी० एफ0 एच० आई०, एस० टी० पी० इत्यादि संस्थाओं की स्थापना हुई है।

## 18.5 आर्थिक नीति के आयाम

किसी देश की आर्थिक नीति की सफलता उसके विभिन्न आयामों पर टिकी होती है। आर्थिक नीति के निम्नलिखित आयाम हो सकते हैं।

**कृषि नीति**—हमारे देश में कृषि नीति के अन्तर्गत कृषि उपजों का मूल्य निर्धारण, कृषि उत्पादों की बिक्री तथा आवश्यक कृषि आदानों की उचित मूल्य पर पूर्ति आदि से संबंधित नीति निर्धारण का समावेश है।

**औद्योगिक नीति**—इसमें औद्योगिक विकास को नियमित एवं नियंत्रित करने के उपाय बताये जाते हैं अथवा घोषित किये जाते हैं। उद्योगों की स्थापना, वित्त प्रबन्ध आदि से सम्बन्धित नीतियों का इसमें समावेश होता है।

**व्यापारिक नीति**—अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक संबंधों का नियमन इस नीति का प्रमुख तत्व है। आयात निर्यात नीतियाँ, स्वदेशी उद्योगों का संरक्षण, विदेशी ऋण एवं सहायता, भुगतान संतुलन आदि इस नीति के मुख्य घटक हैं। देश को स्वावलम्बी बनाना इस नीति का प्रमुख ध्येय है।

**राजकोषीय नीति**—यह नीति मुख्य रूप से ऋण एवं व्यय के वितरण कर, सार्वजनिक आय, अर्थ व्यवस्था के लिये वित्तीय साधन मुहैया कराने एवं अर्थ व्यवस्था को व्यवस्थित आधार प्रदान करने में सहायता पहुँचाती है। राष्ट्रीय बचत, निवेश, पूंजी निर्माण और वित्त व्यवस्था से इस नीति का सीधा संबंध है।

**मौद्रिक नीति**—मुद्रा और साख पर नियंत्रण इस नीति का मुख्य कार्य है। मुद्रा एवं साख की मात्रा के संकुचन और प्रसार के प्रबन्ध को मुद्रा नीति कहते हैं। विभिन्न उपायों द्वारा मुद्रा एवं साख की पूर्ति का नियमन और नियंत्रण केन्द्रीय बैंक द्वारा किया जाता है।

**मूल्य नीति**—प्राय: ऐसा होता है कि प्रारम्भ में आधारभूत एवं बडे उद्योग मांग के अनुरुप उत्पादन नहीं कर पाते जिससे मूल्य वृद्धि की समस्या उत्पन्न होती है और सामान्य आदमी का जीना दूभर हो जाता है। इस मूल्य वृद्धि को, जो सामान्य मूल्य स्तर से अधिक है रोकने के लिये मूल्य नीति घोषित की जाती है। वस्तुओं के अधिकतम मूल्यों का निर्धारण किया जाता है। कुछ वस्तुयें सरकार द्वारा उचित मूल्य पर उपलब्ध कराई जाती है। आर्थिक नियोजन के सफल क्रियान्वयन की दृष्टि से सरकार को मूल्यों पर नियंत्रण करना पड़ता है।

**मजदूरी नीति**—आर्थिक नीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा मजदूरी नीति है। मजदूरों की प्रतिष्ठा बनी रहे, उनके जीवन स्तर में वृद्धि हो, उनका शोषण न हो सके इस हेतु मजदूरी नीति की उपादेयता सर्वविदित है। मजदूरों को संतोष प्रदान करने वाली मजदूरी नीति के रचनात्मक प्रभाव पूर्णतया स्पष्ट है।

उक्त सात प्रकार की नीतियों का सहारा लेकर सरकार आर्थिक उद्देश्यों को पूरा करने का प्रयास करती है। इसके लिये सरकार को हस्तक्षेप, प्रोत्साहन और नियंत्रण जैसे कार्यों को करना होता है।

नीतियों के निर्माण के साथ इनका निष्ठा एवं ईमानदारी से पालन करना तथा समय-समय पर इनका मूल्यांकन करना आवश्यक है। इससे बाधक तत्वों को आसानी से पता चलाया जा सकता है और समय रहते उन्हें दूर किया जा सकता है।

## 18.6 सन् 1991 के पूर्व आथिक नीति

आर्थिक नियोजन की नीति अपनाई गई। उद्योगों की स्थापना के विषय में लाइसेंस नीति को लागू किया गया। इस नीति के अन्तर्गत उद्योगों की स्थापना एवं संचालन के लिये आवश्यक संरचना का विकास देश के हितों को ध्यान में रखते हुये किया गया। विदेशी पूंजी को भी आमंत्रित किया गया पर उसे देश के नियमों के अधीन ही विकसित होने का सुअवसर उपलब्ध कराया गया। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में कर्ज एवं सहायता ली गई। देश में सार्वजनिक उद्योगों का विकास हुआ। उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन एवं वितरण प्रतिबन्धों के अधीन रखे गये। कृषि का उत्पादन बढ़े इस हेतु कृषि में यन्त्रीकरण की नीति का अनुसरण हो इस पर जोर दिया गया।

इन प्रयासों से देश का विकास हुआ। अनेक आधारभूत उद्योगों की स्थापना की गयी जिससे औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि के साथ औद्योगिक वस्तुओं का निर्यात भी होने लगा। कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी के परिणामस्वरूप खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्म निर्भरता का अनुभव होने लगा। स्कूल, कालेज, अस्पताल, बीमा, सड़कें, परिवहन आदि की सुविधायें जनसाधारण को मिलना शुरु हो गयी। इन उपलब्धियों के होने पर भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हम पिछड़े ही रहे। जैसे हमारे औद्योगिक उत्पादन की गुणवत्ता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से पीछे रही। सबसे अधिक अखरने वाली बात यह रही कि सार्वजनिक क्षेत्र को हमारी अधिकांश इकाईयां लगी हुई पूंजी के अनुपात में प्रतिफल देने में असमर्थ/असफल रहीं। आयात अधिक थे और निर्यात कम। विदेशी मुद्रा की कमी सदा खटकती रही। उक्त कमियों से प्रभावित होकर आर्थिक विकास के नवीन कार्यक्रम अथवा रणनीति का विकल्प सोचा जाने लगा और जुलाई 1991 में नई आर्थिक नीति को अपनाया गया।

## 18.7 नई आर्थिक नीति एवं इसकी विशेषतायें

सन् 1991 से पुरानी आर्थिक नीत के स्थान पर नई आर्थिक नीति का गठन हुआ है। इस नीति द्वारा आर्थिक क्षेत्र में लाये गये परिवर्तन इतने बड़े और प्रभावशाली सिद्ध हुये हैं कि इन्हें नई आर्थिक नीति की संज्ञा दी गई है।

यह नीति इस अर्थ में है कि पहले से चली आ रही नीति से यह नीति भिन्नता लिये हुये हैं। इसमें देश की अर्थ व्यवस्था के लिये नूतन दिशाओं का निर्धारण हुआ है।

इसकी मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

**उदारीकरण**—उदारीकरण से तात्पर्य निजी क्षेत्र के विनियमन और नियंत्रण को शिथिल

करने से है। पुरानी नीति में निजी क्षेत्र के कार्य संचालन पर अनेक तथा कड़े प्रतिबन्ध लगे थे। अब इन्हें काफी कुछ ढीला कर दिया गया है जिसके परिणामस्वरूप निवेश, उत्पादन बिक्री आदि के विषय में निजी क्षेत्र अधिक स्वतन्त्रता का अनुभव करने लगे हैं। निजी क्षेत्र के प्रति उदारीकरण का बोध कराने वाली अनेक बातें हैं, प्रथम, कुछ उद्योगों को छोड़कर अन्य सभी उद्योगों पर से लाइसेंस व्यवस्था हटा ली गयी है। अब उद्योग लगानेवाला लाइसेन्स प्रापत करने के झंझटों से बचता है जिससे उद्योग के क्षेत्र में उद्यमियों का प्रवेश आसान हो गया है। दूसरे उद्योगों की उत्पादन क्षमता पर लादी गयी अधिकतम सीमा को हटा लिया गया है। पुरानी नीति में क्षमता सृजन की अधिकतम सीमा का निर्धारण कर दिया जाता था जिससे आगे औद्योगिक इकाई अपना विसतार नहीं कर सकती थी। इस हदबन्दी को हटा लेने से बड़े पैमाने के उत्पादन के विभिन्न लाभ लिये जा सकते हैं। तीसरे उत्पादकों को उत्पाद चयन की छूट मिल गई है। पहले लाइसेन्स में वर्णित वस्तुओं तक ही उत्पादन सीमित रहता था। अब ऐसी कोई रोक न होने से बाजार में मांग के अनुरुप उत्पाद के विषय में निर्णय लेने की छूट है। चौथे, बड़ी औद्योगिक इकाईं की परिसम्पत्ति पर लगी 100 करोड़ रुपये की बंदिश (रोक) को उठा लिया गया है। इस प्रकार बड़ी इकाईयाँ भी इस रोक से बाहर हो चुकी हैं।

**अर्थव्यवस्था का और खुला रूप**—नई नीति के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था के भीतर आने वाले और बाहर जाने वाले प्रवाहों को काफी सरल एवं सुविधाजनक कर दिया गया है। अब एक साल की जगह तीन वर्ष के लिये व्यापार नीति की घोषणा की जाती है। अब आयात और निर्यात के बारे में निर्णय लेने का स्थाई आधार मिल गया है। आयात के क्षेत्र में गुणात्मक महत्व के परिवर्तन हुये हैं। आयात कोटा समाप्त कर दिया गया है। वर्तमान समय में आयात विनियमन के लिये टैरिफ और वित्तीय उपकरणों का प्रयोग अधिक किया जा रहा है। इस नई नीति में घरेलू और विदेशी उद्यमों के बीच सहयोग को प्रोत्साहन है। विदेशी उद्यमियों को निवेश, यापार और तकनीक क्षेत्र में लुभाने के लिये अनेक उदारतापूर्ण सुविधाओं का प्रबन्ध है। निर्यात के क्षेत्र में भी ऐसी छूटों का प्रबंध हुआ है जिससे निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है और प्रतियोगिता जोर पकड़ सकती है।

**निजीकरण**—नई नीति से निजी क्षेत्र का विस्तार हो सकता है। बहुराष्ट्रीय निगमों के लिये पर्यापत सुनहले अवसर खुले हुये हैं। निवेश के बटवारे में निजी क्षेत्र का भाग पहले से अधिक बढ़ गया है सातवीं योजना के कुल निवेश में निजी क्षेत्र का भाग 52% रखा गया। इसके अतिरिक्त अनेक क्षेत्र जो पहले सार्वजनिक क्षेत्र के लिये सुरक्षित थे अब वे निजी क्षेत्र के लिये खोल दिये गये हैं। अब सार्वजनिक क्षेत्र के लिये 17 की जगह कुल 8 ही उद्योग सुरक्षित रह गये हैं। अब निजी क्षेत्र का प्रवेश 9 अन्य उद्योगों में संभव हो गया है। तीसरे विदेशी कम्पनियों के साथ भावी सहयोग समझौतों के विषय में नियमों को पर्याप्त शिथिल और नमनीय (उदार) बना दिया गया है। इससे भी निजी क्षेत्र के फैलाव में सहायता मिलेगी।

**अधिकाधिक बाजारोन्मुख**—भारत की अर्थ व्यवस्था एक मिश्रित अर्थ व्यवस्था है जिसके कारण बाजार का महत्व पहले से ही है परन्तु नवीन आर्थिक नीति ने बाजार के महत्व को और बढ़ा दिया है। अनेक उद्योगों पर से प्रत्यख नियंत्रण के हट जाने से तथा वित्तीय उपकरणों (जैसे टैरिफ आदि) की अधिक प्रमुखता से बाजार की प्रभावोत्पादकता बढ़ गई है। बाजार में प्रतियोगिता को बढ़ाना मिल रहा है।

बाजार उन्मुख व्यवस्था के अन्तर्गत सरकार द्वारा उत्पादकों पर किसी भी प्रकार की रूकावटें एवं नियंत्रण नहीं लगाये जाते। इस प्रकार सरकार की भूमिका क्रमशः घटती जाती है जबकि मांग पूर्ति को बाजार शक्तियों की भूमिका अनुपात में बढ़ती जाती हैं।

**भूमण्डलीकरण**—नई आर्थिक नीति के तहत अपनोय गये सुधारों ने उदारीकरण और निजीकरण से आगे जाकर भूमण्डलीकरण के लिये मार्ग खोल दिया है। भूमण्डलीकरण के लिये वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी और टैक्नालाजी पर से रूकावटें हटा ली गयीं हैं। अब वस्तुओं, पूंजी, टेक्नालाजी और श्रम का निर्बाध प्रवाह संभव है। भूमण्डलीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें विश्व बाजारों के बीच परस्पर निर्भरता उत्पन्न होती है और व्यापार देश की सीमाओं को लाँघकर विश्व व्यापार में निहित तुलनात्मक लागत लाभ दशाओं का दोहन करने की दिशा में आगे बढ़ता है।

भूमण्डलीकरण की वजह से आर्थिक लेन-देन की प्रक्रियाओं और उनके प्रबन्धन का प्रवाह राष्ट्रों की राजनैतिक सीमाओं को पार कर सकता है।

भारत में भूमण्डलीकरण का पोषण करने वाले कारक निम्नलिखित हैं—

(1) तकनीकी परिवर्तन (2) प्रतियोगिता (3) उदारवादी नीतियाँ (4) विकासशील अर्थ व्यवस्थाओं के अनुभव।

## 19.8 नई आर्थिक नीति की समीक्षा

इस नीति से हमने क्या पाया तथा क्या गंवाया पर विचार पर लेना आवश्यक है। नई आर्थिक नीति विवाह के घेरे में बाहर नहीं है। जहां इस नीति के कुछ समर्थक हैं वहीं कुछ इसके विरोधी भी इस आधार पर हैं कि उसने राष्ट्रीय व्यवसथा को गलत दिशा में मोड़ने का कार्य किया है।

**वर्तमान आर्थिक दशाओं से मेल खाती नीति**—विकास के वर्तमान चरण के लिये इसकी उपयुक्तत एवं देयता असंदिग्ध जटिल हो जात है। विविध क्रियाओं के बीच असंख्य समझौतों का जन्म हुआ है। इन हालातों में भौतिक प्रतिबंध बहुत अनुकूल नहीं सिद्ध हो सकते। एक अनुकूल पर्यावरण की सृष्टि की आवश्यकता है जिससे कि उत्पादक, उपभोक्ता, व्यापारी आदि बदलती हुई मांग सकते पूर्ति के अनुसार अपने व्यवहार को ढाल सके। नई आर्थिक नीति अर्थ व्यवस्था की वर्तमान दशा और संवृद्धि के लिये सहायक इस आधार पर है कि इसने प्रतियोगिता वित्तीय उपकरणों आदि के द्वारा सामान्य पर्यावरण पर प्रभाव डाला है।

यह नीति मध्यम वर्ग के लोगों के हितों के काफी अनुकूल है। निजी क्षेत्र के विस्तार से इस वर्ग की संख्या एवं आय में बढ़ोत्तरी होगी।

उत्पादन क्षेत्र में लगे छोटे पैमाने के उद्योग टी० वी० टेप-रिकार्डर, वी० सी० आर० एवं अन्य घरेलू साज-सज्जा का निर्माण मध्यम वर्ग के लिये कर रहे हैं। इन वस्तुओं के लिये एक निर्विघ्न बाजार की जरूरत है। नई नीति में इस आवश्यकता को पूरा करने के लिये समुचित प्रबन्ध है। संतोष यह है कि इस क्षेत्र ने उत्पादन, निर्यात और रोजगार आदि की दिशाओं में सराहनीय प्रगति की है।

नई आर्थिक नीति अक्षमताओं से घिरी अर्थव्यवस्था के लिये लाभप्रद है। पूंजी की निम्न उत्पादकता, बीमार इकाईयों की बढ़ती हुई संख्या, अधिक मात्रा में मौजूद अप्रयुक्त क्षमता आदि के द्वारा अक्षमता का बोध होता है। प्रतियोगिता के दबाव से जो नई आर्थिक नीति डालती है अक्षमता को सुधारा जा सकता है।

**औद्योगिक संवृद्धि की ढिलाई पर रोक**—औद्योगिक संवृद्धि की शिथिलता के कई कारण हो सकते हैं- मांग की कमी, सार्वजनिक क्षत्र में निवेश की धीमी गति से उत्पन्न आधारिक संरचना संबंधी सुविधाओं का अभाव तथा उद्योगों के कमजोर आधार आदि। इन सभी कारणों पर नई आर्थिक नीति कारगर (सहायक) नहीं हो पा रही हैं। इसमें कोई शक नहीं है कि उद्यम कर्ता नई इकाईयों को लगाना लाभप्रद पायेंगे और प्रतियोगिता द्वारा तकनीक में सुधार, अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन और लागत घटाने में जोर लगायेंगे। उद्योगों के कमजोर आधार के लिये बाजारेत्तर उपायों के सहारे की जरूरत है जैसे अनुसंधान का फैलाव, शिक्षण प्रशिक्षण के माध्यम से वैज्ञानिक एवं तकनीकी कौशल को उन्नत बनाना आदि।

**व्यापार घाटे को पूरा करने में सहायक**—नई आर्थिक नीति व्यापार घाटे की पूर्ति में सहायक मानी जा रही है पूंजीगत माल, मध्यवर्ती वस्तुयें तथा तकनीक के आयात की उदारता द्वारा उत्पादक निर्यात योग्य उत्तम कोटि की वस्तुयें कम लागत पर तैयार कर सकेंगे। कारण यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की प्रतियोगिता में केवल निपुण एवं कुशल उत्पादक ही पैर जमा सकेंगे। वित्तीय एवं मौदिक उपकरणों का सहारा लेकर व्यापार का विनियमन करके निर्यात बाजार की आवश्यकताओं के अनुसार सरकार कीमतों और अभिप्रेरणाओं को ढालने में समर्थ हो सकेगी। जोखिम और भारी उतार-चढ़ाव वाले विश्व बाजार में निजी उद्यमकर्ता ही टिक सकेंगे। अत: अत: उनके लिये सुविधाओं की व्यवस्था न्यायोचित है। उक्त तर्क पूर्णरूपेण सत्य नहीं है। उदार आयात पर निर्यात दृष्टिकोण से विचार करना एकांगी है। भारी निवेश के बल पर लगाये गये घरेलू उद्योगों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा। व्यापार के घाटे की समस्या दीर्घकालिक है और अर्थ व्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन के बिना व्यापार घाटे का समाधान संभव नहीं है। इसके लिये नियोजन और सरकार का हस्तक्षेप वांछित है। नई नीति द्वारा संरचनात्मक परिवर्तन का कार्य संभव नहीं दिखता क्योंकि इसके अन्तर्गत बाहरी क्षेत्र को खुला छोड़ दिया गया है। इस नीति की यह मान्यता कि सारा व्यापार बाजार आधारित है सही नहीं है। व्यापार का एक बहुत बड़ा हिस्सा व्यापार समझौतों से अनुशासित है।

**संसाधनों की कमी को दूर करने में सहायक**—नई नीति के समर्थकों का कहना है कि इससे संसाधनों की कमी की पूर्ति हो सकेगी। निजी क्षेत्र पंजी बाजार से शेयर और ऋण पत्र आदि के द्वारा अपनी जरूरतों को पूरा कर लेगा। ये तर्क कि कर को नीति दरों से सरकार के राजस्व में वृद्धि होगी और कर में दी गयी छूट और ब्याज की ऊँची दर अधिक बचत की इच्छा को बढ़ायेगी ठीक लगते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इधर हाल के सालों में पूंजी बाजार से निजी क्षेत्र अधिक संसाधन जुटाने में सफल रहा है। इधर शेयर बाजार में निवेशकों की संख्या बढ़ी है और पूंजी की इच्छुक कम्पनियों में भी बाढ़ आई है फिर भी इससे संसाधनों के अन्तराल को कई कारणो से भर पाना कठिन लग रहा है। प्रथम सार्वजनिक क्षेत्र में संसाधनों की समस्या गम्भीर है। सार्वजनिक उद्यम मुनाफा कमाने में असमर्थ रहते हैं। सरकार की

राजस्व प्राप्तियाँ इतनी नहीं होती हैं कि वे योजनागत व्यय की ही पूर्ति कर सकें। इससे भी आगे सरकार के संसाधन गैर योजना व्यय में भी खप जाते हैं। निर्यात वृद्धि भी इतनी नहीं है कि उससे पर्याप्त मात्रा में विदेशी मुद्रा इकट्ठी हो सके। संसाधन जुटाने का एक बड़ा भाग नई नीति से बाहर है। अत: एक सीमा तक ही नई नीति संसाधन की कमी को पूरा करने में सहायक है उससे आगे नहीं।

नई नीति (वर्तमान नीति) में व्यवसाय के निजीकरण पर जोर है, बहुराष्ट्रीय निगमों के प्रवेश के अवसर उपलब्ध हुये हैं, सार्वजनिक क्षेत्र के प्रभाव को कम किया गया है। ये सब बातें देश की अर्थव्यवस्था की उन्नति में सहायक है न कि बाधक। नई नीति में नियंत्रण व्यवस्था को शिथिल किया गया है, इन नियंत्रणों को पूरी तरह समाप्त नहीं किया गया है। नियंत्रण तंत्र तब भी मौजूद है। आवश्यक नियंत्रण को हटा देने में कोई हर्ज नहीं है। नियंत्रण शिथिल करने से निजी क्षेत्र को काम करने की जो छूट मिली है वह न्यायोचित है। निजी क्षेत्र में सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्रों की तुलना में अधिक कार्य होता है।

नई नीति में प्रत्यक्ष नियंत्रण हटा लिये गये हैं पर अप्रत्यक्ष नियंत्रण जैसे राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों पर अधिक बल दिया जाने लगा है। नई नीति के समर्थकों की इन नीति के विरोधी कितनी ही आलोचना करें परन्तु वर्तमान परिवेश में नई नीति के समर्थकों का पलड़ा भारी पड़ रहा है।

## 18.9 सारांश

इस इकाई का प्रारम्भ नई नीति के पूर्व नीति से किया गया है। तत्पश्चात् क्रम से आर्थिक नीति के अर्थ, उद्देश्य, उपकरणों एवं आयामों पर प्रकाश डाला गया है। इसके बाद वर्तमान, आर्थिक नीति का समालोचनात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। सभी आलोचनाओं के बाद यह मत न्याय संगत पाया गया कि इस नई नीति के अपने फायदे हैं।

## 18.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अग्रवाल, ए० एन०, भारत में आयोजन एवं आर्थिक नीति, विश्व प्रकाशन।
2. सिन्हा, वी० सी०, विकास नियोजन एवं नीतियाँ (2005), साहित्य भवन।

## 18.11 लघु प्रश्न

**प्रश्न**

1. आर्थिक नीति से क्या आशय है?
2. आर्थिक नीति के उद्देश्य क्या है?
3. आर्थिक नीति के आयाम क्या हैं?
4. नई आर्थिक नीति के क्या फायदें हैं?

**दीर्घप्रश्न :**

1. नई आर्थिक नीति पुरानी नीति से किस प्रकार भिन्न है? वर्तमान आर्थिक परिवेश परिवेश में इसकी उपादेयता स्पष्ट कीजिये।
2. नई नीति की आलोचनाओं में कितना बल है? सविस्तार वर्णन कीजिये।
3. क्या आप नई आर्थिक नीति से सतुष्ट हैं? यदि हाँ तो क्यों? यदि नहीं तो क्यों?
4. नई आर्थिक नीति की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न :**

1. भारत में आर्थिक उदारीकरण की नीति कब अपनाई गई?

   (अ) 1990 (ब) 1991 (स) 1950 (द) 1948

उत्तर (ब)

2. आर्थिक नीति.....और.....का एक समुच्चय है।
3. आर्थिक नीति के उद्देश्य निश्चित करते समय किन दो बातों का ध्यान रखना जरूरी है- 1. ..... 2.....
4. किस प्रकार के विकास से देश को खुशहाल बनाया जा सकता है?
5. राजकोषीय उपकरणों में कौन-कौन से चार तत्व सम्मिलित हैं लिखो-

   1. ..... 2..... 3. ..... 4. .....
6. उदारीकरण की नीति अपनाने के बाद भारत में स्थापित दो संस्थाओं के नाम लिखो।

   1. ..... 2.....
7. .....और.....पर नियंत्रण मौद्रिक नीति का प्रमुख कार्य है
8. राजकोषीय नीति का किन चार बातों से सीधा संबंध है।

   1. ..... 2.....3. ..... 4.....

# इकाई 19- संस्कृति, नीति नियोजन व विकास

## इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 संस्कृति की अवधारणा

19.3 आर्थिक नीति के उद्देश्य

19.4 भारतीय अर्थव्यवस्था में निहित विचारधारा

19.5 भारतीय अर्थव्यवस्था की कार्यनीति

19.6 संस्कृति, नीति नियोजन एवं विकास में अन्तर्सम्बन्ध

19.7 सारांश

19.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

19.9 प्रश्नोत्तर

## 19.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई संस्कृति, नीति नियोजन व विकास पर आधारित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् हम संस्कृति का नीति, नियोजन व विकास पर प्रभाव के साथ-साथ आर्थिक नीति के उद्देश्य को जान सकेंगे। अपनायी गयी आर्थिक नीति के पीछे नीति निर्माताओं के क्या विचार थे। एवं क्या परिसिथतियां थी, जिनकी झलक हमें नीतियों में दिखायी देती हैं उन्हें भी जान सकेंगे। इस इकाई के अंत में स्वतन्त्रता पश्चात् से वर्तमान तक आर्थिक विकास हेतु अपनायी गयी नीतियों का भी हम विस्तृत रूप से अध्ययन कर सकेंगे।

## 19.1 प्रस्तावना

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को निर्धारित दिशा देने हेतु समस्या का चयन कर, उसका समाधान करने हेतु प्रत्येक देश कोई न कोई नीति का निर्धारण करता है इस नीति पर संस्कृति की स्पष्ट झलक होती है।

समाज के सभी क्षेत्र आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि अभिन्न रूप से अन्तर्निर्भर है अत: आर्थिक, क्षेत्र में अपनाये गये दृष्टिकोण के प्रभाव से कोई भी क्षेत्र अप्रभावी नहीं रह सकता।

यह तथ्य अपने आपमें सत्य है कि धनार्जन करना और पेट भरना हर व्यक्ति की प्रथम आवश्यकता है जब उसको यह आवश्यकता पूरी हो जाती है तब उसका मन और बुद्धि सृजनात्मक, कलात्मक और चिंतन की ओर प्रवृत्त होती है और किसी भी समाज और उसकी संस्कृति का विकास होता है। कार्लमार्क्स भी आर्थिक पद्धति को समाज की नींव मानते थे

आपके अनुसार आर्थिक व्यवस्था ही समाज की अन्य उपव्यवस्थाओं को निर्धारित करती हैं। यहां हम केवल मार्क्स दृष्टिकोण से ही बात नहीं करते वरन् वेबर के दृष्टिकोण की समाज की उपव्यवस्थाओं द्वारा आर्थिक व्यवस्था निर्धारित की जाती है, को भी समान महत्व देते हैं इस प्रकार कह सकते हैं कि किसी भी देश में आर्थिक विकास को प्राप्त करने हेतु आवश्यक है कि मानवीय संसाधनों को विकसित किया जाये। सामाजिक संरचना अनुकूल हो एवं समाज के सभी वर्गों को न्याय पूर्ण वातावरण सुलभ हो। अत: यदि हम आर्थिक विकास को प्राप्त करने की आर्थिक नीति अपनाते हैं तो हम सामाजिक विकास को इससे पृथक् नहीं कर सकते, क्योंकि दोनों ही अन्योन्याश्रितता के लक्षण विद्यमान रहते हैं। कोई भी सामाजिक के लक्षण विद्यमान रहते हैं कोई भी सामाजिक समस्या के मूल में आर्थिक कारक हो सकता है। एवं इसी तरह आर्थिक समस्या के मूल में सामाजिक कारक। इस सन्दर्भ में तारलोक सिंह का मानना है कि "इस प्रकार सामाकि नीति के मूल में आर्थिक विकास के सामाजिक पहलुओं को तथा सामाजिक तथ्यों एवं नीतियों के आर्थिक आशाओं को एक साथ समझने तथा इनके बीच संतुलन प्राप्त करने की आवश्यकता पायी जाती है।"

## 19.2 संस्कृति की अवधारणा

किसी भी देश का विकास उस देश की संस्कृति से प्रभावित होता है। अत: विकास के प्रति समझ विकसित करने के लिये आवश्यक है कि संस्कृति के प्रति समझ विकसित की जाये।

यह संस्कृति ही है जो मनुष्य को पशु से अलग करती है। संस्कृति एक ऐसी धरोहर है जिसकी सहायता से मानव पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता है और अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता रहा है। जिस प्रकार समाज में कोई परिवर्तन आता है उसी प्रकार, संस्कृति भी परिवर्तित होती है। संस्कृति का अभिप्राय एक ऐसे विशिष्ट गुण से है जो व्यक्ति को दूसरों से अलग करता है। जैसे—उसके रहन-सहन, बोल चाल व्यवहार करने का ढंग आदि। यदि मनुष्य के पास से संस्कृति को हटा दिया जाये तो उसके पास कुछ नहीं बचेगा।

मनुष्य शारीरिक व मानसिक विशेषतायें संस्कृति निर्माण में योगदान देती है। मानव द्वारा किये गये भाषा के आविष्कार द्वारा विचारों के आदान-प्रदान ने संस्कृति के हस्तान्तरण को और अधिक आसान बना दिया है। भौतिक क्षेत्र में अनेक वस्तुओं को निर्मित कर पाया है एवं अभौतिक क्षेत्र में अनेक विश्वासों तथा व्यवहार के तरीकों को जन्म दे पाया है।

### संस्कृति का अर्थ एवं परिभाषा

संस्कृति शब्द को विद्वानों द्वारा अलग-अलग प्रकार से प्रयोग व परिभाषित किया है। प्रसिद्ध आलोचक एवं कवि मैथ्यू आर्सॉल्ड जीवन के प्रकाश एवं कोमलता को संस्कृति कहते हैं। मैकाइवर व सोरोकिन जैसे समाजशास्त्री मानव की नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक उपलब्धियों के लिये संस्कृति शब्द को प्रयुक्त करते हैं।

संस्कृति शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा से मानी जाती है। जिसका अर्थ होता है—विभिन्न संस्कारों के द्वारा सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति होना। इन उद्देश्यों की प्राप्ति ही व्यक्ति को सामाजिक प्राणी बनाता है।

टायलर के अनुसार, ''संस्कृति एक ऐसा जटिल समग्र है जिसमें ज्ञान, विश्वास कला, नैतिकता, कानून प्रथा तथा समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य दूसरी समर्थताएं सम्मिलित हैं।''

मेलिनोवॅस्की के अनुसार, ''संस्कृति जीवन व्यतीत करने की एक सम्पूर्ण विधि है जो कि व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करती है और उसे प्रकृति के बन्धनों से मुक्त करती है।

हर्षको विट्स के अनुसार, ''संस्कृति पर्यावरण का मानव निर्मित भाग है।'' इस परिभाषा से स्पष्ट है कि पर्यावरण दो प्रकार का होता है—एक प्राकृतिक तथा दूसरा मनुष्य द्वारा निर्मित।

मैकाइवर के अनुसार, ''संस्कृति के अन्तर्गत जीवन शैली सामाजिक मूल्य, भावात्मक, संवेगात्मक सम्बन्ध आते हैं। यह एक प्रकार की सामाजिक विरातस है जिसे समाज से व्यक्ति ग्रहण करता है।

डॉ० दुबे के अनुसार, ''सीखे हुये व्यवहार प्रतिमानों की उस समग्रता को जो किसी समूह को विशिष्टता प्रदान करती है, संस्कृति की संज्ञा दी जा सकती है।

ब्रूम तथा सेल्जनिक, ''संस्कृति को सामाजिक विरासत के रूप में स्वीकार करते हैं।''

सामाजिक धरोहर या विरासत में भौतिक व अभौतिक दोनों तत्वों को सम्मिलित करते हुये राबर्ट बीरस्टीड लिखते हैं, ''संस्कृति वह सम्पूर्ण जटिलता है जिसमें व सभी वस्तुयें सम्मिलित हैं, जिन पर हम विचार करते हैं,कार्य करते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते अपने पास रखते हैं।''बीरस्टीड आगे भी लिखते हैं कि इसके अन्तर्गत हम जीवन जीने या कार्य करने एवं विचार करने के उन तरीकों को सम्मिलित करते हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं और जो समाज के स्वीकृत अंग बन चुके हैं।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर संस्कृति की निम्न परिभाषायें सामने आती हैं :

1. अपनी मानसिक व शारीरिक विशेषताओं के आधार पर केवल मनुष्य ही संस्कृति का निर्माण कर सकता है।
2. संस्कृति को मनुष्य समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा धीरे-धीरे सीखता है।
3. संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती है।
4. प्रत्येक समाज की एक विशिष्ट संस्कृति होती है।
5. संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की दन नहीं होती वरन् सम्पूर्ण समाज की देन है।
6. प्रत्येक व्यक्ति व समूह अपनी संस्कृति को श्रेष्ठ मानता है और उसी के अनुसार अपने व्यवहारों और विचारों को ढालते हैं।
7. संस्कृति समय व परिस्थिति के साथ-साथ अपने को ढालती है।
8. मनुष्य की अनेक सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकतायें जिनकी पूर्ति में संस्कृति सहायक होती है।
9. कोई व्यक्ति विशेष न तो अकेले का निर्माण करता है और न ही संस्कृति के सम्पूर्ण भाग का उपयोग कर पाता है। यही कारण है कि क्रोबर ने संस्कृति के लिये अधिवैयक्तिक शब्द का प्रयोग किया है।

## 19.3 आर्थिक नीति के उद्देश्य

देश में आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक न्याय की स्थापना के लिये निम्न उद्देश्य अपनाये जाने चाहिये।

1. **उत्पादन को अधिकतम करने की नीति**—उत्पादन को अधिकतर करने की नीति अपनायी जानी चाहिये ताकि राष्ट्रीय व प्रति व्यक्ति आय के उच्च स्तरों को प्राप्त किया जा सके।

2. **पूर्ण रोजगार प्रदान करना**—प्रौद्योगिकी व विकास उत्पादन को तो अधिकतम करता है साथ ही बेरोजगारी वृद्धि में भी सहायक होता है अत: आर्थिक नीति को इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिये ताकि रोजगार के अधिक से अधिक अवसर प्राप्त हो सके।

3. **आय व सम्पत्ति की असमानता को घटाना**—पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में आर्थिक संसाधन कुछ व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित हो जाते हैं जिसके कारण निर्धन और निर्धन व धनी और धनी होता जाता है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि राज्य कुछ ऐसे कदम उठाये जाकि आर्थिक असमानतायें कम से कम हो सकें। सामाजिक सेवाओं के विस्तार का मुख्य कारण भी व्याप्त असमानता को दूर करना होता है।

4. **संसाधनों का समुचित दोहन**—संसाधन चाहे जो हों—भौतिक व मानवीय, देश के विकास हेतु आवश्यक है कि इनका अधिक से अधिक सदुपयोग किया जाये।

5. **आर्थिक स्थिरता बनाये रखना**—अनेक आन्तरिक व बाह्य कारक ऐसे होते हैं जो आर्थिक स्थिरता में बाधक होते हैं जैसे—विदेशी शक्तियों की द्वेषपूर्ण प्रवृत्ति काले धन की उपलब्धता, आकस्मिक संकट आदि अत: देश में आर्थिक स्थिरता बनाये रखने के लिये आर्थिक नीति में स्पष्ट व्यवस्था होनी चाहिये।

6. **आधुनिकीकरण**—तीव्र आर्थिक विकास प्राप्त करने के लिये एवं विश्व अर्थव्यवस्था में अपनी पहचान बनाये रखने के लिये आधुनिकीकरण की नीति को अपनाना पड़ता है। अत: आर्थिक नीति में गत्यात्मकता के गुण भी होने चाहिये।

7. **संतुलित क्षेत्रीय विकास**—देश के विभिन्न क्षेत्र आवश्यकताओं तथा संसाधनों दोनों ही दृष्टियों से भिन्न होते हें आर्थिक नीति क्षेत्र विशेषज्ञ की परिस्थितियों व आवश्यकताओं के अनुसार होनी चाहिये एवं उन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिये जाने की नीति हो जो सापेक्षतया पिछड़े हुये हों।

## 19.4 भारतीय अर्थव्यवस्था में निहित विचारधारा

अंग्रेजों की योजनाबद्ध ढंग से आर्थिक शोषण और दोहन की नीति से भारतीय अर्थव्यवस्था चरमरा गयी थी।

**डॉ० कर्णसिंह गिल के अनुसार**—स्वतन्त्रता के समय भारतीय अर्थव्यवस्था एक पिछड़ी हुयी गतिहीन, अर्द्ध सामंती अर्थव्यवस्था थी। इसे द्वितीय विश्व युद्ध ने घिसी हुयी अर्थव्यवस्था बना दिया था। ऐसी स्थिति में स्वतन्त्रता प्राप्ति के तत्काल बाद यह विचार अत्यन्त उपयुक्त था, नेदेश को चाहे विकास प्रक्रिया को त्वरित करना हो अथवा आत्मपोषित (Sustainable

Development) के लिये औद्योगिक आधार बनाना हो, राज्य की भूमि महत्वपूर्ण है। अत: व्यापक निर्धनता, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता को ध्यान में रखते हुये नीति नियन्ताओं व सरकार ने देश के चहुंमुखी विकास के लिये निम्न उद्देश्य निर्धारित किये :

1. अधिकतम उत्पादन द्वारा राष्ट्रीय व प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करना।
2. रोजगार की सुलभता
3. अमीर और गरीब के बीच की खाई को कम करना।
4. सामाजिक न्याय की उपलब्धता

संविधान में उल्लिखित मूल अधिकार व नीति निदेशक तत्व उपरोक्त उद्देश्यों के प्रति वचनबद्धता दर्शाते हैं। समता के मूल अधिकार के अन्तर्गत अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता अनुच्छेद 15 धर्म, वंश, जाति लिंग के आधार पर विभेद का प्रतिषेध अनुच्छेद 16 के रोजगार के अवसर की समानता, सामाजिक न्याय की उपलब्धता को दर्शाता है। इसी तरह के नीति निर्देशक सिद्धान्त में आर्थिक विकास की चेतना को दृष्टि में रखते हुये यह उल्लेख किया गया कि –

1. समाज के भौतिक साधनों के स्वामित्व का वितरण और नियन्त्रण इस प्रकार किया जायेगा कि सभी का सर्वोत्तम रूप से भला हो।
2. आर्थिक प्रणाली का क्रियान्वयन इस प्रकार से किया जायेगा कि धन और उत्पादन के साधनों का संकेन्द्रण आम जनता के हितों के विरुद्ध न होने पाये।

उपरोक्त मूल अधिकार व नीति निर्देशक सिद्धान्तों के सीमित वर्णन भारत के जन सामान्य की आर्थिक व सामाजिक विकास सम्बन्धी चेतना और प्रेरणा को अभिव्यक्त करने के लिये आयोजन (Planning) की नीति को अपनाया गया। के न्यायोचित व पूर्ण विकास के लिये लोकतान्त्रिक मूल्यों को भी महत्वपूर्ण माना। इस प्रकार दो अलग-अलग समाज के गुणों का लाभ उठाते हुये इनका मिश्रित रूप, लोकतान्त्रिक समाजवाद को अपनाया गया। निर्धनता, उन्मूलन, आय सम्पत्ति की समानता की प्राप्ति, व्यक्ति की आत्माभिवयक्ति की स्वतन्त्रता, मानवीय व्यक्तित्व का अपेक्षाकृत पूर्ण व मुक्त विकास आदि लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु दोनों विचारधाराओं का समन्वित रूप अपनाया जाना आवश्यक समझा गया।

विभेद रहित व पूर्ण आर्थिक व सामाजिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के उद्देश्यों से स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकार व नीति निर्धारकों ने लोकतान्त्रिक विचारधारा पर आधारित पूंजीवादी व्यवस्था व समाजवादी व्यवस्था की विशेषताओं को समाहित कर मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति अपनायी।

**मिश्रित अर्थव्यवस्था से तात्पर्य**—निजी क्षेत्र व सार्वजनिक क्षेत्र का सहअस्तित्व मिरित अर्थव्यवस्था में पाया जाता है। इसके लिये हैन्सन ने 'द्वैध अर्थव्यवस्था' (Dual Economy) लर्नर ने नियन्त्रित अर्थव्यव्रस्था (Controlled•Economy) शब्द प्रयुक्त किया।

मिश्रित अर्थव्यवस्था देश की समग्री आर्थिक प्रणाली को 3 भागों में बांटती है :

1. एक क्षेत्र जिसमें उत्पादन और वितरण का पूर्ण स्वामित्व एवं नियन्त्रण राज्य के हाथ में होता है।

2. एक क्षेत्र जिसमें साझे का उत्पादन व वितरण होता है।

3. एक क्षेत्र जिसमें निजी उद्यम प्रमुख होते हैं सरकार का सामान्य विनियमन व नियन्त्रण होता है।

इस प्रकार सामरिक क्षेत्र मूलभूत भारी उद्योगों जिसमें स्टील, फर्टिलाइजर, तेल शोधन तथा पन-बिजली जैसी भारी परियोजनायें ही सार्वजनिक क्षेत्र में सम्मिलित की गयी।

उपरोक्त लोकतान्त्रिक समाजवादी दार्शनिक विचारधारा व मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति भारत में स्वतन्त्रता पश्चात् से बाजार उन्मुख उदारीकरण की नीति अपनाये जाने तक विभिन्न संशोधनों के साथ स्वीकृति की जाती रही।

परन्तु नियोजन परिवर्तन की भी अपनी शर्तें होती हैं यह न कोई मन्त्र है और न जादू की छड़ी। यह एक अत्यन्त जटिल एवं संवेदनशील प्रक्रिया है। जिस पर निरन्तर दृष्टि रखना आवश्यक है। विकास के लिये एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण होना आवयक है जो छोटी बड़ी 34 राष्ट्रीयतायें, प्रजातीय, साम्प्रदायिक क्षेत्रीय और भाषायी से ऊपर हो। बाधक संस्थाओं का पुन: निर्माण इस प्रकार हो जो विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो। राजनीतिक और सार्वजनिक सेवाओं में पारदर्शिता भी अनिवार्य है। भ्रष्टाचार निवारण का समुचित ढंग हो। विकास के लक्ष्यों का निर्धारण करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि विकास की प्रक्रिया और स्थापित अस्थाओं एवं सांस्कृतिक मूल्यों में टकराव न हो। परन्तु भारत नियोजित क्षेत्र में उपरोक्त शर्तों को पूरा नहीं कर पाया, अत: विकासकी गति मंद रही।

सोवियत रूस व पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देशों ने भी अपनी अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका कम करने का प्रयास किया। इन साम्यवादी देशों के अतिरिक्त अन्य देशों जैसे—ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, जापान, तुर्की, मैक्सिको, ब्राजील, मलेशिया, इंडोनेशिया, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश, अफ्रीका महाद्वीप के देशों आदि में भी निजीकरण को वरीयता दी गयी। इन देशों में निजीकरण से वांछित परिणाम भी दिखायी देने लगे। बाजार यंत्र पर अधिकांश देशों के बढ़ते हुये विश्वास के फलस्वरूप जो परिवर्तन की हवा बही है। भारतीय अर्थव्यवस्था उससे बच नहीं पायी है अत: जुलाई, 1991 में उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण उन्मुख आर्थिक नीति घोषित की गयी। जिसमें विदेशी विनियोजकों को देश में विनियोजन के लिये प्रोत्साहित करने, भारतीय उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति को बढ़ाने सार्वजनिक क्षेत्र की सुरक्षित सीमा को कम करने तथा सार्वजनिक क्षेत्र के निजीकरण की बात बराबर दुहरायी गयी है।

## 19.5 भारतीय अर्थव्यवस्था की कार्यनीति

कार्यनीति का तात्पर्य अर्थव्यवस्था की उस समस्या के चयन से है, जिस पर सर्वाधिक बल देना है, साथ ही उस समस्या का समाधान किन तरीकों से किया जाये उसका निर्धारण भी कार्य नीति में किया जाता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था को मोटे तौर पर दो भागों में बांट सकते हैं—

1. स्वतन्त्रता पश्चात् तथा उदारीकरण प्रक्रिया के पूर्व की कार्य नीति

2. उदारीकरण प्रक्रिया के पश्चात् की कार्यनीति।

द्वितीय विश्व युद्ध ने भारतीय अर्थव्यवस्था को लड़खड़ा दिया था। ब्रिटिश सरकार के शोषण व देश के विभाजन ने भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति और भी दयनीय बना दिया था। इन परिस्थितियों में योजनागत विकास के मौलिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये सरकार ने कुछ युक्तियां या कार्यनीति तय की थी। देश की कमजोर व पिछड़ी आर्थिक स्थिति, सीमित संसाधन और पूंजी व तकनीकी दृष्टि से पिछड़ापन को देखते हुये सरकार ने ऐसी कार्यनीति अपनायी जो कृषि के विकास के साथ-साथ औद्योगिक आधार को भी मजबूत कर तथा देश की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विदेशों से सहायता का मोहताज न होना पड़े।

प्रारम्भ की योजनाओं में विकास की नीति के तीन मुख्य पक्ष थे—

1. दीर्घकालीन आर्थिक वृद्धि प्रक्रिया के लिये मजबूत आधार का विकास करना।
2. वास्तविक विकास प्रारम्भ होने पर औद्योगीकरण को उच्च प्राथमिकता।
3. उपभोक्ता वस्तु उद्योगों की अपेक्षा पूंजीगत उद्योगों के विकास परधिक बल।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में खाद्य समस्या से निपटने के लिये अनाजों के उत्पादन को उच्च प्राथमिकता दी गयी। इसके अलावा आधारभूत संरचना में, विशेषकर ऊर्जा, परिवहन तथा संचार और सिंचाई सुविधाओं के विकास पर बल दिया गया। कुल परिव्यय का 31% खाद्यान्न व कच्चे माल पर तथा 27% धनराशि परिवहन व संचार हेतु निर्धारित की गयी।

पी० सी० माहालनोबिस मॉडल पर अपनायी गयी द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) में परिवहन तथा संचार पर कुल परिमाप का 28% विनियोजित किया गया। इस योजना में मुख्य रूप से औद्योगीकरण पर बल दिया गया। औद्योगिक विकास के लिये 24% तथा कृषि और सिंचाई के लिये 20% विनियोजित किया गया।

योजनागत विकास के प्रारम्भिक दौर में पंजीकृत वस्तु उद्योगों को प्राथमिकता दी गयी। विभिन्न देशों के अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि जब तक आधार संरचना (लोहा, इस्पात, भारी इन्जीनियरिंग, मशीन टूल्स और भारी रासायनिक उद्योगों का विकास नहीं किया जाता, तब तक आर्थिक विकास की गति को त्वरित नहीं किया जा सकता। पूंजी उपकरणों के लिये विदेशों पर निर्भरता विकास के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा होती है। पूंजी के कमी के कारण देश को असन्तुलित वृद्धि की रणनीति को अपनाना पड़ा। पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन पर अधिक ध्यान दिये जाने के कारण उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बाजार के सहारे छोड़ दिया गया। यह योजना तीव्र औद्योगीकरण और भावी विकास की दृष्टि से अवश्य महत्वपूर्ण रही परन्तु कृषि के स्थान पर उद्योगों को परिश्रय देने के कारण आलोचना का शिकार भी हुयी।

तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-66) में भी परिवहन तथा संचार को प्राथमिकता प्रदान की गयी। तथा इनके ऊपर कुल परिव्यय का 24.6% विनियोजित किया गया जबकि औद्योगिक विकास के जिस 20% तथा कृषि के लिये 24% विनियोजन किया गया। 1960 के अनितम वर्षों में ऊंचे दर्जे के सार्वजनिक निवेश के अनुपात में उपभोक्ता वस्तुओं और अनाजों की पूर्ति नहीं की जा सकी जिससे मांग आधिक्य होने से मुद्रा स्फीति पैदा हो गयी। विकास की इस

रणनीति से बेरोजगारी में भी वृद्धि हुयी। महालनोबिस की इस विकास की रणनीति से लोगों का विकास कम हो गया और 1960 के दशक के अन्तिम तीन वर्षों में योजना अवकाश की घोषणा कर दी गयी।

1969 में बनायी गयी दीर्घकालीन रणनीति में महालनोबिस के विकास की राजनीति की मूल भावना को यथावत् रखा गया। आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को नहीं छोड़ा गया परन्तु मुख्य बल आर्थिक वृद्धि पर दियगया। कृषि क्षेत्र में उन्नत बीज व उर्वरकों को अधिमान्यता दी गयी। इस तरह चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74) में सर्वाधिक कृषि तथा सिंचाई के लिये 23.8% तत्पश्चात् औद्योगिक विकास के लिये 21% तदुपरान्त परिवहन एवं संचार के लिये 23.3% का विनियोजन किया गया।

सामाजिक न्याय, स्थिरता के साथ विकास और आत्मनिर्भरता के उद्देश्यों के साथ चौथी योजना प्रारम्भ की गयी थी और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में यह योजना बहुत अधिक सफल नहीं रही। 1971 के युद्ध के कारण धन अपव्यय बांग्लादेश से आने वाले शरणार्थियों के कारण, तेल की बढ़ी कीमतों व मानसून की असफलता ने मुद्रास्फीति में वृद्धि की व भुगतान संतुलन में भी घाटा बढ़ाया जनता में फैलने वाले असंतोष के कारण सरकार को आपात काल की घोषणा करनी पड़ी।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-79) में गरीबी उन्मूलन को उच्च प्राथमिकता दी गयी फिर भी उत्पादन वृद्धि को भी आवश्यक माना गया। इस प्रकार यह नीति यद्यपि सामाजिक न्याय के सिद्धान्त पर आधारित थी तथापि महालनोबिस के विकास प्रारूप से पूरी तरह अलग नहीं हो पायी। इस पंचवर्षीय योजना में शक्ति, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास से पूरी तरह अलग नहीं हो पायी। इस पंचवर्षीय योजना में शक्ति, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास का सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गयी। और इसके लिये 26.2% का विनियोजन किया गया। कृषि व सिंचाई के लिये 21.7ब तथा औद्योगिक विकास के लिये 18.7% का विनियोजन किया गया। इस योजना पर अतिमहत्वाकांक्षी होने का आरोप लगाया गया। यद्यपि यह योजना भी उद्देश्यों को प्राप्त करने में पूर्णरूपेण सफल नहीं हो सकी तथापि गरीबी निवारण कार्यक्रमों को प्रारम्भ करने के लिये इस योजना को अपना महत्व है। यह योजना का अपना महत्व है। यह योजना 1 वर्ष पूर्व ही समाप्त घोषित कर दी गयी। 1 अप्रैल, 1978 से छठीं पंचवर्षीय योजना घोषित की गयी। इसमें न केवल जनता की गरीबी और बेरोजगारी को दूर करने की नीति अपनायी गयी साथ ही लघु कुटीर उद्योगों को विकसित करने की भी नीति अपनायी गयी। परन्तु जनता पार्टी सरकार के पतन से यह योजना 2 वर्ष ही चल सकी और नई कांग्रेस सरकार ने इसे समाप्त करके 1980-81 से 84-85 के लिये नवीन छठी पंचवर्षीय योजना तैयार की।

छठी पंचवर्षीय योजना में विकास की रणनीति को महत्व दिया गया। कृषि व उद्योगों दोनों के लिये आधारित ढांचे को मजबूत करने की नीति बनायी गयी। विज्ञान, प्रौद्योगिकी के लिये 30% कृषि तथा सिंचाई के लिये 25.3% धनराशि विनियोजित की गयी। छठी योजना अपेक्षाकृत सफल मानी गयी एवं इसी के परिणामों से प्रोत्साहित होकर देश के योजनाकारों ने विकास प्रक्रिया को और अधिक तीव्र करने की आकांक्षा दर्शायी। 7वीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) में गरीबी, बेरोजगारी तथा क्षेत्रीय असंतुलनों पर सीधे प्रहार करने का भी प्रयास किया

गया। ऊर्जा उत्पादन 28.2% को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गयी। क्योंकि कृषि व उद्योगों दोनों के आधुनिकीकरण व तकनीकी विकास में ऊर्जा की कमी ही सबसे अधिक बाधक थी।

कांग्रेस सरकार द्वारा 1980 में घोषित औद्योगिक नीति जो आधुनिकीकरण विस्तार और पिछड़े क्षेत्रों के विकास को ध्यान में रखकर बनायी गयी इसकी झलक छठी व सातवीं पंचवर्षीय योजना में भी देखने को मिली। कांग्रेस सरकार ने अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु अनेक उठाये। बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा फेरा जैसे अधिनियम पारित किये गये परन्तु इन कदमों से न तो गरीबी ही हटायी जा सकी और न ही प्रभावशाली ढंग से भूमि सुधार अधिनियमों को लागू किया जा सका। इस औद्योगिक नीति का मुख्य बल लाइसेंस प्राप्त क्षमता की सीमा से अधिक अतिरिक्त स्थापित क्षमता को कानूनी घोषित करना था। साथ ही इसे क्षमता के पूर्व प्रयोग और उत्पादन को अधिकतम करने के नाम पर न्यायोचित ठहराना था। इस प्रकार यह नीति केवल विकास की दृष्टि से प्रेरित थी। यह बड़े व्यापारिक घरानों के लिये लाइसें प्रदान करने में उदार थी। श्री राजीव गांधी ने साफ शब्दों में कहा—

''सार्वजनिक क्षेत्र बहुत से ऐसे क्षेत्रों में फैल गया है जहाँ इसे नहीं होना चाहिये। हम अपने सार्वजनिक क्षेत्र को ऐसे कार्य में लगाना चाहेंगे जो निजी क्षेत्र पर नहीं किये जा सकते। हम निजी क्षेत्र के लिये बहुत से द्वार खोल देंगे ताकि वह अपना विस्तार कर सके। और अर्थव्यवस्था अधिक स्वतन्त्र रूप से विकसित हो सकें।''

यह बड़े पैमाने की इकाइयों को छोटी इकाईयों की कीमत पर बढ़ावा देना चाहती थी अत: यह नीति पूंजी आकर्षक और उदारीकरण उन्मुख नीति थी। प्रो० के० एन० राज के अनुसार—

''इस बात पर एक आम सहमति प्राप्त हो गयी इस नीति सम्बन्धी परिवर्तनों का कुल मिलाकर एक प्रमुख लक्षण निजी क्षेत्र के अप्रतिबन्धित विकास के लिये अधिक क्षेत्र विस्तार करना है। ऐसा विशेषकर विनिर्माण उद्योग के निगम क्षेत्र के लिये किया जा रहा है और बहुराष्ट्रीय निगमों के लिये बहुत अवसर खोले जा रहे हैं।''

आठवीं पंचवर्षीय योजना 1992-93 से 1996-97 गम्भीर आर्थिक परिस्थितियों में प्रारम्भ की गयी। विकास की रणनीति में मानवीय विकास सम्बन्धी नीतियों को प्राथमिकता दी गयी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये निम्नलिखित रणनीति अपनायी गयी—

(1) विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के लिये तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाना

(2) आधुनिकीकरण और प्रतियोगी कुशलता को अर्थव्यवस्था में बढ़ाना जिससे भारत विश्व में हो सके विकास कार्यों के साथ चल सके और उनसे लाभ उठा सके।

(3) निवेश का वित्त पोषण करने के लिये अधिकतर घरेलू संसाधनों पर निर्भरता।

8वीं योजना में ऊर्जा उत्पादन पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया कुल परिव्यय का लगभग 26% भाग इस पर व्यय करने का प्रावधान रखा गया। यह मान्यता काफी बलवती हो रही थी कि आठवीं योजना में और आगे निजी क्षेत्र औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा,

यद्यपि आर्थिक सुधार की नीति राजीव गांधी के शासनकाल में प्रारम्भ हो गयी थी परन्तु व्यापार घाटा कम होने के बजाय बढ़ गया था। देश एक गम्भीर भुगतान सन्तुलन की स्थिति में फंस गया था। अत: ऋण की मांग करने पर विश्व बैंक व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के दबाव में भारत ने बहुत से स्थायीकरण सम्बन्धी उपायों की घोषणा की। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को दिये गये ज्ञापन में डॉ० मनमोहन सिंह ने उल्लेख किया ''इनका मुख्य बल औद्योगिक उत्पादन की कुशलता एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ाना, भूतकाल की तुलना में विदेशी विनियोग एवं तकनीक एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ाना, भूतकाल की तुलना में विदेशी विनियोग एवं तकनीक का कहीं अधिक मात्रा में प्रयोग सार्वजनिक क्षेत्र के निष्पादन को उन्नत करना तथा इसके क्षेत्र का सुधार एवं आधुनिकीकरण करना ताकि यह अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को अधिक कुशलता से पूरी कर सके।''

इस आर्थिक सुधार की नीति के अन्तर्गत 15 उद्योगों की सूची छोड़ अन्य सभी औद्योगिक क्षेत्र से लाइसेंस की पाबंदी हटा ली गयी। MRTP एक्ट में और अधिक शिथिलता दी गयी। विदेशी विनियोग का प्रतिशत 40 से बढ़ाकर 51 कर दिया गया। निर्यात प्रोत्साहन के लिये अप्रैल, 2001 से सभी मदों पर मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटा लिये गये। कुछ चुनी हुयी बीमार सार्वजनिक उद्यमों में पूंजी के विनिवेश की नीति अपनायी गयी। साथ ही श्रमिकों के हितों को सुरक्षित रखने के लिये, छंटनी के प्रभाव से बचने के लिये स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना (Voluntaryu Retirement Schemes) आरम्भ की गयी।

दूसरे चरण में आर्थिक सुधारों में और अधिक उदारवाद दृष्टिकोण के साथ निम्न नीतियां निर्धारित की गयी। ब्याज दरों में कमी करना, सरकारी खर्चों में कटौती, पूंजी बाजार का पूर्ण उदारीकरण किया जाना, श्रम कानूनों में संशोधन सार्वजनिक उपकरणों के निजीकरण में तेजी, बीमा व्यवसाय के क्षेत्र में निजी व विदेशी भागीदारी की अनुमति, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकार की अंश धारित 33% तय करना, सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सुधार, कृषि (आय) को कर के दायरे में लाने का प्रयास एवं MRTP एक्ट की समाप्ति आदि।

इस तरह 9वीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) उदारीकरण की नीति की और एक और बढ़ा हुआ कदम भी। इस योजना में कृषि, ग्रामविकास हेतु 19.8% ऊर्जा परिवर्जन हेतु 39.2% व सामाजिक सेवाओं हेतु 29.2% धनराशि आवण्टित की गयी। इस योजना का लक्ष्य ''वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय और समानता'' जो कि बाजार शक्तियों पर अधिक विश्वास और सार्वजनिक नीति की अनिवार्यताओं पर आधारित था परन्तु यह योजना अपने मुख्य उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो पायी और वित्त प्रबन्ध के लिये बाजार भाव पर ही अधिक निर्भरता उभर कर सामने आयी।

वर्तमान में जारी दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में मुख्य भूमिका निजी क्षेत्रों को सौंपी गयी परन्तु ग्रामीण आधार संरचना, सामाजिक विकास सड़क विकास जैसे क्षेत्रों पर सार्वजनिक क्षेत्र का ही महत्व स्वीकार किया गया। परन्तु आलोचकों के अनुसार दसवीं योजना कृषि व लघु स्तर उद्योग क्षेत्र का रोजगार में प्रधान योगदान स्वीकार करने के बावजूद उन्हें निम्न प्राथमिकता देती है। इसका निजी क्षेत्र में विश्वास कि यह आधार संरचना के लिये संसाधन महैया करायेगा, एक मिथ्या धारणा है।

## 19.6 संस्कृति, नीति नियोजन एवं विकास में अन्तर्सम्बन्ध

विकास एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिससे तात्पर्य सामाजिक, आर्थिक व व्यक्तित्व के विविध पहलुओं का अधिकतम उन्नत होना है। यह विकास विभिन्न कारकों से प्रभावित होता है जिसमें से एक महत्वपूर्ण कारक संस्कृति है। मात्र संस्कृति ही विकास को प्रभावित नहीं करती वरन् संस्कृतिक आधारित नीतियां व योजनायें विकास का माध्यम होती है।

इस प्रकार किसी भी देश की नीति निर्धारण का आधार उस देश की संस्कृति होती है एवं संस्कृति पर आधारित नीति के माध्यम से विकास हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है। संस्कृति प्रत्यक्षत: भी नीति नियोजन व विकास को अलग-अलग भी प्रभावित करती हैं एवं इनसे प्रभावित भी होती है। इस धारणा को निम्न प्रकार भी समझा जा सकता है।

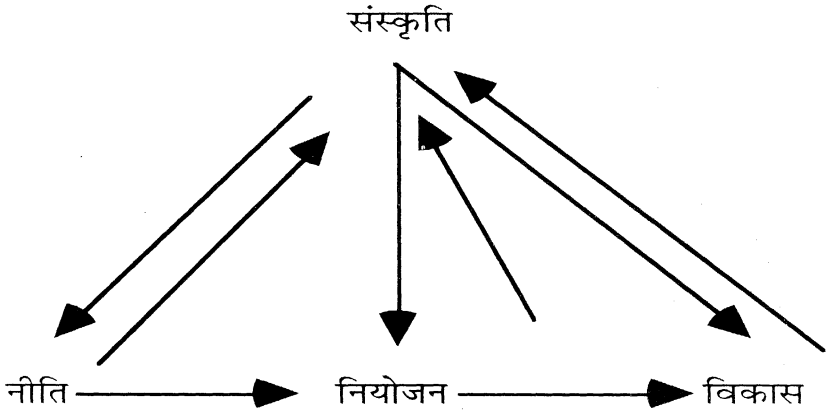


अरस्तु का मानना था कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह कथन विकास हेतु मानव की सामाजिक धरोहर (संस्कृति) के साथ अन्तर्निर्भरता दर्शाता है। अत: जीवन के पूर्ण विकास के लिये सामाकि, सांसृतिक मूल्यों अर्थात् संस्कृति को स्वीकार करना पड़ता है। यह संस्कृति 2 प्रकार की होती है।

(1) भौतिक संस्कृति (2) अभौतिक संस्कृति

व्यक्ति के जीवन में भौतिक साधनों का विकास ही व्यक्ति को सुसंस्कृति नहीं बना सकता, वह केवल सभ्य हो सकता है। अत: अभौतिक संस्कृति व्यक्ति के आत्मिक विकास व्यक्तित्व विकास को कहीं अधिक प्रभावित करती है।

यह संस्कृति नीतियों व नियोजन के माध्यम से विकास में सहयोगी की भूमिका में भी रहती है व कभी-कभी अवरोध भी उत्पन्न करती है। मैक्सवेबर ने अपने लेख 'द प्रोटेस्टेण्ट इथिक एण्ड द स्प्रिट ऑफ कैपिटलिज्म में यह दर्शाने का प्रयास है कि किस प्रकार धर्म और संस्कृति की वैचारिक मान्यताओं ने देशों के विकास की नीतियों में भिन्नता उत्पन्न की है। यदि धर्म और संस्कृति की वैचारिक मान्यतायें धनोपार्जन को प्राथमिकता देती है तभी वह

## 19.6 संस्कृति, नीति नियोजन एवं विकास में अन्तर्सम्बन्ध

विकास एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिससे तात्पर्य सामाजिक, आर्थिक व व्यक्तित्व के विविध पहलुओं का अधिकतम उन्नत होना है। यह विकास विभिन्न कारकों से प्रभावित होता है जिसमें से एक महत्वपूर्ण कारक संस्कृति है। मात्र संस्कृति ही विकास को प्रभावित नहीं करती वरन् संस्कृतिक आधारित नीतियां व योजनायें विकास का माध्यम होती है।

इस प्रकार किसी भी देश की नीति निर्धारण का आधार उस देश की संस्कृति होती है एवं संस्कृति पर आधारित नीति के माध्यम से विकास हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है। संस्कृति प्रत्यक्षत: भी नीति नियोजन व विकास को अलग-अलग भी प्रभावित करती है एवं इनसे प्रभावित भी होती है। इस धारणा को निम्न प्रकार भी समझा जा सकता है।

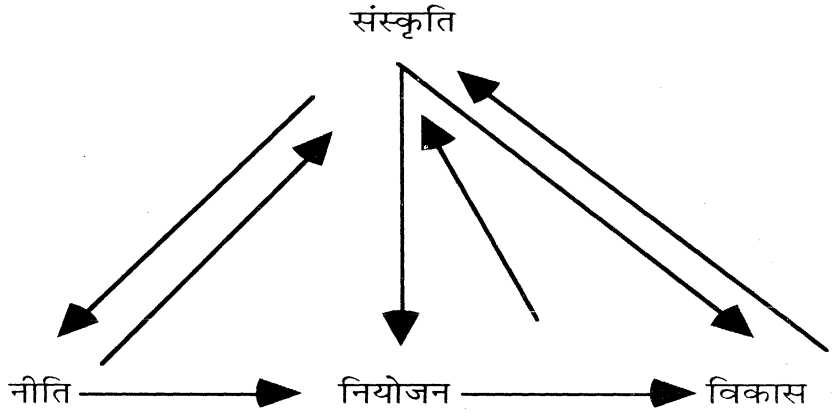


अरस्तु का मानना था कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह कथन विकास हेतु मानव की सामाजिक धरोहर (संस्कृति) के साथ अन्तर्निर्भरता दर्शाता है। अत: जीवन के पूर्ण विकास के लिये सामाकि, सांसृतिक मूल्यों अर्थात् संस्कृति को स्वीकार करना पड़ता है। यह संस्कृति 2 प्रकार की होती है।

(1) भौतिक संस्कृति (2) अभौतिक संस्कृति

व्यक्ति के जीवन में भौतिक साधनों का विकास ही व्यक्ति को सुसंस्कृति नहीं बना सकता, वह केवल सभ्य हो सकता है। अत: अभौतिक संस्कृति व्यक्ति के आत्मिक विकास व्यक्तित्व विकास को कहीं अधिक प्रभावित करती है।

यह संस्कृति नीतियों व नियोजन के माध्यम से विकास में सहयोगी की भूमिका में भी रहती है व कभी-कभी अवरोध भी उत्पन्न करती है। मैक्सवेबर ने अपने लेख 'द प्रोटेस्टेण्ट इथिक एण्ड द स्प्रिट ऑफ कैपिटलिज्म में यह दर्शाने का प्रयास है कि किस प्रकार धर्म और संस्कृति की वैचारिक मान्यताओं ने देशों के विकास की नीतियों में भिन्नता उत्पन्न की है। यदि धर्म और संस्कृति की वैचारिक मान्यतायें धनोपार्जन को प्राथमिकता देती है तभी वह

देश आर्थिक विकासोन्मुख नीति बनता है।

**संस्कृति कवकास के सहयोगी के रूप में**

जैसा कि हमने देखा संस्कृति नीतियों का आधार हो सकती है अत: नीति व नियोजन के माध्यम से समाज का निर्माण करने में संस्कृति का बहुमूल्य योगदान होता है। संस्कृति समाज में सह अस्तित्व का निर्माण करती है। यह तथ्य भी सत्य है कि किसी भी नीति के सफलतापूर्वक क्रियान्वयन में सहअस्तित्व का होना नितान्त आवश्यक है। संस्कृति अपने गुणों लोचशीलता, हस्तान्तरण, आदर्शात्मक, सामूहिकता आदि के द्वारा समाज की निरन्तरता बनाये रखने में सहायक है।

जैसा कि हमें इतिहास बताता भी है कि विश्व की अनेक संस्कृतियां समय के साथ-साथ समाप्त होती गयी परन्तु भारतीय संस्कृति अपनी सहिष्णुता व सामंजस्यता के गुण के कारण आज भी बरकरार हैं।

सामाजिक व आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संस्कृति को सहयोगी घटक माना गया है। मानव की तीनों की तीनों शक्तियों आध्यात्मिकता, मानसिक व शारीरिक में आपस में तालमेल होना अति आवश्यक है। इस कार्य में संस्कृति अपना योगदान करती है। अमेरिका व पश्चिमी यूरोप के देशों में भौतिक आवश्यकताओं को ही सर्वोपरि माना गया क्योंकि इन देशों की धर्म व संस्कृति का यह अन्तर्निहित गुण रहा है। अत: इन देशों की नीतियों व योजनाओं के क्रियान्वयन में सांस्कृतिक, आध्यात्मिक विकास के स्थान पर आर्थिक विकास को प्राथमिकता दी गयी। मात्र आर्थिक विकास का परिणाम अशान्ति, तनाव, हिंसा व नैराश्य के रूप में दिखायी देता है। वर्तमान परिस्थितियां इन देशों के निवासियों को भारत जैसे अध्यात्म प्रधान देशों की प्राचीन संस्कृति योगकला के प्रति आकर्षित कर रही है।

अत: हम कह सकते हैं कि संस्कृति का अर्थ केवल भौतिक विकास ही नहीं वरन् भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास का समन्वय है। किसी देश विशेष के विकास हेतु किन नीतियों व नियोजन को प्राथमिकता दी जायेगी, यह संस्कृति ही निर्धारित करती है।

**संस्कृति विकास के बाध्यक के रूप में**

पूर्व में हमने अध्ययन किया कि किस प्रकार संस्कृति, नीति निर्माण, विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान देती है परन्तु अब हम इसके बाधक स्वरूप का भी अध्ययन करेंगे। विश्व के विभिन्न देशों में धर्म और संस्कृति की प्राथमिकता के आधार पर बनायी गयी नीतियों के कारण उत्पन्न हिंसा, तनाव, उन्माद, उन्माद की घटनायें विकास की प्रक्रिया को बाधित ही कर रही हैं। जिन स्थान विशेष में ये देंगे। फसाद अधिक होते हैं वे आर्थिक दृष्टि से भी पिछड़ जाते हैं। साम्प्रदायिकता के साथ-साथ जातीय आधार पर होने वाले संघर्ष इस युग की सभ्यता को विशेष चुनौती है।

संस्कृति में मतभेद का प्रभाव नीति निर्माण पर पड़ता है। विभेदकारी नीतियां सामने आती हैं। फलत: विघटनकारी तत्वों को प्रश्रय मिलता है समाज में एकरूपता नहीं रह पाती और विकास दुर्लभ हो जाता है।

वर्तमान में भारत जैसे विश्व के अनेक देशों में भौतिकतावादी संस्कृति का तीव्रता से प्रचार-प्रसार हुआ है। जिसका प्रभाव इन देशों की नीतियों में दिखायी देने लगा है। भारत में 1990 के बाद से आर्थिक सुधार के रूपमें वैश्वीकरण, उदारीकरण की नीति को स्वीकार किया है। इसका प्रभाव कृषि, उद्योग धंधे, शिक्षा, स्वास्थ्य के साथ-साथ हमारे सामाजिक ढांचे व जीवनशैली पर भी तीव्रता से दिखायी दे रहा है। विभिन्न विदेशी भौतिकवादी वस्तुओं की भरमार के रूप में बाजार का विकास हुआ है। इस उपभोक्तवादी, बाजारवादी, संस्कृति के फैलाव से प्रत्येक व्यक्ति अधिक से अधिक विलासिता की वस्तु को एकत्र करने की होड़ में व्यक्तिवादी होकर सामाजिक मूल्यों को तिलांजलि देता जा रहा है। इस प्रकार भौतिकतवादी संस्कृति एक तरफा विकासको प्रेरित कर रही है। यह किसी भी देश के स्वस्थ विकास के लिये उचित नहीं है।

## 19.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई देश की आर्थिक नीति व सांस्कृतिक नीति, नियोजन व विकास के अन्तर्सम्बन्ध के अध्ययन पर आधारित है। इस इकाई में हमने संस्कृति के अध्ययन के साथ-साथ आर्थिक नीति के उद्देश्यों का अध्ययन किया। तत्पश्चात् हमारे नीति निर्माताओं द्वारा भारत में लागू की जाने वाली आर्थिक नीति हेतु किन उद्देश्यों को महत्व दिया गया था, का अध्ययन किया। विस्तृत रूप से स्वतन्त्रता से अब तक आर्थिक विकास हेतु अपनायी गयी आर्थिक नीतियों का पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से अध्ययन किया। इकाई के अन्त में संस्कृति, नीति, नियोजन व विकास में क्या अन्तर्सम्बन्ध हो सकता है इस तथ्य से भी अवगत हुआ।

## 19.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. ई० बी० टायलर, प्रीमिटिव कल्चर, पृष्ठ 1
2. एम० जे० हर्सकोविट्स—मैन एण्ड हिज वर्क्स (1955), पृष्ठ 17
3. बूत व सेल्जनिक प्रिन्सिपल्स ऑफ सोशियालॉजी, पृष्ठ 50
4. सिंह तरलोक, ''सोशल पालिसी'' इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया, वाल्यूम 2, द प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया, 1968 पृष्ठ 228
5. गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया, प्रॉबलम्बस इन द थर्ड प्लान—एक्रिटिकल मिसलनी, पृष्ठ 35
6. चरन सिंह—इण्डियाज इकोनामिक पॉलिसी
7. योजना आयोग—(विधि-1) पंचवर्षीय योजनायें।


## 19.9 प्रश्नोत्तर

**लघु उत्तरीय प्रन—**

1. संस्कृति को परिभाषित करें।
2. आर्थिक नीति के उद्देश्य संक्षेप में बतायें।

3. मिश्रित अर्थव्यवस्था पर टिप्पणी लिखें।

4. उदारवादी अर्थव्यवस्था पर टिप्पणी करें।

**दीर्घ उत्तरीय प्रश्न—**

1. आर्थिक नीति से क्या तात्पर्य है? इसके क्या उद्देश्य हैं? लिखें।

2. संस्कृति से क्या तात्पर्य है? सांस्कृतिक नीति नियोजन व विकास में अन्तर्सम्बन्ध स्पष्ट करें।

3. देश की आर्थिक नीति की समीक्षा करें।

4. उदारवादी आर्थिक नीति की आवश्यकता क्यों महसूस की गयी? एवं इस नीति के कारण भारतीय आर्थिक नीति में लाये गये परिवर्तनों पर विचार प्रकट करें।

**बहुविकल्पलीय प्रश्न—**

1. भारत की प्रारम्भिक आर्थिक नीतियां किस प्ररूप पर आधारित थी?

   (1) रगांधी प्रारूप (2) पी० सी० जोशी प्रारूप

   (3) कार्ल मार्क्स प्रारूप (4) महालनोबिस प्रारूप

2. भारत में किस प्रकार की अर्थव्यवस्था अपनायी गयी है?

   (1) मिश्रित अर्थव्यवस्था (2) पूंजीवाद अर्थव्यवस्था

   (3) समाजवादी अर्थव्यवस्था (4) उपरोक्त में से कोई नहीं

3. आपात काल की घोषणा किस पंचवर्षीय योजना के अनितम समय में करनी पड़ी?

   (1) द्वितीय पंचवर्षीय योजना (2) तृतीय पंचवर्षीय योजना

   (3) चौथी पंचवर्षीय योजना (4) पांचवीं पंचवर्षीय योजना

4. भारत ने उदारीकरण की आर्थिक नीति की खुलकर घोषणा किस सन् में की?

   (1) 1980 ई० (2) 1985 ई०

   (3) 1991 ई० (4) 1995 ई०

5. ''संस्कृति पर्यावरण का मानव निर्मित भाग है।'' यह परिभाषा किस समाजशास्त्री की है—

   (1) टॉयलर (2) मैकाइवर

   (3) राबर्ट बीटस्टीड (4) हर्सकोविट्स

   1. 4

   2. 1

   3. 3

   4. 3

   5. 4

# इकाई 20- सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता

## इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 सामाजिक नीति का अभिप्राय

20.3 अच्छे जीवन के गुण अथवा लक्षण

20.4 सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता में सह सम्बन्ध

20.5 जीवन का अर्थ

20.6 जीवन जीना एक कला

20.7 विभिन्न जीवन दर्शन

20.8 गुणोपेत जीवन एवं आधारभूत आवश्यकताओं का मापदण्ड

20.8.1 क्रय शक्ति समता सूचकांक

20.8.2 भौतिक जीवन की गुणवत्ता सूचकांक

20.9 आर्थिक विकास और जीवन की गुणवत्ता में संबंध

20.10 जीवन सुधार से जुड़ी सरकारी नीतियों की झलक

20.11 जीवन की विभिन्न अवस्थाओं से जुड़ा जीवन

20.12 जीवन की गुणवत्ता एवं प्रो. राम कृष्ण मुकर्जी

20.13 सारांश

20.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

## 20.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित से परिचित हो कसेंगे।

* सामाजिक नीति के अभिप्राय से
* गुणवत्ता के मानकों से
* सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता से
* जीवन के अर्थ से
* जीवन जीने की कला से
* विभिन्न जीवन दर्शनों (शैलियों) से
* जीवन जीने में सहायक आधारभूत आवश्यकताओं से

* बेहतर जीवन में सहायक सरकारी नीतियों की झलक से
* आर्थिक विकास और जीवन की गुणवत्ता के संबंध से
* जीवन गुणवत्ता विषयक प्रो० रामकृष्ण की धारणा से।

## 20.1 प्रस्तावना

'बड़े भाग्य मानुष तनु पावा' रामायण के इस कथन में जीवन की गरिमा जीवन की महत्ता की ओर संकेत है। जितने भी जीवधारी हैं वे जीवन की अवधि जीवित रहते हैं। जब तक जीवित रहते हैं वे जीवन व्यतीत करते हैं। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसका जीवन अन्य प्राणियों से भिन्न है, विविध विधि से यह जीवन जीता है। अपने जिन्दा रहने के अधिकार के कारण वह अपने हिसाब से जीवन जीता है। जिंदा रहने के अधिकार मानव का सर्वप्रथम और सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है। वह उत्तम जीवन जीना चाहता है। उत्कर्ष अथवा प्रकर्ष जीवन जीने के लिए उसे प्रयास करना पड़ता है। उत्तम जीवन अथवा गुणमय जीवन ही जीवन की गुणवत्ता का परिचायक है। मानव के जीवन को गुणमय बनाने के लिए सामाजिक नीति का बहुत बड़ा योगदान (अवदान) रहता है।

## 20.2 सामाजिक नीति का अभिप्राय

सामाजिक नीति के अर्थ का खुलासा करने के लिए पहले 'नीति' का अभिप्राय स्पष्ट करने की आवश्यकता है। नीति का अर्थ किसी भी संगठन द्वारा अपने सदस्यों के सामाजिक एवं नैतिक विकास हेतु अपनाए गये अथवा प्रस्ताविक कार्य कलापों से है। नीति का एक अन्य अर्थ किसी उद्देश्य के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली योजना से भी है। सरल शब्दों में नीति से किसी संगठन द्वारा अपने ध्येय अथवा ध्येयों को पूरा करने के लिए अपनाए जाने वाले कार्यक्रम का बोध होता है। इस नीति शब्द के पूर्व 'सामाजिक' विशेषण लगा देने से इसका अर्थ हो जाता है व्यक्ति के जीवन अथवा सामाजिक जीवन को बनाने के लिए अपनाई जाने वाली गतिविधियाँ अथवा जीवन के गुणमय बनाने के लिए किसी संगठन (राज्य) द्वारा उठाये गये अथवा उठाये जाने वाले कदम अथवा उपाय। जब किसी संगठन की नीति का फल समाज के सदस्यों के लिए गुणमय होता है तब उसे सामाजिक नीति कहा जाता है।

देशवासियों को भय एवं संकट से मुक्त रखने के लिए प्रत्येक देश की अपनी एक सामाजिक नीति होती है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि जीवन विपत्तियों, आकस्मिकताओं, कठिनाइयों एवं नाना प्रकार के अभावों एवं दु:खों से घिरा हो सकता है। मानव जीवन को उक्त कठिनाइयों एवं विपत्तियों से उबारना राज्य का कर्त्तव्य माना जाता है। इतना ही नहीं राज्य के कल्याण कारी होने की बात कही जाती है। कल्याणकारी राज्य वह है जो जनता की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति से लेकर उसके कल्याण एवं सुरक्षा की व्यवस्था को ओढ़ लेता है। बाढ़, भूकम्प, महामारी, दुर्घटना, औन अन्य किसी आपदा से अपने नागरिकों को राहत देने का कार्य राज्य करता है। इन कार्यों के लिए राज्य राहत कोष की स्थापना करते हैं। सरकार के पास ऐसी अनेक निधियाँ होती हैं जिनसे वह अपने नागरिकों की सहायता करता है। सरकार अथवा राज्य अपनी साामजिक नीति के माध्यम से सुरक्षा, कल्याण एवं राहत कार्यों को पूरा करते हुए अपने नागरिकों के जीवन को बढ़िया अथवा बुणमय बनाने का संपना साकार करता है।

## 20.3 अच्छे जीवन के गुण अथवा लक्षण अथवा मूल्यभार

गुणवत्ता के लक्षणों का संबंध सामाजिक मूल्यों से होता है। जीवन गुणमय अथवा गुणों से युक्त तब माना जाता है जब जीवन में निम्न मूल्य भार सम्मिलित हों।

* जब स्वास्थ्य बढ़िया हो।
* जब शिक्षा की उत्तम व्यवस्था हो।
* जब लोग दीर्घजीवी हों।
* स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था हो।
* उत्तम कोटि के डाक्टर एवं अस्पताल हों।
* लोग रोग मुक्त हों।
* कोई दरिद्र न हो।
* लोग सदाचारी हों।
* सब साथ-साथ भाई चारे की भावना से रहते हों।
* सबके पास रहने के लिए अच्छा मकान हो।
* सबको तन ढकने के लिए सुन्दर वस्त्र सुलभ हों।
* खाली समय बिताने के लिए स्वस्थ मनोरंजन की सुविधा हो।
* सभी सद्‌गुणी हों।
* सबका जीवन कल्याण मय हो।
* सबके जीवन की सुरक्षा का समुचित प्रबंध हो।
* संकट के समय लोगों को राहत की सुविधा उपलब्ध हो।
* जीवन में दुर्घटना घटित होने पर तत्काल उचित सहायता मिले।

## 20.4 सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता में सह संबंध

राज्य की सामाजिक नीति ऐसी होनी चाहिए जिसमें जीवन की गुणवत्ता सूचक सुविधाएँ एवं व्यवस्थाएँ हों एवं साथ ही सामाजिक नीति के निष्पादन की उत्तम एवं ईमानदारी से पूर्ण व्यवस्था हो। जनता के भौतिक कल्याण के साथ-साथ नैतिक कल्याण का ध्यान रखना भी राज्य का परम कर्त्तव्य है। यह आवश्यक है कि राज्य व्यक्तियों की सहायता करें और व्यक्ति अपना सक्रिय सहयोग राज्य को दें। दोनों से एक परिवार जैसा संबंध अपेक्षित है। राज्य अपने नागरिकों के भले के लिए उत्तरदायी हैं। राज्य एवं उसके नागरिकों के बीच एक सुन्दर सामाजिक नीति के माध्यम से मधुर, स्वस्थ एवं मजबूत संबंध स्थापित हो सकते हैं। सामाजिक नीति का एक उपाय अथवा साधन है और जीवन की गुणवत्ता उसका साध्य। सामाजिक नीति एवं जीवन की गुणवत्ता में साधन एवं साध्य का संबंध है। उचित साधन से साध्य को विधिपूर्वक पूरा करना राज्य का कर्त्तव्य माना जाता है। इसके लिए राज्य अपनी

सामाजिक नीति बनाता है और उसमें जनकल्याण, जन सुविधाएं जन राहतों एवं जन सुरक्षा को सम्मिलित करता है।

सामाजिक नीति को यदि कारण मानें तो जीवन की गुणवत्ता उसका फल है। दोनों में पारस्परिकता एवं अंतत: निर्भरता का संबंध है। जीवन की गुणवत्ता के लिए सामाजिक नीति की उपादेयता है और सामाजिक नीति के उद्देश्य के रूप में जीवन की गुणवत्ता अनिवार्य है। एक दूजे के लिए आवश्यक हैं।

## 20.5 जीवन का अर्थ

जब तक शरीर में प्राण रहते हैं जीवन चलता रहता है, हम जिंदा रहते हैं। शरीर से प्राण निकल जाने पर हम मृत हो जाते हैं। मरने के बाद फिर जन्म (हिन्दू मान्यता के अनुसार) होता है। जीवन जाग्रत अवस्था का नाम है। इसके विपरीत सुप्तावस्था मृत्यु है। जीवन एक यात्रा के समान है। चलना-फिरना, खाना-खाना, पढ़ना-लिखना, तर्क करना और नाना प्रकार के कार्य कलाप करना जीवन है। अत: जीवन एक प्रकार का संघर्ष है। कठिन परिस्थितियों में अस्तित्व बनाये रखना ही जीवन संघर्ष है। इस संघर्ष में जो निन्दा रहने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं वही जीवित रह पाते हैं शेष समाप्त हो जाते हैं। (डार्विन)। हम जिन्दा रहें, हम बने रहें इस हेतु जीवन रक्षा के उपायों का सहारा लेना पड़ता है। भोजन, जल और वायु के मिलते रहने तक हम जिन्दा रहते हैं।

जिन्दा तो सभी जीव रहते हैं। खाना पीना सांस लेना और बच्चे पैदा करना तो सभी जीव जानते हैं पर मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो जीवन को ढालने की क्षमता रखता है। मनुष्य निर्माता भी है। उसमें सर्जनात्मक शक्ति है। उसके पास विवेक है। अत: वह जीवन एक अच्छे ढंग से जीता है। उसका जीवन गुणोपेत जीवन है। उसके जीवन में गुणवत्ता है। इस गुणवत्ता से युक्त जीवन को गुणोपेत जीवन (क्वालिटी आव् लाइफ) कहते हैं। जीवन से जुड़ी एक अन्य धारणा है। वह है जीवन स्तर। जीवन स्तर से तात्पर्य रहन-सहन का तरीका है। मनुष्य का रहन-सहन का ढंग साधारण हो, सादा हो या फिर उत्तम हो अथवा उत्तमोत्तम हो। चर्चा तो 'सदा जीवन एवं उच्च विचार' की सुनने में आती है। इससे भी आगे अब दुनिया के लोग बेहतर गुणोपेत जीवन जीने की बात करते हैं। बेहतर, स्वच्छ एवं निर्मल जीवन एक अच्छा जीवन है। छल-कपट एवं धोखाधड़ी की जीवन अवांछनीय, अप्रशसनीय एवं हानिकारक जीवन है।

जीवन को समझने के लिए जीवन काल अथवा जीवन अवधि का विचार महत्वपूर्ण है। वैसे सही जीवन काल तो किसी को मालूम नहीं हो पाता पर वह इस विषय में अनुमान एवं कल्पना तो कर सकता है। परम्परागत भारतीय समाज में जीवन प्रत्याशा काल दीर्घ था अथवा उसके दीर्घ होने की कामना की जाती थी। वर्तमान समय में जीवन प्रत्याशा घट गई है। मनुष्य में निजी विषा पाई जाती है। उसमें जिन्दा रहने की अभिलाषा देखी जाती है। आश्चर्य की बात तो यह है कि मनुष्य यह जानता है कि वह मरणशील है फिर भी वह मरना नहीं चाहता। उसका वश चले तो वह अपने को अमर कर ले।

मनुष्य अपने जीवन में कार्य ऐसे करता है जो उसे अमर नहीं बना सकते। अमर बनना है तो ऐसे कार्य करने पड़ेंगे जो मनुष्य को अमरता की स्थिति में पहुँचा दें। नेक जीवन, ईमानदारी का

जीवन, परोपकारी जीवन, दानशील जीवन, कर्मवीर, जीवन, ईश्वर को समर्पित जीवन आदि अमरता प्रदान करने वाले हैं। अच्छे कर्म करने से व दूसरों की सेवा करने से भी मृत्यु तो होगी पर नाम से आदमी जिन्दा रहेगा। वह दोहरी मृत्यु का शिकार नहीं होगा।

## 20.6 जीवन जीना एक कला

अच्छा जीवन जीना एक हुनर है, एक गुण है अथवा एक युक्ति है। यह हुनर सभी में नहीं होता। मनुष्यों में भी कुछ ही में यह हुनर होता है। एक अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्य को जीने की कला में पारंगत होना चाहिए। जीवन का अर्थ जानने के बाद जीवन के उद्देश्यों को जानना आवश्यक है। जब उद्देश्य पता चल जाएँ तो जीवन की योजना बनाई जा सकती है जिसके अनुसार जीवन निर्वाह किया जा सकता है। मनुष्य जीवन जीने के दो तरीके अपनाता है—नियोजित जीवन का तरीका और अनियोजित जीवन का तरीका। हमारी समझ से अनियोजित जीवन जिन्दा रहने का एक अच्छा विकल्प नहीं है। नियोजित जीवन व्यतीत करना ही जीने का एक अच्छा तरीका है। इसी में जीवन की गुणवत्ता अथवा उत्तमता निहित है। इसी तरीके का जीवन गुणोपेत जीवन हो सकता है।

परम्परागत भारतीय समाज व्यवस्था में आश्रय व्यवस्था के रूप में हमें नियोजित जीवन के दर्शन होते हैं। आश्रम व्यवस्था जीवन की एक सुविचारित एवं सुन्दर योजना है। मनु के बाद भारत में जीनव की कोई समझकर व उसके लिए बनाई गई योजना का प्रारूप देखने सुनने में नहीं आया है।

इस जीवन योजना का निर्माण तीन स्तरों पर किया जा सकता है। प्रथम व्यक्ति के स्तर पर। दूसरे समाज के स्तर पर और तीसरे सरकार के स्तर पर। जब समाज और राज्य को जीवन योजना बनाने की कोई चिंता नहीं है तो ऐसे में केवल एक स्तर ही शेष बचता है। अर्थात् व्यक्ति का स्तर। आज व्यक्ति के स्तर पर भी कोई जीवन जीने की योजना बनता हो ऐसा सुना नहीं गया। यही कारण है कि लोग डॉक्टर, इंजीनियर, आई०ए०एस०, आई०पी०एस०, पी० सी० एस० आदि बनने का सपना तो देखते हैं पर बन नहीं पाते। 'जहाँ चाह हैं वहीं राह हैं' की उक्ति बिरले ही चरितार्थ होती है। यदि योजना बद्ध तरीके से कोई अपनी किसी अभिलाषा की पूर्ति के लिए पूरे मनोयोग से लगता है तो उसे सफलता अवश्य मिलती है। 'मन अन्ते चित्त भुसौरी' से काम बनने वाला नहीं है।

## 20.7 विभिन्न जीवन दर्शन

जीवन दर्शन रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करता है। यदि संतोष जीवन दर्शन है तो यह गुणोपेते जीवन (वेटर क्वालिटी आव् लाइफ) पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। अन्य शब्दों में इससे रहन सहन का स्तर उच्च न हो सकेगा। यदि बचत न करने का जीवन दर्शन (गोरख जीवन दर्शन एवं चार्वाक जीवन दर्शन) है तो विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा।

गोरख दर्शन- आज खाय और कल को झंखे।

ताको गोरख साथ न रखे॥

अर्थात् जितना कमाओ उतना खा लो। कल की कल देखी जायेगी।

चार्वक दर्शन- यावज्जीवेत सुखं जीवेत, ऋणं कृत्वं घृतं पिवेता।

भस्मीभूतस्य देहस्य पुरागमनं कुत: ॥-

अर्थात् जब तक जिओ मौज मस्ती से जिओ क्योंकि शरीर नश्वर है, पुन: यह शरीर मिले सुस्ती अथवा आलस्य समर्थक जीवन दर्शन विकास का रिपु है। जैसे—'अजगर करे न चाकरी पक्षी करे न काम। दास मलूका कह गये सबके दाता राम॥'

बिना कुछ किये खाने पीने की व्यवस्था हो जाने की बात मूर्खतापूर्ण है। आज के परिवेश में बिना मेहनत किये भर पेट भोजन मिलने वाला नहीं हैं। खूब मेहनत करो, खूब मेहनत करो, खूब कमाओ और खूब खाओ तथा मौज मस्ती से रहो। यह जीवन दर्शन हमने सिक्खों में देखा है। ये बड़े मेहनती होते हैं। और खाने पीने के शौकीन। किसी ने सिक्ख को भीख मांगते नहीं देखा होगा।

जीवन एक अन्य दर्शन 'होनी' अथवा भवितव्यता से जुड़ा है। जब जो होना है वह हो के रहेगा, उसे रोक पाना मनुष्य के वश में नहीं है फिर परिश्रम करने की क्या आवश्यकता? यह दर्शन नियतिवादी अथवा भाग्यवादी दर्शन है। इसके विपरीत परिश्रम करने का दर्शन विकास के अनुकूल है, गुणोपेत जीवन के अनुकूल है, उच्च रहन सहन के अनुकूल है। इस जीवन दर्शन की मान्यता है कि उद्यम (पुरूषार्थ) से ही भाग्य बनता है। अत: अपने कर्त्तव्यों को करना जीवन का वह मूल्य है जिससे जीवन में सुधार आता है, जीवन में निखार आता है। खूब कमाई होती है, खूब उपभोग में वृद्धि होती है जिससे रहने सहन की दशाओं (लिविंग कन्डीशन्स) में सुधार होता है और जीवन स्तर उन्नत होता है। मनुष्य के जीवन दर्शन का आर्थिक विकास पर प्रभाव अवश्य पड़ता है। अनुकूल जीवन दर्शन से विकास में वृद्धि होती है और प्रतिकूल जीवन दर्शन पतन की ओर ले जाता है। कोई भी वस्तु मनोरथ करने से नहीं प्राप्त होती है, उसकी प्राप्ति होती है मेहनत द्वारा। निष्कर्ष यह निकला कि कर्मवीर पुरूष आर्थिक विकास के लिए उपयोगी है। उन्हें अच्छे जीवन जीने के सभी साधन उपलब्ध हो जाते हैं, उन्हें अच्छे जीवन जीने के सभी साधन उपलब्ध हो जाते हैं। जीवन के प्रति हिन्दू धर्म दर्शन पुरूषार्थ का समर्थक है।

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै:।

नहिं सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा:॥

× × × × × × × × × × × × × × × × × ×

नर हो न निराश करो मन को।

कुछ काम करो कुछ काम करो॥

उक्त परामर्श को अथवा उपदेश को हृदय में रखकर मेहनती पुरूषों के लिए कुछ भी अलभ्य नहीं है ऐसे पुरूषों के बल पर ही आर्थिक विकास टिका है।

## 20.8 गुणोपेतजीवन के लिए आवश्यक आधारभूत आवश्यकताओं का मापदण्ड

हम जीवन जी सकें, हमारा जीवन ही नष्ट न हो जायें इसके लिए कुछ आधारभूत आवश्यकताओं का उल्लेख हिक्स और स्ट्रीटन ने किया है। इन छः आधारभूत आवश्यकताओं के पूरा होने से जीवन की गुणवता और आर्थिक विकास बेहतरीन स्वरूप धारण कर सकेंगे। यों कहें कि ये निम्नलिखित छः कसौटियां आर्थिक विकास की सूचक है अथवा बेहतर रहन- सहन के स्तर की परिचायक है।

1. स्वास्थ्य
2. शिक्षा
3. खाद्य
4. जल आपूर्ति
5. स्वच्छता और
6. आवास

यदि किसी देश अथवा समाज के लोग स्वस्थ हैं, शिक्षित हैं, खाने के लिए उनके पास पर्याप्त खाद्य सामग्री है, पीने के लिए स्वच्छ जल की व्यवस्था है, लोग सफाई रहते हैं (शरीर से भी स्वच्छ है और मन में भी स्वच्छ है) और रहने के लिए आवास की सुन्दर व्यवस्था है तो निश्चय ही उनका रहन सहन का स्तर, रहन सहन की दशायें सुन्दर होंगी और उनका गुणोपेत जीवन निश्चय ही बेहतर होगा। जीवन की उक्त सुविधायें उपलब्ध कराकर जीवन प्रत्याशा में वृद्धि शिशु मृत्युदर में कमी आर साक्षरता में वृद्धि की जा सकती है। मानव विकास सूचकों (एच० डी० आई०) का निर्माण तीन सूचकों को मिला कर किया जाता है।

1. दीर्घ जीवन
2. शैक्षिक योग्यताओं की प्राप्ति और
3. जीवन स्तर

### 4.8.1 क्रय शक्ति सूचकांक ( पी० पी० पी० आई० )

क्रयशक्ति समता स्थापित कर विभिन्न देशों के जीवन स्तर (रहन-सहन के स्तर) की माप और तुलना की जाती है। आर्थिक विकास के इस माप दण्ड का प्रयोग सर्वप्रथम अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई० एम० एफ०) ने किया था। अर्थशास्त्रियों ने उपभोग के स्तर (रहन-सहन के स्तर) को मापने के लिए क्रय शक्ति समता सूचकांक तैयार किया। इस सूचकांक के आधार पर क्रय शक्ति समता के रूप में विभिन्न देशों की प्रति व्यक्ति आय को विश्व बैंक बताता है।

क्रय शक्ति समता सूचकांक से मानव विकास सूचकांक (एच० डी० आई०) बेहतर है। क्योंकि यह जीवन के तीवन आधारभूत पहलुओं की उपलब्धियों का एक शिक्षित सूचक है—एक लम्बा व स्वस्थ जीवन, शिक्षा और उत्कृष्ट जीवन स्तर। एच० डी० आई० की अवधारणा इस आधार पर है कि किसी राष्ट्र में रहने वाले लोग ही उस राष्ट्र की वास्तविक

सम्पत्ति है।

### 4.8.2 भौतिक जीवन की गुणवत्ता सूचकांक ( फिजिकल क्वालिटी आव् लाइफ इन्डेक्स )

इस सूचकांक का निर्माण मारिश डी मारिश ने किया है। जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्युदर और साक्षरता को मिलाकर एक समन्वित सूचकांक बनाया जिसे उन्होंने भौतिक जीवन की गुणवत्ता सूचकांक कहा। जिन तीन सूचकों को PQLI (Physical Quality of Life Index) में सम्मिलित किया गया है। वे जीवन की गुणवत्ता (गुणोपेत जीवन) को प्रभावित करते हैं और इस आधार पर PQLI आर्थिक विकास का एक उचित मानदण्ड (यार्डस्टिक) है। कतिपय अर्थशास्त्री इस मापदण्ड की आलोचना निम्न आधारों पर करते हैं।

1. यह मूल आवश्यकताओं को एक सीमा तक ही माप सकता है।

2. सामाजिक तथा आर्थिक संगठन के परिवर्तित ढांचे को भी यह मापदण्ड प्रदर्शित नहीं करता।

3. इसके अन्तर्गत तीन सूचकों के अतिरिक्त सूचकों को जो गुणोपेत जीवन को प्रभावित करते हैं, छोड़ दिया गया है।

4. कुल कल्याण को भी यह नहीं मापता है।

उक्त कतियों के बावजूद भी PQLI जीवन की गुणवत्ताओं को मापता है। इस मापक की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि इससे समाज के उन विभिन्न वर्गों की जानकारी की जा सकती है जो सामाजिक नीतियों की असफलता नीतियों की असफलता या उपेक्षा के शिकार है। सरकार द्वारा ऐसी नीतियाँ अपनाई जा सकती हैं जिससे PQLI में शीघ्र वृद्धि हो और साथ ही त्वरित आर्थिक विकास में भी सहायता मिले।

## 20.9 आर्थिक विकास और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के बीच संबंध

आर्थिक विकास के सूचकों को ध्यान में रखकर विकास की तीन धारणायें विकसित हुई हैं।

* राष्ट्रीय आय में वृद्धि
* प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
* जीवन की गुणवत्ता में सुधार

जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि के अन्तर्गत सुधार को विकास का सूचकांक माना गया है। यह विकास की नवीनतम धारणा है। जैसा पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि जीवन की गुणवत्ता में सुधार की जानकारी के लिए जीवन की तीन हिस्सों में सुधार पर ध्यान दिया जाता है। ये जीवन के तीन अंग इस प्रकार हैं।

* प्रत्याशित आयु
* शिशु मृत्यु दर
* साक्षरता

इन तीनों को मिलाकर जीवन सूचकांक तैयार किया जाता है। इस सूचक के आधार पर यह पता लगा दिया जाता है कि जीवन की गुणवत्ता बेहतर हुई है अथवा नहीं। यदि जीवन की गुणवत्ता बेहतर हुई है तो विकास हुआ है, अन्यथा विकास नहीं हुआ है। आर्थिक विकास के इस सूचकांक में जन कल्याण में वृद्धि को प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है। विकास की इस धारणा में राष्ट्रीय आय में वृद्धि के अलावा इस बात पर जोर है कि राष्ट्रीय आय का उचित रीति से वितरण और उपयोग हो। इस प्रकार जीवन की गुणवत्ता में सुधार को विकास का सही सूचक माना जा सकता है।

जीवन की गुणवत्ता में सुधार—राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय और इन तीनों में से विकास का सबसे अच्छा सूचकांक जीवन की गुणवत्ता में सुधार ही है। कारण यह है इस सूचकांका से इस बात का संकेत मिलता है कि राष्ट्रीय उत्पादन का वितरण और उपभोग जन कल्याण की वृद्धि के अनुरूप है। अन्य शब्दों में भोजन, वस्त्र, स्वास्थ्य सेवा, सफाई और शिक्षा सभी जीवन के तीन महत्वपूर्ण पहलुओं जैसे प्रत्याशित आयु शिशु मृत्यु दर और साक्षरता में सुधार लाने में सहायक हैं।

## 20.10 जीवन में सुधार से जुड़ी सरकारी नीतियों की झलक

स्त्री, पुरुष, बालकों और युवाओं के जीवन को उत्तम बनाने का कार्य राष्ट्र का होता है। भारत राष्ट्र में पुरुषों, महिलाओं, बालकों एवं युवकों के कल्याण को ध्यान में रखकर कानूनों सुविधाओं एवं कल्याण योजनाओं की समय-समय पर व्यवस्था की गई। श्रमिकों के हितों के संरक्षक के उपाय हुए हैं। यहाँ तक कि बेरोजगारी भत्ता तक देने का प्राविधान हुआ है। गरीबी एवं बेरोजगारी को दूर करने के प्रयास हो रहे हैं, पर इन प्रयासों से अधिक लाभ जनसंख्या वृद्धि के कारण नहीं हो पा रहा है। बाल कल्याण महिला कल्याण, श्रमिक कल्याण की दिशा में प्रयास हुए हैं। और हो रहे हैं। शिक्षा सुविधा के साथ अभी हाल ही में विद्यार्थियों के लिए मिड-डे-मील सुविधा भी मुहैया कराई जा रही है। उन्हें यूनीफार्म (ड्रेस) भी दी जा रही है। वोट पाने के लिए जनता के रहन-सहन की बेहतर स्थितियाँ उत्पन्न करने का प्रयास सरकार द्वारा हो रहा है। गरीबों को राशन कार्ड के माध्यम से सस्ते दर पर खाद्य सामग्री उपलब्ध कराई जा रही है। पल्स पोलियो ड्राप्स पिलाये जाने, एड्स जागरूकता पैदा करने के लिए अभियान चलाये जा रहे हैं। जन स्वास्थ्य, जन शिक्षा, स्वच्छ पेयजल की सुविधाए जनता को उपलब्ध कराई जा रही हैं। मलिन बस्तियों के सुधार की दिशा में भी आवश्यक योजनाएँ चल रही हैं। इनका समुचित लाभ जनता को नहीं मिल पा रहा है यह एक अन्य बात है।

## 20.11 जीवन के विभिन्न सोपान ( अवस्थाएँ )

जीवन के चार स्तरों का उल्लेख किया जाता है—शैशवावस्था, यौवनावस्था, प्रौढ़ावस्था और बुढ़ापा। चारों चरणों में जीवन की गुणवत्ता अलग-अलग प्रकार की हो सकती है। शैशवावस्था मानव शिशु के असहाय होने की अवस्था है। वह जीवन के इस काल में दूसरों पर निर्भर करता है। और खास बात यह है कि निर्भरता काल लम्बा होता है। बालक की

वृद्धि एवं उसका चतुर्दिक विकास जीवन के इस स्तर की मांग है। इस स्तर पर आवश्यकता आधारित जीवन की गुणवत्ता का विशेष महत्व है। इसे इस प्रकार कह सकते हैं कि इस स्तर पर जीविता (सरवाइवल) के जीवन के गुण का विशेष महत्व है। सुरक्षा नामक जीवन के गुण का संबंध भी इस स्तर से है। इस स्तर पर बालक के जीविता और सुरक्षा संबंधी गुणों की सर्वोपरित महत्ता है।

यौवनावस्था युवक का निर्माणकाल होता है। उसका यह निर्माणकाल इसलिए महत्वपूर्ण है कि इस स्तर पर हुए निर्माण का असर अगले सम्पूर्ण जीवन पर पड़ता है। इसलिए इस समय जो अपना निर्माण ठीक से कर लेते हैं। पूरे जीवन सुखी एवं संतुष्ट रहते हैं। सुख एवं संतुष्टि बेहतर जीवन गुणवत्ता के परिचायक है। इस काल में वह अपनों की और अपने की सुरक्षा का भी प्रबन्धक करता है। सुख और संतुष्टि के बाद सुरक्षा जीवन की तीसरी गुणवत्ता है।

प्रौढ़ावस्था में पहुँचकर मनुष्य परिपक्व हो जाता है। यौवनावस्था और प्रौढ़ावस्था तक वह समृद्ध और प्रगति के गुणों से जीवन को स्वरूप प्रदान करता है। समृद्धि और प्रगति के गुणो से जीवन को स्वरूप प्रदान करता है। समृद्धि और प्रगति भी बेहतर जीवन के सूचकांक है।

बुढ़ापा अजब एवं दारूण होता है। इस अवस्था में हाथ पैर चलते नहीं, शरीर की त्वचा सिकुड़ जाती हैं, इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं। लकुटी टेककर चलने की नौबत आ जाती हैं दूसरे के सहारे की आवश्यकता अनुभव होने लगती है। जो लोग दूरदर्शी एवं मेधावी होते हैं वे साधन सम्पन्न बन जाते हैं। और उनका बुढ़ापा मजे से कट जाता है। अधिकांश लोग खाली हाथ रह जाते हैं इनकी सुरक्षा एवं देखभाल का भार बच्चों पर या समाज के कन्धों पर आ जाता है। बच्चे इन बूढ़ों पर समुचित ध्यान नहीं दे पाते हैं उनकी तरफ तटस्थ हो जाते हैं। ऐसे में सरकार वृद्धों के लिए घर बनाकर और वृद्धावस्था पेंशन के माध्यम से उन्हें आंशिक सहायता देती है। भारत में इन्हें सीनियर सिटीजन का दर्जा दिया गया है। सीनियर सिटीजन की सुविधाएं इन्हें दी जा रही है। यह वृद्धों के प्रति सरकार का एक अच्छा संकेत है।

प्रो० राम कृष्ण मुखर्जी ने जीवन की बेहतर गुणवत्ता के चार सूचकांकों (गुणों अथवा सहज गुणों) का उल्लेख अपनी पुस्तक क्वालिटी आव् लाइफ में किया है। पे इन्हें चार ऐट्रीब्यूट्स की संज्ञा देते हैं। इन्हें हम बेहतर जीवन की गुणवत्ता के संकेत कह सकते हैं जो इस प्रकार हैं।

1. अस्तित्व अथवा उत्तर जीविता (सरबाइबल)
2. सुरक्षा (सिक्योरिटी)
3. भौतिक समृद्धि
4. मानसिक प्रगति

अगर किसी व्यक्ति या समूह के जीवन में उक्त लक्षण दिखते हैं तो वह जीवन की बेहतर गुणवत्ता का परिचायक है।

## 20.12 जीवन की गुणवत्ता एवं प्रो० रामकृष्ण मुखर्जी

प्रो० मुखर्जी ने जीवन की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया है। इन्होंने अपनी पुस्तक को चार भागों (अध्यायों) में बांटा है। पहले भाग में उन्होंने जीवन की गुणवत्ता के उपागम पर चर्चा की है।

दूसरे अध्याय में अभिजन परिप्रेक्ष्य के विषय में बताया है। यह परिप्रेक्ष्य लोगों की आवश्यकता पर आधारित (नीड बेस्ड) है। तीसरे अध्याय में जन परिप्रेक्ष्य को स्थान दिया है। जो लोगों की चाहत पर आधारित (वान्ट बेस्ड) है। अन्तिम और चौथे अध्याय में उन्होंने अभिजन परिप्रेक्ष्य और जन परिप्रेक्ष्य में समन्वय स्थापित किया है और इस बात पर बल दिया है कि न तो केवल अभिजन परिप्रेक्ष्य काफी है और न ही जन परिप्रेक्ष्य पर्याप्त है। दोनों का मेल अधिक लाभदायक है और जीवन की गुणवत्ता की सटीक व्याख्या के लिए उपयुक्त है।

निष्कर्ष के तौर पर यहाँ यह कहा जा सकता है कि आवश्यकता आधारित (नील बेस्ड) और चाहत आधारित (वान्ट बेस्ड) दोनों विश्लेषणों का समन्वय जीवन की गुणवत्ता की व्याख्या के लिए संगत, आवश्यक और अभीष्ट प्रभाव डालने वाला है।

## 20.13 सारांश

इस इकाई का प्रारम्भ जीवन के अर्थ से हुआ है। इसके बाद जीवन जीने के हुनर पर चर्चा हुई है। जीवन जीने के विभिन्न दर्शनों का विवरण इसके बाद प्रस्तुत किया गया है। इसके बाद क्रमश: गुणोपेत जीवन के लिए आवश्यकता आधारित (नीड बेस्ड) सूचकों, क्रय शक्ति, समता सूचकों, मानव विकास सूचकांक, भौतिक जीवन की गुणवत्ता सूचकांक का वर्णन किया गया है। इसके बाद विकास के सूचकांक के रूप में जीवन की गुणवत्ता पर प्रकाश डाला गया है। पुन: जीवन में सुधार से जुड़ी सरकारी नीतियों जीवन की विभिन्न अवस्थाओं से जुड़ी जीवन संबंधी विशेष बातों का विवेचन किया गया है। अन्त में जीवन की गुणवत्ता विषयक रामकृष्ण के विचारों को बीज रूप में प्रस्तुत किया गया है।

## 20.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मुखर्जी, रामकृष्ण, क्वालिटी आव् लाइफ, सेज पब्लिकेशन्स न्यू देलही/लन्दन।

2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम् (2003), इण्डियन इकोनामी, एस चांद एण्ड कम्पनी लिमिटेड, न्यू डेलही

## 20.15 प्रश्नोत्तर

**लघु प्रश्न-**

1. जीवन से क्या अभिप्राय है?
2. जीवन जीने की कौन सी विधी अच्छी है और क्यों?
3. जीवन से जुड़े विभिन्न दर्शनों का विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है?
4. PQLI, HDI, जीवन जीने में सहायक आधारभूत आवश्यकताएं

**दीर्घ प्रश्न-**

1. जीवन की गुणवत्ता से क्या आशय है? इसके सूचकांकों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

2. आर्थिक विकास का जीवन की गुणवत्ता के सूचकांक से क्या संबंध है? जीवन की गुणवत्ता के विषय में प्रो० मुखर्जी के योगदान की चर्चा कीजिए।

3. सामाजिक नीति का अभिप्राय समझाइये। सामाजिक नीति एवं सामाजिक गुणवत्ता में सह संबंध पर प्रकाश डालिए।

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न-**

1. जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन में चाहता आधारित परिप्रेक्ष्य किसने दिया हैघ

(अ) स्वामी विवेकानन्द (ब) अरविन्द (स) रामकृष्ण मुखर्जी (द) महात्मा गाँधी

**उत्तर**- (स)

2. सामाजिक नीति में निम्नलिखित में से कौन तत्प सम्मिलित नहीं हैं।

(अ) सामाजिक सुरक्षा (ब) लोक कल्याण (स) प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि (द) मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति।

**उत्तर**-(स)

3. आपदाओं में सरकार द्वारा निम्नलिखित में से किस कोष से सहायता दी जाती है।

(अ) विधायक कोष (ब) मुख्यमंत्री कोष (स) राहत कोष

**उत्तर**- (स)

4. सामाजिक नीति और जीवन की गुणवत्ता में निम्नलिखित में से कौन सा संबंध पाया जाता है।

(अ) मालिक और नौकर (ब) राजा और प्रजा (स) स्वामी और सेवक (द) साधन और साध्य

**उत्तर**- (द)

5. निम्नलिखित में से कौन सा सर्वप्रथम और सबसे महत्वपूर्ण मानवाधिकार है।

(अ) जिंदा रहने का अधिकार (ब) समानता का अधिकार (स) स्वतंत्रता का अधिकार

(द) अपना धर्म अपनाने का अधिकार

**उत्तर**- (अ)

# NOTES

# NOTES

# NOTES